Bhajan-Sangrah

(Hindi)

ॐ श्रीपरमात्मने नमः

भजन-संग्रह

तुलसीदास

स्तुति

(१) राग बिलावल

गाइये गनपति जगबन्दन । संकर-सुवन भवानी-नन्दन ॥ १ ॥
सिद्धि-सदन, गजबदन, बिनायक । कृपासिंधु सुन्दर सब लायक ॥ २ ॥
मोदक-प्रिय, मुद-मंगल-दाता । बिद्या-बारिधि बुद्धि-बिधाता ॥ ३ ॥
माँगत तुलसिदास कर जोरे । बसहिं रामसिय मानस मोरे ॥ ४ ॥

❑ ❑

नाम

(२) राग भैरव

राम जपु, राम जपु, राम जपु, बावरे।
घोर-भव नीर-निधि नाम निज नाव रे॥ १ ॥

एक ही साधन सब रिद्धि सिद्धि साधि रे।
ग्रसे कलि रोग जोग संजम समाधि रे॥ २ ॥

भलो जो है, पोच जो है, दाहिनो जो बाम रे।
राम-नाम ही सों अंत सबहीको काम रे॥ ३ ॥

जग नभ-बाटिका रही है फलि फूलि रे।
धुवाँ कैसे धौरहर देखि तू न भूलि रे॥ ४ ॥

राम-नाम छाँड़ि जो भरोसो करै और रे।
तुलसी परोसो त्यागि माँगै कूर कौर रे॥ ५ ॥

(३) राग भैरव

राम राम रटु, राम राम रटु, राम राम जपु जीहा।
राम-नाम-नवनेह-मेहको, मन! हठि होहि पपीहा॥ १॥

सब साधन-फल कूप सरित सर, सागर-सलिल निरासा।
राम-नाम-रति-स्वाति सुधा सुभ-सीकर प्रेम-पियासा॥ २॥

गरजि तरजि पाषान बरषि, पबि प्रीति परखि जिय जानै।
अधिक-अधिक अनुराग उमँग उर, पर परमिति पहिचानै॥ ३॥

रामनाम-गति, रामनाम-मति, रामनाम अनुरागी।
ह्वै गये हैं जे होहिगे, त्रिभुवन, तेइ गनियत बड़भागी॥ ४॥

एक अंग मग अगम गवन कर, बिलमु न छिन-छिन छाहैं।
तुलसी हित अपनो अपनी दिसि निरुपधि, नेम निबाहैं॥ ५॥

(४) राग कल्याण

भरोसो जाहि दूसरो सो करो।
मोको तो रामको नाम कलपतरु, कलिकल्यान फरो॥ १॥

करम उपासन ग्यान बेदमत सो सब भाँति खरो।
मोहिं तो सावनके अंधहि ज्यों, सूझत हरो-हरो॥ २॥

चाटत रहेउँ स्वान पातरि ज्यों कबहुँ न पेट भरो।
सो हौं सुमिरत नाम-सुधारस, पेखत परुसि धरो॥ ३॥

स्वारथ औ परमारथहूको, नहिं कुंजरो नरो।
सुनियत सेतु पयोधि पषानन्हि, करि कपि कटक तरो॥ ४॥

प्रीति प्रतीति जहाँ जाकी तहँ, ताको काज सरो।
मेरे तो माय-बाप दोउ आखर, हौं सिसु-अरनि अरो॥ ५॥

संकर साखि जो राखि कहउँ कछु, तौ जरि जीह गरो।
अपनो भलो रामनामहिं ते, तुलसिहि समुझि परो॥ ६॥

(५)

रुचिर रसना तू राम राम क्यों न रटत।
सुमिरत सुख सुकृत बढ़त अघ अमंगल घटत॥
बिनु स्रम कलि-कलुष जाल, कटु कराल कटत।
दिनकरके उदय जैसे तिमिर-तोम फटत॥
जोग जाग जप बिराग तप सुतीर्थ अटत।
बाँधिबेको भव-गयन्द रजकी रजु बटत॥
परिहरि सुर-मनि सुनाम गुंजा लखि लटत।
लालच लघु तेरो लखि तुलसि तोहि हटत॥

(६)

कलि नाम काम तरु रामको।
दलनिहार दारिद दुकाल दुख, दोष घोर घन घामको॥ १॥
नाम लेत दाहिनो होत मन, बाम बिधाता बामको।
कहत मुनीस महेस महातम, उलटे सूधे नामको॥ २॥
भलो लोक परलोक तासु जाके बल ललित-ललामको।
तुलसी जग जानियत नामते सोच न कूच मुकामको॥ ३॥

(७)

पावन प्रेम रामचरन कमल जनम लाहु परम।
राम-नाम लेत होत, सुलभ सकल धरम॥
जोग मख बिबेक बिरति, बेद-बिदित करम।
करिबे कहुँ कटु कठोर सुनत मधुर नरम॥
तुलसी सुनि, जानि बूझि, भूलहि जनि भरम।
तेहि प्रभुकी तू सरन होहि, जेहि सबकी सरम॥

(८) राग नट

नाहिन भजिबे जोग बियो।
श्रीरघुबीर समान आन को पूरन कृपा हियो॥
कहहु कौन सुर सिला तारि पुनि केवट मीत कियो?।
कौने गीध अधमको पितु ज्यों निज कर पिण्ड दियो?॥
कौन देव सबरीके फल करि भोजन सलिल पियो?।
बालित्रास-बारिधि बूड़त कपि केहि गहि बाँह लियो?॥
भजन प्रभाउ बिभीषन भाष्यौ सुनि कपि कटक जियो।
तुलसिदासको प्रभु कोसलपति सब प्रकार बरियो॥

❑ ❑

विनय

(९) राग धनाश्री

यह बिनती रघुबीर गुसाईं।
और आस बिस्वास भरोसो, हरौ जीव-जड़ताई॥ १॥
चहौं न सुगति, सुमति-संपति कछु रिधि सिधि बिपुल बड़ाई।
हेतु-रहित अनुराग रामपद, बढ़ु अनुदिन अधिकाई॥ २॥
कुटिल करम लै जाइ मोहि, जहँ-जहँ अपनी बरियाई।
तहँ-तहँ जनि छिन छोह छाँड़िये, कमठ-अण्डकी नाईं॥ ३॥
यहि जगमें, जहँ लगि या तनुकी, प्रीति प्रतीति सगाई।
ते सब तुलसिदास प्रभु ही सों, होहिं सिमिटि इक ठाईं॥ ४॥

(१०) राग पीलू

रघुबर तुमको मेरी लाज।
सदा सदा मैं सरन तिहारी तुमहि गरीबनिवाज॥
पतित उधारन बिरद तुम्हारो, स्रवनन सुनी अवाज।
हौं तो पतित पुरातन कहिये, पार उतारो जहाज॥
अघ-खंडन दुःख-भंजन जनके यही तिहारो काज।
तुलसिदासपर किरपा कीजै, भगति-दान देहु आज॥

(११) राग धनाश्री

ऐसी मूढ़ता या मनकी।
परिहरि राम-भगति सुरसरिता आस करत ओस-कनकी ॥ १ ॥
धूम समूह निरखि चातक ज्यों, तृषित जानि मति घनकी।
नहिं तहँ सीतलता न बारि पुनि, हानि होत लोचनकी ॥ २ ॥
ज्यों गच-काँच बिलोकि सेन जड़ छाँह आपने तनकी।
टूटत अति आतुर अहार बस, छति बिसारि आननकी ॥ ३ ॥
कहँ लौं कहौं कुचाल कृपानिधि जानत हौं गति जनकी।
तुलसिदास प्रभु हरहु दुसह दुख करहु लाज निज पनकी ॥ ४ ॥

(१२) राग धनाश्री

जाउँ कहाँ तजि चरन तुम्हारे।
काको नाम पतित-पावन जग, केहि अति दीन पियारे ॥ १ ॥
कौने देव बराइ बिरद-हित, हठि-हठि अधम उधारे।
खग, मृग, ब्याध, पषान, बिटप जड़, जवन कवन सुर तारे ॥ २ ॥
देव, दनुज, मुनि, नाग, मनुज सब माया-बिबस बिचारे।
तिनके हाथ दास तुलसी प्रभु, कहा अपनपौ हारे ॥ ३ ॥

(१३) राग धनाश्री

मेरो मन हरिजू! हठ न तजै।
निसिदिन नाथ देउँ सिख बहु बिधि, करत सुभाउ निजै ॥ १ ॥
ज्यों जुबती अनुभवति प्रसव अति दारुन दुख उपजै।
ह्वै अनुकूल बिसारि सूल सठ, पुनि खल पतिहिं भजै ॥ २ ॥
लोलुप भ्रमत गृहपसु-ज्यों जहँ-तहँ सिर पदत्रान बजै।
तदपि अधम बिचरत तेहि मारग, कबहुँ न मूढ़ लजै ॥ ३ ॥
हौं हार्‌यौ करि जतन बिबिध बिधि, अतिसै प्रबल अजै।
तुलसिदास बस होइ तबहिं जब प्रेरक प्रभु बरजै ॥ ४ ॥

(१४) राग विलास

हे हरि! कवन जतन भ्रम भागै।
देखत, सुनत, बिचारत यह मन, निज सुभाउ नहिं त्यागै॥ १॥
भक्ति, ज्ञान, वैराग्य सकल साधन यहि लागि उपाई।
कोउ भल कहउ देउ कछु कोउ असि बासना हृदयते न जाई॥ २॥
जेहि निसि सकल जीव सूतहिं तव कृपापात्र जन जागै।
निज करनी बिपरीत देखि मोहि, समुझि महाभय लागै॥ ३॥
जद्यपि भग्न मनोरथ बिधिबस सुख इच्छित दुख पावै।
चित्रकार कर हीन जथा स्वारथ बिनु चित्र बनावै॥ ४॥
हृषीकेस सुनि नाम जाउँ बलि अति भरोस जिय मोरे।
तुलसिदास इन्द्रिय सम्भव दुख, हरे बनहि प्रभु तोरे॥ ५॥

(१५) राग सोरठ

ऐसो को उदार जग माहीं।
बिनु सेवा जो द्रवै दीन पर, राम सरिस कोउ नाहीं॥ १॥
जो गति जोग बिराग जतन करि, नहिं पावत मुनि ग्यानी।
सो गति देत गीध सबरी कहँ, प्रभु न बहुत जिय जानी॥ २॥
जो संपति दस सीस अरपि करि, रावन सिव पहँ लीन्हीं।
सो संपदा बिभीषन कहँ अति सकुच-सहित हरि दीन्हीं॥ ३॥
तुलसिदास सब भाँति सकल सुख जो चाहसि मन मेरो।
तौ भजु राम, काम सब पूरन करहिं कृपानिधि तेरो॥ ४॥

(१६) राग गौरी

श्रीरामचन्द्र कृपालु भजु मन, हरण-भव-भय दारुणं।
नवकंज-लोचन, कंजमुख, कर-कंज, पद-कंजारुणं॥ १॥
कन्दर्प अगणित अमित छवि, नव नील नीरद सुन्दरं।
पट-पीत मानहुँ तड़ित रुचि शुचि नौमि जनक सुतावरं॥ २॥
भजु दीनबन्धु दिनेश दानव-दैत्य-वंश निकन्दनं।
रघुनन्द आनँद-कंद कोसल चंद दसरथ-नन्दनं॥ ३॥

सिर मुकुट कुण्डल तिलक चारु, उदार-अंग बिभूषणं।
आजानु-भुज शर-चाप-धर संग्राम-जित खरदूषणं॥ ४॥
इति बदति तुलसीदास, शंकर-शेष-मुनि-मन-रंजनं।
मम हृदय-कंज निवास कुरु, कामादि-खल-दल गंजनं॥ ५॥

(१७)

मैं हरि, पतित पावन सुने।
मैं पतित, तुम पतित-पावन, दोउ बानक बने॥
ब्याध गनिका गज अजामिल, साखि निगमनि भने।
और अधम अनेक तारे, जात कापै गने॥
जानि नाम अजानि लीन्हें नरक जमपुर मने।
दास तुलसी सरन आयो राखिये अपने॥

(१८)

और काहि माँगिये, को माँगिबो निवारै।
अभिमत दातार कौन, दुख-दरिद्र दारै॥
धरम धाम राम काम-कोटि-रूप रूरो।
साहब सब बिधि सुजान, दान खड्ग सूरो॥
सुखमय दिन द्वै निसान सबके द्वार बाजै।
कुसमय दसरथके दानि! तैं गरीब निवाजै॥
सेवा बिनु गुन बिहीन दीनता सुनाये।
जे जे तैं निहाल किये फूले फिरत पाये॥
तुलसिदास जाचक-रुचि जानि दान दीजै।
रामचंद्र चंद तू, चकोर मोहि कीजै॥

(१९)

कहु केहि कहिय कृपानिधे! भव-जनित बिपति अति।
इन्द्रिय सकल बिकल सदा, निज निज सुभाउ रति॥ १॥
जे सुख संपति सरग नरक संतत सँग लागी।
हरि! परिहरि सोइ जतन करत मन मोर अभागी॥ २॥

मैं अति दीन, दयालु देव, सुनि मन अनुरागे।
जो न द्रवहु रघुबीर धीर काहे न दुख लागे॥ ३॥

जद्यपि मैं अपराध-भवन, दुख-समन मुरारे।
तुलसिदास कहँ आस यहै बहु पतित उधारे॥ ४॥

(२०)

मेरे रावरिये गति रघुपति है बलि जाउँ।
निलज नीच निर्गुन निर्धन कहँ जग दूसरो न ठाकुर ठाउँ॥ १॥

हैं घर-घर बहु भरे सुसाहिब, सूझत सबनि आपनो दाउँ।
बानर-बंधु बिभीषन हित बिनु, कोसलपाल कहूँ न समाउँ॥ २॥

प्रनतारति-भंजन, जन-रंजन, सरनागत पबि पंजर नाउँ।
कीजै दास दास तुलसी अब, कृपासिंधु बिनु मोल बिकाउँ॥ ३॥

(२१)

देव! दूसरो कौन दीनको दयालु।
सीलनिधान सुजान-सिरोमनि,
सरनागत-प्रिय प्रनत-पालु॥ १॥

को समरथ सर्बग्य सकल प्रभु,
सिव-सनेह मानस-मरालु।
को साहिब किये मीत प्रीतिबस,
खग निसिचर कपि भील-भालु॥ २॥

नाथ, हाथ माया-प्रपंच सब,
जीव-दोष-गुन-करम-कालु।
तुलसिदास भलो पोच रावरो,
नेकु निरखि कीजिये निहालु॥ ३॥

(२२)

रघुबर! रावरि यहै बड़ाई।
निदरि गनी आदर गरीबपर करत कृपा अधिकाई॥ १॥
थके देव साधन करि सब सपनेहुँ नहिं देत दिखाई।
केवट कुटिल भालु कपि कौनप, कियो सकल सँग भाई॥ २॥
मिलि मुनिबृंद फिरत दंडक बन, सो चरचौ न चलाई।
बारहि बार गीध सबरीकी, बरनत प्रीति सुहाई॥ ३॥
स्वान कहे तें कियो पुर बाहिर जती गयंद चढ़ाई।
तिय-निंदक मतिमंद प्रजा-रज निज नय नगर बसाई॥ ४॥
यहि दरबार दीनको आदर रीति सदा चलि आई।
दीन दयालु दीन तुलसीकी काहे न सुरति कराई॥ ५॥

(२३)

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।
श्रीरघुनाथ-कृपालु-कृपातें संत स्वभाव गहौंगो॥
जथा लाभ संतोष सदा, काहूसों कछु न चहौंगो।
परहित-निरत निरंतर मन क्रम बचन नेम निबहौंगो॥
परुष-बचन अति दुसह स्रवन सुनि तेहि पावक न दहौंगो।
बिगत-मान सम सीतल मन पर-गुन, नहिं दोष कहौंगो॥
परिहरि देह जनित चिन्ता, दुख-सुख समबुद्धि सहौंगो।
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि, अबिचल हरि-भगति लहौंगो॥

(२४) राग केदारा

रघुपति बिपति-दवन।
परम कृपालु प्रनत-प्रतिपालक पतित-पवन॥
क्रूर कुटिल कुलहीन दीन अति मलिन जवन।
सुमिरत नाम राम पठये सब अपने भवन॥
गज पिंगला अजामिल-से खल गनै धौं कवन।
तुलसिदास प्रभु केहि न दीन्हि गति जानकी-रवन॥

(२५)

मनोरथ मनको एकै भाँति।
चाहत मुनि-मन-अगम सुकृति-फल, मनसा अघ न अघाति॥ १॥
करमभूमि कलि जनम कुसंगति, मति बिमोह मद माति।
करत कुजोग कोटि क्यों पैयत परमारथ पद साँति॥ २॥
सेइ साधु गुरु, सुनि पुरान श्रुति बूझ्यों राग बाजी ताँति।
तुलसी प्रभु सुभाउ सुरतरु सो ज्यों दरपन मुख काँति॥ ३॥

(२६)

दीनको दयालु दानि दूसरो न कोऊ।
जासों दीनता कहौं हौं देखौं दीन सोऊ॥ १॥
सुर नर मुनि असुर नाग साहब तौ घनेरे।
तौ लौं जौ लौं रावरे न नेकु नयन फेरे॥ २॥
त्रिभुवन तिहुँ काल बिदित बेद बदति चारी।
आदि अंत मध्य राम साहबी तिहारी॥ ३॥
तोहि माँगि माँगनो न माँगनो कहायो।
सुनि सुभाव सील सुजसु जाचन जन आयो॥ ४॥
पाहन, पसु, बिटप, बिहँग अपने करि लीन्हें।
महाराज दसरथके! रंक राय कीन्हें॥ ५॥
तू गरीबको निवाज, हौं गरीब तेरो।
बारक कहिये कृपालु! तुलसिदास मेरो॥ ६॥

(२७) राग खमाच—तीन ताल

माधव, मोह-पास क्यों छूटै।
बाहर कोटि उपाय करिय अभ्यंतर ग्रन्थि न छूटै॥ १॥
घृतपूरन कराह अंतरगत ससि प्रतिबिम्ब दिखावै।
ईंधन अनल लगाय कल्पसत औंटत नास न पावै॥ २॥
तरु-कोटर मँह बस बिहंग तरु काटे मरै न जैसे।
साधन करिय बिचारहीन मन, सुद्ध होइ नहिं तैसे॥ ३॥

अंतर मलिन, बिषय मन अति, तन पावन करिय पखारे।
मरइ न उरग अनेक जतन बलमीकि बिबिध बिधि मारे॥ ४॥

तुलसिदास हरि गुरु करुना बिनु बिमल बिबेक न होई।
बिनु बिबेक संसार-घोरनिधि पार न पावै कोई॥ ५॥

(२८)

मैं केहि कहौं बिपति अतिभारी। श्रीरघुबीर धीर हितकारी॥
मम हृदय भवन प्रभु तोरा। तहँ बसे आइ बहु चोरा॥
अति कठिन करहिं बर जोरा। मानहिं नहिं बिनय निहोरा॥
तम, मोह, लोभ अहँकारा। मद, क्रोध, बोध रिपु मारा॥
अति करहिं उपद्रव नाथा। मरदहिं मोहि जानि अनाथा॥
मैं एक, अमित बटपारा। कोउ सुनै न मोर पुकारा॥
भागेहु नहिं नाथ! उबारा। रघुनायक करहु सँभारा॥
कह तुलसिदास सुनु रामा। लूटहिं तसकर तव धामा॥
चिंता यह मोहिं अपारा। अपजस नहिं होइ तुम्हारा॥

(२९) राग खमाच—तीन ताल

कुटुंब तजि सरन राम! तेरी आयो।
तजि गढ़ लंक, महल औ मंदिर,
नाम सुनत उठि धायो॥ ध्रु०॥

भरी सभामें रावन बैठ्यौ चरन प्रहार चलायो।
मूरख अंध कह्यो नहिं मानै बार-बार समुझायो॥
आवत ही लंकापति कीनो, हरि हँस कंठ लगायो।
जनम-जनमके मिटे पराभव राम-दरस जब पायो॥
हे रघुनाथ! अनाथके बंधु दीन जान अपनायो।
तुलसिदास रघुबीर सरनतें भगति अभय पद पायो॥

(३०) राग खमाच—तीन ताल

माधव! मो समान जग माहीं।
सब बिधि हीन मलीन दीन अति लीन बिषय कोउ नाहीं॥ १॥
तुम सम हेतु रहित, कृपालु, आरतहित ईसहि त्यागी।
मैं दुखसोक बिकल , कृपालु, केहि कारन दया न लागी॥ २॥
नाहिन कछु अवगुन तुम्हार, अपराध मोर मैं माना।
ग्यान भवन तनु दियहु नाथ सोउ पाय न मैं प्रभु जाना॥ ३॥
बेनु करील, श्रीखण्ड बसंतहिं दूषन मृषा लगावै।
साररहित हतभाग्य सुरभि पल्लव सो कहँ कहु पावै॥ ४॥
सब प्रकार मैं कठिन मृदुल हरि दृढ़ बिचार जिय मोरे।
तुलसिदास प्रभु मोह सृंखला छुटिहि तुम्हारे छोरे॥ ५॥

(३१)

सकुचत हौं अति राम कृपानिधि क्यों करि बिनय सुनावौं।
सकल धरम बिपरीत करत, केहि भाँति नाथ मन भावौं॥ १॥
जानत हौं हरि रूप चराचर, मैं हठि नैन न लावौं।
अंजन-केस-सिखा जुवती तहँ लोचन सलभ पठावौं॥ २॥
स्रवननिको फल कथा तुम्हारी, यह समुझौं समुझावौं।
तिन्ह स्रवननि परदोष निरंतर, सुनि-सुनि भरि-भरि तावौं॥ ३॥
जेहि रसना गुन गाइ तिहारे, बिनु प्रयास सुख पावौं।
तेहि मुख पर अपवाद भेक ज्यों, रटि रटि जनम नसावौं॥ ४॥
'करहु हृदय अति बिमल बसहिं हरि', कहि कहि सबहिं सिखावौं।
हौं निज उर अभिमान-मोह मद-खल मण्डली बसावौं॥ ५॥
जो तनु धरि हरिपद साधहिं जन सो बिनु काज गवावौं।
हाटक-घट भरि धर्‌यौ सुधा गृह तजि नभ कूप खनावौं॥ ६॥
मन-क्रम-बचन लाइ कीन्हें अघ, ते करि जतन दुरावौं।
पर-प्रेरित इरषा बस कबहुँक, किय कछु सुभ सो जनावौं॥ ७॥

बिप्र द्रोह जनु बाँट पर्‌यो, हठि सबसों बैर बढ़ावौं।
ताहू पर निज मति-बिलास सब संतन माँझ गनावौं॥ ८ ॥
निगम-सेस सारद निहोरि जो, अपने दोष कहावौं।
तौ न सिराहि कलप सत लगि प्रभु, कहा एक मुख गावौं॥ ९ ॥
जो करनी आपनी बिचारौं तौ कि सरन हौं आवौं।
मृदुल सुभाव सील रघुपतिको, सो बल मनहिं दिखावौं॥ १० ॥
तुलसिदास प्रभु सो गुन नहिं जेहि सपनेहुँ तुमहिं रिझावौं।
नाथ कृपा भवसिंधु धेनुपद सम जो जानि सिरावौं॥ ११ ॥

(३२)

रामचन्द्र रघुनायक तुमसों हौं बिनती केहि भाँति करौं।
अघ अनेक अवलोकि आपने, अनघ नाम अनुमानि डरौं॥
पर-दुख दुखी सुखी पर सुखते, संत-सील नहिं हृदय धरौं।
देखि आनकी बिपति परम सुख सुनि संपति बिनु आगि जरौं॥
भगति बिराग ग्यान साधन कहि बहु बिधि डहँकत लोग फिरौं।
सिव सरबस सुखधाम नाम तव, बेंचि नरकप्रद उदर भरौं॥
जानत हौं निज पाप जलधि जिय, जल-सीकर सम सुनत लरौं।
रज-सम पर अवगुन सुमेरु करि, गुन गिरि-सम रजतें निदरौं॥
नाना बेष बनाय दिवस निसि परबित जेहि तेहि जुगुति हरौं।
एकौ पल न कबहुँ अलोल चित, हित दै पद सरोज सुमिरौं॥
जो आचरन बिचारहु मेरो कलप कोटि लगि औटि मरौं।
तुलसिदास प्रभु कृपा बिलोकनि, गोपद ज्यों भवसिंधु तरौं॥

(३३)

हरि! तुम बहुत अनुग्रह कीन्हों।
साधन-धाम बिबुध दुरलभ तनु, मोहि कृपा करि दीन्हों॥ १ ॥
कोटिहुँ मुख कहि जात न प्रभुके, एक एक उपकार।
तदपि नाथ कछु और माँगिहौं, दीजै परम उदार॥ २ ॥

स्रुति पुरान सबको मत यह सतसंग सुदृढ़ धरिये।
निज अभिमान मोह ईर्षा बस, तिनहि न आदरिये॥ ४॥
संतत सोइ प्रिय मोहि सदा जाते भवनिधि परिये।
कहौ अब नाथ! कौन बलतें संसार-सोक हरिये॥ ५॥
जब-कब निज करुना-सुभावतें द्रवहु तौ निस्तरिये।
तुलसिदास बिस्वास आन नहिं, कत पचि पचि मरिये॥ ६॥

(३७) राग कल्याण

जाउँ कहाँ, ठौर है कहाँ देव! दुखित दीनको।
को कृपालु स्वामि सारिखो राखै सरनागत सब अंग बल-बिहीनको॥ १॥
गनिहिं गुनिहिं साहिब लहै, सेवा समीचीनको।
अधम अगुन आलसिनको पालिबो फबि आयो रघुनायक नवीनको॥ २॥
मुखकै कहा कहौं बिदित है जीकी प्रभु प्रबीनको।
तिहूँ काल, तिहूँ लोकमें एक टेक रावरी तुलसीसे मन मलीनको॥ ३॥

(३८) राग टोडी

तू दयालु, दीन हौं, तू दानि, हौं भिखारी।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पापपुंजहारी॥ १॥
नाथ तू अनाथको, अनाथ कौन मोसो।
मो समान आरत नहिं, आरतिहर तोसो॥ २॥
ब्रह्म तू, हौं जीव, तू है ठाकुर, हौं चेरो।
तात, मात, गुरु, सखा तू सब बिधि हितु मेरो॥ ३॥
तोहि मोहि नाते अनेक, मानिये जो भावै।
ज्यों त्यों तुलसी कृपालु, चरन-सरन पावै॥ ४॥

(३९) राग ललित

खोटो खरो रावरो हौं, रावरे सों झूठ क्यों
कहौंगो, जानौ सबहीके मनकी।
करम बचन हिये कहौं न कपट किये,
ऐसी हठि जैसी गाँठि पानी परे सनकी॥

असुभ होइ जिनके सुमिरे तें बानर रीछ बिकारी।
बेद बिदित पावन किये ते सब, महिमा नाथ तुम्हारी॥ ९ ॥
कहँ लगि कहौं दीन अगनित जिन्हकी तुम बिपति निवारी।
कलि-मल-ग्रसित दास तुलसीपर, काहे कृपा बिसारी ?॥ १० ॥

❑ ❑

दैन्य

(३५) राग आसावरी

लाज न आवत दास कहावत।
सो आचरन-बिसारि सोच तजि जो हरि तुम कहँ भावत॥ १ ॥
सकल संग तजि भजत जाहि मुनि, जप तप जाग बनावत।
मो सम मंद महाखल पाँवर, कौन जतन तेहि पावत॥ २ ॥
हरि निरमल, मल ग्रसित हृदय, असमंजस मोहि जनावत।
जेहि सर काक कंक बक-सूकर, क्यों मराल तहँ आवत॥ ३ ॥
जाकी सरन जाइ कोबिद, दारुन त्रयताप बुझावत।
तहूँ गये मद मोह लोभ अति, सरगहुँ मिटत न सावत॥ ४ ॥
भव-सरिता कहँ नाउ संत यह कहि औरनि समुझावत।
हौं तिनसों हरि परम बैर करि तुमसों भलो मनावत॥ ५ ॥
नाहिन और ठौर मो कहँ, तातें हठि नातो लावत।
राखु सरन उदार-चूड़ामनि, तुलसिदास गुन गावत॥ ६ ॥

(३६) राग बागेश्री

कौन जतन बिनती करिये।
निज आचरन बिचारि हारि हिय, मानि-जानि डरिये॥ १ ॥
जेहि साधन हरि द्रवहु जानि जन, सो हठि परिहरिये।
जाते बिपति जाल निसिदिन दुख, तेहि पथ अनुसरिये॥ २ ॥
जानत हूँ मन बचन करम परहित कीन्हें तरिये।
सो बिपरीत, देखि परसुख बिनु कारन ही जरिये॥ ३ ॥

पद-राग-जाग चहौं कौसिक ज्यों कियो हौं।
कलि-मल-खल देखि भारी भीति भियो हौं॥
करम-कपीस बालि बली-त्रास-त्रस्यो हौं।
चाहत अनाथ नाथ तेरी बाँह बस्यो हौं॥
महा मोह रावन बिभीषन ज्यों हयो हौं।
त्राहि तुलसीस! त्राहि तिहूँ ताप तयो हौं॥

(४३)

ताहि ते आयो सरन सबेरे।
ग्यान बिराग भगति साधन कछु सपनेहुँ नाथ न मेरे॥ १॥
लोभ मोह मद काम क्रोध रिपु फिरत रैन दिन घेरे।
तिनहि मिले मन भयो कुपथ रत फिरै तिहारेहि फेरे॥ २॥
दोष-निलय यह बिषय सोक-प्रद कहत संत स्रुति टेरे।
जानत हूँ अनुराग तहाँ अति सो हरि तुम्हरेहि प्रेरे॥ ३॥
बिष-पियूष सम करहु अगिनि हिम तारि सकहु बिनु बेरे।
तुम सब ईस कृपालु परम हित पुनि न पाइहौं हेरे॥ ४॥
यह जिय जानि रहौं सब तजि रघुबीर भरोसे तेरे।
तुलसिदास यह बिपति बाँगुरो तुमहिं सों बनै निबेरे॥ ५॥

(४४)

है प्रभु! मेरोई सब दोसु।
सीलसिंधु, कृपालु नाथ अनाथ, आरत-पोसु॥
बेष बचन बिराग मन अघ अवगुननिको कोसु।
राम! प्रीति प्रतीति पोली, कपट करतब ठोसु॥
राग-रंग कुसंग हो सों साधु-संगति रोसु।
चहत केहरि-जसहिं सेइ सृगाल ज्यों खरगोसु॥
संभु सिखवन रसन हूँ नित राम-नामहिं घोसु।
दंभहू कलिनाम कुंभज सोच सागर सोसु॥

दूसरो भरोसो नाहिं, बासना उपासनाको,
वासव, बिरंचि, सुर-नर-मुनि-गनकी।
स्वारथके साथी मेरे हाथी स्वान लेवा देई,
काहूको न पीर रघुबीर दीनजनकी॥
साँप सभा साबर लबार भये देव दिब्य,
दुसह साँसति कीजै आगे ही या तनकी।
साँचे परौं पाऊँ पान, पंचनमें पन प्रमान,
तुलसी चातक आस राम स्याम घनकी॥

(४०)

तऊ न मेरे अघ अवगुन गनिहैं।
जौ जमराज काज सब परिहरि इहै ख्याल उर अनिहैं॥ १ ॥
चलिहैं छूटि, पुंज पापिनके असमंजस जिय जनिहैं।
देखि खलल अधिकार प्रभूसों, मेरी भूरि भलाई भनिहैं॥ २ ॥
हँसि करिहैं परतीति भक्तकी भक्त सिरोमनि मनिहैं।
ज्यों त्यों तुलसिदास कोसलपति, अपनायहि पर बनिहैं॥ ३ ॥

(४१)

जौ पै जिय धरिहौ अवगुन जनके।
तौ क्यों कटत सुकृत नखते मो पै, बिपुल बृंद अघ बनके॥ १ ॥
कहिहैं कौन कलुष मेरे कृत, कर्म बचन अरु मनके।
हारिहैं अमित सेष सारद-स्रुति, गिनत एक इक छनके॥ २ ॥
जो चित चढ़े नाम महिमा निज, गुनगन पावन पनके।
तौ तुलसिहिं तारिहौ बिप्र ज्यों, दसन तोरि जम-गनके॥ ३ ॥

(४२)

केहू भाँति कृपासिंधु मेरी ओर हेरिये।
मोको और ठौर न सुटेक एक तेरिये॥
सहस सिलातें अति जड़ मति भई है।
कासो कहौं, कौन गति पाहनहिं दई है॥

नाहिन नरक परत मो कहँ डर जद्यपि हौं अति हारो।
यह बड़ि त्रास दास तुलसी प्रभु नामहु पाप न जारो॥ ६॥

(४७)

माधवजू मोसम मंद न कोऊ।
जद्यपि मीन पतंग हीनमति, मोहि नहिं पूजैं ओऊ॥ १॥
रुचिर रूप-आहार-बस्य उन्ह, पावक लोह न जान्यो।
देखत बिपति बिषय न तजत हौं ताते अधिक अयान्यो॥ २॥
महामोह सरिता अपार महँ, संतत फिरत बह्यो।
श्रीहरि चरनकमल-नौका तजि फिरि फिरि फेन गह्यो॥ ३॥
अस्थि पुरातन छुधित स्वान अति ज्यों भरि मुख पकरै।
निज तालूगत रुधिर पान करि, मन संतोष धरै॥ ४॥
परम कठिन भव ब्याल ग्रसित हौं त्रसित भयो अति भारी।
चाहत अभय भेक सरनागत, खग-पति नाथ बिसारी॥ ५॥
जलचर-बृंद जाल-अंतरगत होत सिमिटि एक पासा।
एकहि एक खात लालच-बस, नहिं देखत निज नासा॥ ६॥
मेरे अघ सारद अनेक जुग गनत पार नहिं पावै।
तुलसीदास पतित-पावन प्रभु, यह भरोस जिय आवै॥ ७॥

(४८)

यों मन कबहूँ तुमहिं न लाग्यो।
ज्यों छल छाँड़ि सुभाव निरंतर रहत बिषय अनुराग्यो॥ १॥
ज्यों चितई परनारि, सुने पातक-प्रपंच घर-घरके।
त्यों न साधु, सुरसरि-तरंग-निर्मल गुनगन रघुबरके॥ २॥
ज्यों नासा सुगंध-रस-बस, रसना षटरस-रति मानी।
राम-प्रसाद-माल, जूठनि लगि, त्यों न ललकि ललचानी॥ ३॥
चंदन-चंदबदनि-भूषन-पट ज्यों चह पाँवर परस्यो।
त्यों रघुपति-पद-पदुम-परसको तनु पातकी न तरस्यो॥ ४॥

मोद-मंगल-मूल अति अनुकूल निज निरजोसु।
रामनाम प्रभाव सुनि तुलसिहु परम परितोसु॥

(४५)

कैसे देउँ नाथहिं खोरि।
काम-लोलुप भ्रमत मन हरि! भगति परिहरि तोरि॥
बहुत प्रीति पुजाइबे पर, पूजिबे पर थोरि।
देत सिख सिखयो न मानत, मूढ़ता अस मोरि॥
किये सहित सनेह जे अघ हृदय राखे चोरि।
संग-बस किये सुभ सुनाये सकल लोक निहोरि॥
करौं जो कछु धरौं सचि पचि सुकृत सिला बटोरि।
पैठि उर बरबस दयानिधि! दंभ लेत अजोरि॥
लोभ मनहिं नचाव कपि ज्यों गरे आसा-डोरि।
बात कहौं बनाइ बुध ज्यों, बर बिराग निचोरि॥
एतेहुँ पर तुम्हरो कहावत, लाज अँचई घोरि।
निलजता पर रीझि रघुबर देहु तुलसिहिं छोरि॥

(४६)

काहे ते हरि मोहिं बिसारो।
जानत निज महिमा मेरे अघ, तदपि न नाथ सँभारो॥ १॥
पतित-पुनीत दीन हित असुरन सरन कहत स्रुति चारो।
हौं नहिं अधम सभीत दीन? किधौं बेदन मृषा पुकारो॥ २॥
खग-गनिका-गज ब्याध-पाँति जहँ तहँ हौहूँ बैठारो।
अब केहि लाज कृपानिधान! परसत पनवारो फारो॥ ३॥
जो कलिकाल प्रबल अति हो तो तुव निदेस तें न्यारो।
तौ हरि रोष सरोस दोष गुन तेहि भजते तजि मारो॥ ४॥
मसक बिरंचि बिरंचि मसक सम, करहु प्रभाउ तुम्हारो।
यह सामरथ अछत मोहि त्यागहु, नाथ तहाँ कछु चारो॥ ५॥

(५१) राग बिलावल

ते नर नरकरूप जीवत जग,
भव-भंजन पद बिमुख अभागी।
निसिबासर रुचि पाप, असुचिमन,
खल मति मलिन निगम पथ त्यागी॥ १॥
नहिं सतसंग, भजन नहिं हरिको,
स्रवन न रामकथा अनुरागी।
सुत-बित-दार-भवन-ममता-निसि,
सोवत अति न कबहुँ मति जागी॥ २॥
तुलसिदास हरि नाम सुधा तजि,
सठ, हठि पियत बिषय-बिष माँगी।
सूकर-स्वान-सृगाल-सरिस जन,
जनमत जगत जननि-दुख लागी॥ ३॥

(५२) राग धनाश्री

मन माधवको नेकु निहारहि।
सुनु सठ, सदा रंकके धन ज्यों, छिन-छिन प्रभुहिं सँभारहि॥
सोभा-सील ग्यान-गुन-मंदिर, सुंदर, परम उदारहि।
रंजन संत, अखिल अघ गंजन, भंजन बिषय बिकारहि॥
जो बिनु जोग, जग्य, ब्रत, संयम गयो चहै भव पारहि।
तौ जनि तुलसिदास निसि बासर हरि-पद कमल बिसारहि॥

(५३)

सुनु मन मूढ़ सिखावन मेरो।
हरि पद बिमुख लह्यो न काहु सुख, सठ यह समुझ सबेरो॥ १॥
बिछुरे ससि रबि मन नैननितें पावत दुख बहुतेरो।
भ्रमत स्त्रमित निसि दिवस गगनमँह तहँ रिपु राहु बड़ेरो॥ २॥
जद्यपि अति पुनीत सुर सरिता तिहुँ पुर सुजस घनेरो।
तजे चरन अजहूँ न मिटत, नित बहिबो ताहू केरो॥ ३॥

ज्यों सब भाँति कुदेव कुठाकुर सेये बपु बचन हिये हूँ।
त्यों न राम, सुकृतग्य जे सकुचत सकृत प्रनाम किये हूँ॥ ५ ॥
चंचल चरन लोभ लगि लोलुप द्वार-द्वार जग बागे।
राम-सीय-आश्रमनि चलत त्यों भये न स्रमित अभागे॥ ६ ॥
सकल अंग पद बिमुख नाथ मुख नामकी ओट लई है।
है तुलसिहिं परतीति एक प्रभु मूरति कृपामई है॥ ७ ॥

❑ ❑

चेतावनी

(४९) राग आसावरी

ममता तू न गई मेरे मन तें॥
पाके केस जनमके साथी, लाज गई लोकनतें।
तन थाके कर कंपन लागे, ज्योति गई नैननतें॥ १ ॥
सरवन बचन न सुनत काहुके बल गये सब इंद्रिनतें।
टूटे दसन बचन नहिं आवत सोभा गई मुखनतें॥ २ ॥
कफ पित बात कंठपर बैठे सुतहिं बुलावत करतें।
भाइ-बंधु सब परम पियारे नारि निकारत घरतें॥ ३ ॥
जैसे ससि-मंडल बिच स्याही छुटै न कोटि जतनतें।
तुलसिदास बलि जाउँ चरनते लोभ पराये धनतें॥ ४ ॥

(५०) राग सोरठ

जाके प्रिय न राम बैदेही।
सो छाँड़िये कोटि बैरी सम, जद्यपि परम सनेही॥ १ ॥
तज्यो पिता प्रह्लाद, बिभीषन बंधु, भरत महतारी।
बलि गुरु तज्यो, कंत ब्रज बनितनि भये मुद-मंगलकारी॥ २ ॥
नाते नेह रामके मनियत सुहृद सुसेब्य जहाँ लौं।
अंजन कहा आँखि जेहि फूटै बहुतक कहौं कहाँ लौं॥ ३ ॥
तुलसी सो सब भाँति परमहित पूज्य प्रानते प्यारो।
जासों होय सनेह रामपद एतो मतो हमारो॥ ४ ॥

(५७) राग भैरवी—तीन ताल

भज मन रामचरन सुखदाई॥ ध्रु० ॥
जिहि चरननसे निकसी सुरसरि संकर जटा समाई।
जटासंकरी नाम पर्‌यो है, त्रिभुवन तारन आई॥
जिन चरननकी चरनपादुका भरत रह्यो लव लाई।
सोइ चरन केवट धोइ लीने तब हरि नाव चलाई॥
सोइ चरन संतन जन सेवत सदा रहत सुखदाई।
सोइ चरन गौतमऋषि-नारी परसि परमपद पाई॥
दंडकबन प्रभु पावन कीन्हो ऋषियन त्रास मिटाई।
सोई प्रभु त्रिलोकके स्वामी कनक मृगा सँग धाई॥
कपि सुग्रीव बंधु भय-ब्याकुल तिन जय छत्र फिराई।
रिपु को अनुज बिभीषन निसिचर परसत लंका पाई॥
सिव सनकादिक अरु ब्रह्मादिक सेष सहस मुख गाई।
तुलसिदास मारुत-सुतकी प्रभु निज मुख करत बड़ाई॥

(५८) राग गौड सारंग—तीन ताल

अब लौं नसानी, अब न नसैहौं।
रामकृपा भव निसा सिरानी जागे फिर न डसैहौं॥
पायो नाम चारु चिंतामनि उर करतें न खसैहौं।
स्याम रूप सुचिरुचिर कसौटी चित कंचनहिं कसैहौं॥
परबस जानि हँस्यो इन इंद्रिन निज बस ह्वै न हँसैहौं।
मन मधुपहिं प्रन करि, तुलसी रघुपतिपदकमल बसैहौं॥

(५९) राग पूर्वी—तीन ताल

मन पछितैहै अवसर बीते।
दुर्लभ देह पाइ हरिपद भजु, करम, बचन अरु हीते॥ १ ॥
सहसबाहु, दसबदन आदि नृप बचे न काल बलीते।
हम हम करि धन-धाम सँवारे, अंत चले उठि रीते॥ २ ॥

छुटै न बिपति भजे बिनु रघुपति, स्रुति-संदेह निबेरो।
तुलसिदास सब आस छाँड़ि करि, होहु राम कर चेरो॥ ४॥

(५४)

कबहूँ मन बिस्राम न मान्यो।
निसिदिन भ्रमत बिसारि सहज सुख, जहँ-तहँ इंद्रिन तान्यो॥
जदपि बिषय सँग सह्यो दुसह दुख, बिषम-जाल अरुझान्यो।
तदपि न तजत मूढ़, ममता बस, जानतहूँ नहिं जान्यो॥
जन्म अनेक किये नाना बिधि कर्म कीच चित सान्यो।
होइ न बिमल बिबेक नीर बिनु बेद पुरान बखान्यो॥
निज हित नाथ पिता गुरु हरि सों हरषि हृदय नहिं आन्यो।
तुलसिदास कब तृषा जाय सर खनतहिं जनम सिरान्यो॥

(५५)

रामसे प्रीतम की प्रीति रहित जीव जाय जियत।
जेहि सुख सुख मानि लेत, सुखसो समुझ कियत॥
जहँ जहँ जेहि जोनि जनम महि पताल बियत।
तहँ तहँ तू बिषय-सुखहिं, चहत लहत नियत॥
कत बिमोह लट्यो, फट्यो गगन मगन सियत।
तुलसी प्रभु-सुजस गाइ क्यों न सुधा पियत॥

(५६) राग कान्हरा

जो मन लागै रामचरन अस।
देह गेह सुत बित कलत्र महँ मगन होत बिनु जतन किये जस॥
द्वंद्वरहित गतमान ग्यान-रत बिषय-बिरत खटाइ नाना कस।
सुखनिधान सुजान कोसलपति ह्वै प्रसन्न कहु क्यों न होहिं बस॥
सर्बभूतहित निर्ब्यलीक चित भगति प्रेम दृढ़ नेम एक रस।
तुलसिदास यह होइ तबहि जब द्रवै ईस जेहि हतो सीस दस॥

वैराग्य

(६२)

जो मोहि राम लागते मीठे।
तौ नवरस, षटरस-रस अनरस ह्वै जाते सब सीठे॥ १॥
बंचक बिषय बिबिध तनु धरि अनुभवे, सुने अरु डीठे।
यह जानत हौं हृदय आपने सपने न अघाइ उबीठे॥ २॥
तुलसिदास प्रभु सों एकहिं बल बचन कहत अति ढीठे।
नामकी लाज राम करुनाकर केहि न दिये कर चीठे॥ ३॥

❑ ❑

वेदान्त

(६३)

अस कछु समुझि परत रघुराया।
बिनु तुव कृपा दयालु दास हित, मोह न छूटै माया॥ १॥
बाक्य ग्यान अत्यन्त निपुन भव-पार न पावै कोई।
निसि गृह मध्य दीपकी बातन्ह, तम निवृत्त नहिं होई॥ २॥
जैसे कोइ इक दीन दुखित अति, असन हीन दुख पावै।
चित्र कल्पतरु कामधेनु गृह, लिखे न बिपति नसावै॥ ३॥
षटरस बहु प्रकार भोजन कोउ दिन अरु रैनि बखानै।
बिनु बोले संतोष-जनित सुख, खाइ सोइ पै जानै॥ ४॥
जब लगि नहिं निज हृदि प्रकाश अरु, बिषय आस मनमाहीं।
तुलसिदास तब लगि जग जोनि भ्रमत, सपनेहु सुख नाहीं॥ ५॥

❑ ❑

लीला

(६४)

जागिये रघुनाथ कुँवर पंछी बन बोले॥
कंद किरन सीतल भई चकई पिय मिलन गई।
त्रिबिध मंद चलत पवन पल्लव द्रुम डोले॥

सुत-बनितादि जानि स्वारथरत न करु नेह सबहीते।
अंतहु तोहिं तजेंगे पामर! तू न तजै अबहीते॥ ३॥
अब नाथहिं अनुरागु जागु जड़, त्यागु दुरासा जीते।
बुझै न काम-अगिनि तुलसी कहुँ, बिषयभोग बहु घी ते॥ ४॥

(६०)

लाभ कहा मानुष-तनु पाये।
काय-बचन-मन सपनेहु कबहुँक घटत न काज पराये॥ १॥
जो सुख सुरपुर नरक गेह बन आवत बिनहि बुलाये।
तेहि सुख कहँ बहु जतन करत मन समुझत नहिं समुझाये॥ २॥
पर-दारा परद्रोह, मोह-बस किये मूढ़ मन भाये।
गरभबास दुखरासि जातना तीब्र बिपति बिसराये॥ ३॥
भय, निद्रा, मैथुन, अहार सबके समान जग जाये।
सुर दुरलभ तनु धरि न भजे हरि मद अभिमान गँवाये॥ ४॥
गई न निज-पर बुद्धि सुद्ध ह्वै रहे न राम-लय लाये।
तुलसिदास यह अवसर बीते का पुनिके पछिताये॥ ५॥

❑ ❑

भक्ति-प्रेम

(६१)

॥

जानकी जीवनकी बलि जैहों।
चित कहै, राम सीय पद परिहरि अब न कहूँ चलि जैहों॥ १॥
उपजी उर प्रतीति सपनेहुँ सुख, प्रभु-पद-बिमुख न पैहों।
मन समेत या तनुके बासिन्ह, इहै सिखावन दैहों॥ २॥
स्रवननि और कथा नहिं सुनिहौं, रसना और न गैहों।
रोकिहौं नैन बिलोकत औरहिं सीस ईसही नैहों॥ ३॥
नातो नेह नाथसों करि सब नातो नेह बहैहों।
यह छर भार ताहि तुलसी जग जाको दास कहैहों॥ ४॥

❑ ❑

वैराग्य

(६२)

जो मोहि राम लागते मीठे।
तौ नवरस, षटरस-रस अनरस ह्वै जाते सब सीठे॥ १॥
बंचक बिषय बिबिध तनु धरि अनुभवे, सुने अरु डीठे।
यह जानत हौं हृदय आपने सपने न अघाइ उबीठे॥ २॥
तुलसिदास प्रभु सों एकहिं बल बचन कहत अति ढीठे।
नामकी लाज राम करुनाकर केहि न दिये कर चीठे॥ ३॥

❑ ❑

वेदान्त

(६३)

अस कछु समुझि परत रघुराया।
बिनु तुव कृपा दयालु दास हित, मोह न छूटै माया॥ १॥
बाक्य ग्यान अत्यन्त निपुन भव-पार न पावै कोई।
निसि गृह मध्य दीपकी बातन्ह, तम निवृत्त नहिं होई॥ २॥
जैसे कोइ इक दीन दुखित अति, असन हीन दुख पावै।
चित्र कल्पतरु कामधेनु गृह, लिखे न बिपति नसावै॥ ३॥
षटरस बहु प्रकार भोजन कोउ दिन अरु रैनि बखानै।
बिनु बोले संतोष-जनित सुख, खाइ सोइ पै जानै॥ ४॥
जब लगि नहिं निज हृदि प्रकाश अरु, बिषय आस मनमाहीं।
तुलसिदास तब लगि जग जोनि भ्रमत, सपनेहु सुख नाहीं॥ ५॥

❑ ❑

लीला

(६४)

जागिये रघुनाथ कुँवर पंछी बन बोले॥
कंद किरन सीतल भई चकई पिय मिलन गई।
त्रिबिध मंद चलत पवन पल्लव द्रुम डोले॥

प्रात भानु प्रगट भयो रजनीको तिमिर गयो।
भृंग करत गुंजगान कमलन दल खोले॥
ब्रह्मादिक धरत ध्यान सुर-नर-मुनि करत गान।
जागनकी बेर भई नयन पलक खोले॥
तुलसिदास अति अनन्द निरखिके मुखारबिंद।
दीननको देत दान भूषन बहु मोले॥

❑ ❑

(६५) राग विभास

जागिये कृपानिधान जानराय, रामचन्द्र!
जननी कहै बार-बार, भोर भयो प्यारे॥
राजिवलोचन बिसाल, प्रीति बापिका मराल,
ललित कमल-बदन ऊपर मदन कोटि बारे॥
अरुन उदित, बिगत सर्बरी, ससांक-किरन हीन,
दीन दीप-ज्योति मलिन-दुति समूह तारे॥
मनहुँ ग्यान घन प्रकास बीते सब भव बिलास,
आस त्रास तिमिर-तोष-तरनि-तेज जारे॥
बोलत खग निकर मुखर, मधुर, करि प्रतीति,
सुनहु स्रवन, प्रान जीवन धन, मेरे तुम बारे॥
मनहुँ बेद बंदी मुनिबृन्द सूत मागधादि बिरुद-
बदत 'जय जय जय जयति कैटभारे'॥
बिकसित कमलावली, चले प्रपुंज चंचरीक,
गुंजत कल कोमल धुनि त्यागि कंज न्यारे।
जनु बिराग पाइ सकल सोक-कूप-गृह बिहाइ॥
भृत्य प्रेममत्त फिरत गुनत गुन तिहारे,
सुनत बचन प्रिय रसाल जागे अतिसय दयाल।
भागे जंजाल बिपुल, दुख-कदम्ब दारे।

तुलसिदास अति अनन्द, देखिकै मुखारबिंद,
छूटे भ्रमफंद परम मंद द्वंद भारे॥

(६६) राग बिलावल

झूलत राम पालने सोहैं।
भूरि-भाग जननी जन जोहैं॥
तन मृदु मंजुल मेचकताई।
झलकति बाल बिभूषन-झाँई॥
अधर पानि पद लोहित लौने।
सर-सिंगार भव-सारस सोने॥
किलकत निरखि बिलोल खेलौना।
मनहु बिनोद लरत छबि छौना॥
रंजित अंजन कंज बिलोचन।
भ्राजत भाल तिलक गोरोचन॥
लस मसिबिंदु बदन बिधु नीको।
चितवत चितचकोर तुलसीको॥

(६७) राग सूहो

राम-पद-पदुम पराग परी।
ऋषि तिय तुरत त्यागि पाहन-तनु छबिमय देह धरी॥ १॥
प्रबल पाप पति-साप दुसह दव दारुन जरनि जरी।
कृपा-सुधा सिंचि बिबुध बेलि ज्यों फिरि सुख-फरनि फरी॥ २॥
निगम अगम मूरति महेस मति जुबति बराय बरी।
सोइ मूरति भइ जानि नयन-पथ इकटकतें न टरी॥ ३॥
बरनति हृदय सरूप सील गुन प्रेम-प्रमोद भरी।
तुलसिदास अस केहि आरतकी आरति प्रभु न हरी॥ ४॥

(६८) राग केदारा

सखि नीके कै निरखि कोऊ सुठि सुंदर बटोही।
मधुर मूरति मदनमोहन जोहन जोग,
बदन सोभासदन देखिहौं मोही॥ १॥
साँवरे गोरे किसोर, सुर-मुनि-चित्त-चोर
उभय-अंतर एक नारि सोही।
मनहुँ बारिद-बिधु बीच ललित अति
राजति तड़ित निज सहज बिछोही॥ २॥
उर धीरजहि धरि, जन्म सफल करि,
सुनहु सुमुखि! जनि बिकल होही।
को जाने कौने सुकृत लह्यो है लोचन लाहु,
ताहि तें बारहि बार कहति तोही॥ ३॥
सखिहि सुसिख दई प्रेम-मगन भई,
सुरति बिसरि गई आपनी ओही।
तुलसी रही है ठाढ़ी पाहन गढ़ी-सी काढ़ी,
कौन जाने कहा तैं आई कौन की को ही॥ ४॥

(६९) राग केदारा

मनोहरताको मानो ऐन।
स्यामल गौर किसोर पथिक दोउ सुमुखि! निरखि भरि नैन॥
बीच बधू बिधु-बदनि बिराजत उपमा कहुँ कोऊ है न।
मानहुँ रति ऋतुनाथ सहित मुनि बेष बनाए हैं मैन॥
किधौं सिंगार-सुखमा सुप्रेम मिलि चले जग-जित-बित लैन।
अद्‌भुत त्रयी किधौं पठई है बिधि मग-लोगन्हि सुख दैन॥
सुनि सुचि सरल सनेह सुहावने ग्राम-बधुन्हके बैन।
तुलसी प्रभु तरुतर बिलँबे किए प्रेम कनौडे कै न?॥

(७०) राग केदारा

बहुत दिन बीते सुधि कछु न लही।
गए जो पथिक गोरे साँवरे सलोने,
सखि, संग नारि सुकुमारि रही॥ १॥
जानि पहिचानि बिनु आपु तें आपनेहु तें,
प्रानहु तें प्यारे प्रियतम उपही।
सुधाके सनेहहूके सार लै सँवारे बिधि,
जैसे भावते हैं भाँति जाति न कही॥ २॥
बहुरि बिलोकिबे कबहुँक, कहत,
तनु पुलक, नयन जलधार बही।
तुलसी प्रभु सुमिरि ग्रामजुबती सिथिल,
बिनु प्रयास परीं प्रेम सही॥ ३॥

(७१) राग गौरी

भाई! हौं अवध कहा रहि लैहौं।
राम-लखन-सिय-चरन बिलोकन काल्हि काननहिं जैहौं॥
जद्यपि मोतें, कै कुमातु, तैं ह्वै आई अति पोची।
सनमुख गए सरन राखहिंगे रघुपति परम सँकोची॥
तुलसी यों कहि चले भोरहीं, लोग बिकल सँग लागे।
जनु बन जरत देखि दारुन दव निकसि बिहँग मृग भागे॥

(७२) राग केदारा

रघुपति! मोहिं संग किन लीजै?
बार-बार, 'पुर जाहु' नाथ! केहि कारन आयसु दीजै॥ १॥
जद्यपि हौं अति अधम कुटिल मति अपराधिनको जायो।
प्रनतपाल कोमल-सुभाव जिय जानि सरन तकि आयो॥ २॥
जो मेरे तजि चरन आन गति, कहौं हृदय कछु राखी।
तौ परिहरहु दयालु दीन हित प्रभु अभिअन्तर साखी॥ ३॥

ताते नाथ! कहौं मैं पुनि पुनि प्रभु पितु मातु गुसाईं।
भजन-हीन नरदेह बृथा खर स्वान फेरुकी नाईं॥ ४॥
बन्धु-बचन सुनि श्रवन नयन राजीव नीर भरि आए।
तुलसिदास प्रभु परम कृपा गहि बाँह भरत उर लाए॥ ५॥

(७३) राग केदारा

बिनती भरत करत कर जोरे।
दीनबन्धु दीनता दीनकी कबहुँ परै जनि भोरे॥ १॥
तुम्हसे तुम्हहिं नाथ मोको, मोसे, जन तुम्हहि बहुतेरे।
इहै जानि पहिचानि प्रीति छमिये अघ औगुन मेरे॥ २॥
यों कहि सीय-राम-पाँयन परि लखन लाइ उर लीन्हें।
पुलक सरीर नीर भरि लोचन कहत प्रेम पन कीन्हें॥ ३॥
तुलसी बीते अवधि प्रथम दिन जो रघुबीर न ऐहौ।
तो प्रभु-चरन-सरोज-सपथ जीवत परिजनहि न पैहौ॥ ४॥

(७४) राग कल्याण

कर सर धनु, कटि रुचिर निषंग।
प्रिया प्रीति-प्रेरित बन बीथिन्ह
बिचरत कपट-कनक-मृग-संग॥

भुज बिसाल कमनीय कंध उर,
स्रम-सीकर सोहैं साँवरे अंग।
मनु मुकुता मनि-मरकतगिरिपर
लसत ललित रबि किरनि-प्रसंग॥

नलिन-नयन, सिर जटा-मुकुट-बिच
सुमन-माल मनु सिव-सिर गंग।
तुलसिदास ऐसी मूरतिकी बलि,
छबि बिलोकि लाजैं अमित अनंग॥

(७५) राग सोरठ

राघौ गीध गोद करि लीन्हौं।
नयन सरोज सनेह सलिल सुचि मनहुँ अरघ जल दीन्हौं॥
सुनहु लखन! खगपतिहि मिले बन मैं पितु-मरन न जान्यौं।
सहि न सक्यो सो कठिन बिधाता बड़ो पछु आजुहि भान्यौं॥
बहुबिधि राम कह्यौ तनु राखन परम धीर नहि डोल्यौं।
रोकि प्रेम, अवलोकि बदन-बिधु बचन मनोहर बोल्यौं॥
तुलसी प्रभु झूठे जीवन लगि समय न धोखो लैहौं।
जाको नाम मरत मुनि दुर्लभ तुमहि कहाँ पुनि पैहौं॥

(७६) राग केदारा

पद-पद्म गरीबनिवाजके।
देखिहौं जाइ पाइ लोचन फल हित सुर साधु समाजके॥ १॥
गई बहोर, ओर निरबाहक, साजक बिगरे साजके।
सबरी-सुखद, गीध-गतिदायक, समन सोक कपिराजके॥ २॥
नाहिन मोहि और कतहूँ कछु जैसे काग जहाजके।
आयो सरन सुखद पद पंकज चोंथे रावन बाजके॥ ३॥
आरति हरन सरन समरथ सब दिन अपनेकी लाजके।
तुलसी पाहि कहत नत पालक मोहुँसे निपट निकाजके॥ ४॥

(७७) राग केदारा

दीन-हित बिरद पुराननि गायो।
आरत-बन्धु, कृपालु मृदुलचित जानि सरन हौं आयो॥ १॥
तुम्हरे रिपुको अनुज बिभीषन बंस निसाचर जायो।
सुनि गुन सील सुभाउ नाथको मैं चरननि चितु लायो॥ २॥
जानत प्रभु दुख सुख दासिनको तातें कहि न सुनायो।
करि करुना भरि नयन बिलोकहु तब जानौं अपनायो॥ ३॥
बचन बिनीत सुनत रघुनायक हँसि करि निकट बुलायो।
भेंट्यो हरि भरि अंक भरत ज्यौं लंकापति मन भायो॥ ४॥

करपंकज सिर परसि अभय कियो, जनपर हेतु दिखायो।
तुलसिदास रघुबीर भजन करि को न परमपद पायो ? ॥ ५ ॥

(७८) राग धनाश्री

सत्य कहौं मेरो सहज सुभाउ।
सुनहु सखा कपिपति लंकापति तुम्ह सन कौन दुराउ ॥ १ ॥
सब बिधि हीन-दीन, अति जड़मति जाको कतहुँ न ठाँउ।
आये सरन भजौं, न तजौं तिहि, यह जानत रिषिराउ ॥ २ ॥
जिन्हके हौं हित सब प्रकार चित, नाहिन और उपाउ।
तिन्हहिं लागि धरि देह करौं सब डरौं न सुजस नसाउ ॥ ३ ॥
पुनि पुनि भुजा उठाइ कहत हौं, सकल सभा पतिआउ।
नहिं कोऊ प्रिय मोहि दास सम, कपट-प्रीति बहि जाउ ॥ ४ ॥
सुनि रघुपतिके बचन बिभीषन प्रेम-मगन, मन चाउ।
तुलसिदास तजि आस-त्रास सब ऐसे प्रभु कहँ गाउ ॥ ५ ॥

(७९) राग जयतश्री

कब देखौंगी नयन वह मधुर मूरति ?
राजिवदल-नयन, कोमल-कृपा-अयन,
मयननि बहु छबि अंगनि दूरति ॥ १ ॥
सिरसि जटाकलाप पानि सायक चाप
उरसि रुचिर बनमाल मूरति।
तुलसिदास रघुबीरकी सोभा सुमिरि,
भई है मगन नहिं तनकी सूरति ॥ २ ॥

(८०) राग सोरठ

बैठी सगुन मनावति माता।
कब ऐहैं मेरे बाल कुसल घर कहहु काग फुर बाता ॥ १ ॥
दूध भातकी दोनी दैहौं सोने चौंच मढ़ैहौं।
जब सिय सहित बिलोकि नयन भरि राम-लखन उर लैहौं ॥ २ ॥

अवधि समीप जानि जननी जिय अति आतुर अकुलानी।
गनक बोलाइ पायँ परि पूछति प्रेम-मगन मृदु बानी॥ ३॥
तेहि अवसर कोउ भरत निकट तें समाचार लै आयो।
प्रभु आगमन सुनत तुलसी मनों मीन मरत जल पायो॥ ४॥

(८१)

जानत प्रीति-रीति रघुराई।
नाते सब हाते करि राखत, राम सनेह-सगाई॥ १॥
नेह निबाहि देह तजि दसरथ, कीरति अचल चलाई।
ऐसेहु पितु तें अधिक गीधपर ममता गुन गरुआई॥ २॥
तिय-बिरही-सुग्रीव सखा लखि प्रानप्रिया बिसराई।
रन पर्‌यो बन्धु बिभीषन ही को, सोच हृदय अधिकाई॥ ३॥
घर, गुरुगृह, प्रिय-सदन सासुरे भइ जब जहँ पहुनाई।
तब तहँ कहि सबरीके फलनिकी रुचि माधुरी न पाई॥ ४॥
सहज सरूप कथा मुनि बरनत रहत सकुच सिर नाई।
केवट मीत कहे सुख मानत बानर बंधु बड़ाई॥ ५॥
प्रेम कनौड़ो रामसो प्रभु त्रिभुवन तिहूँ काल न भाई।
'तेरो रिनी' कह्यौ हौं कपि सों ऐसी मानहि को सेवकाई॥ ६॥
तुलसी राम-सनेह-सील लखि, जो न भगति उर आई।
तौ तोहिं जनति जाय जननी जड़ तनु-तरुनता गवाँई॥ ७॥

❑ ❑

रूप

(८२) राग कल्याण

रघुपति राजीवनयन, सोभातनु कोटिमयन॥
करुनारस-अयन चयन-रूप भूप, माई।
देखो सखि अतुल छबि, संत, कंज-कानन-रबि,
गावत कल कीरति कबि-कोबिद समुदाई॥

मज्जन करि सरजु-तीर ठाढ़े रघुबंस-बीर,
सेवत पद-कमल धीर निरमल चितलाई।
ब्रह्ममंडली-मुनींद्रबृंद-मध्य इंदु-बदन-
राजत सुखसदन लोक-लोचन-सुखदाई॥
बिथुरित सिररुह बरूथ कुंचित बिच सुमन-जूथ,
मनि जुत सिसु फनि-अनीक ससि-समीप आई।
जनु सभीत दै अँकोर राखे जुग रुचिर मोर,
कुंडल-छबि निरखि चोर सकुचत अधिकाई॥
ललित भ्रकुटि तिलक भाल चिबुक अधर द्विज-
रसाल, हास चारुतर, कपोल नासिका सुहाई।
मधुकर जुग पंकज बिच सुक बिलोकि नीरज पै-
लरत मधुप-अवलि मानो बीच कियो जाई॥
सुंदर पट पीत बिसद, भ्राजत बनमाल उरसि,
तुलसिका प्रसून रचित बिबिध बिधि बनाई।
तरु-तमाल अधबिच जनु त्रिबिध कीर पाँति,
रुचिर हेमजाल अन्तर परि तातें न उड़ाई॥
संकर हृदि-पुंडरीक निसि बस हरि चंचरीक,
निर्ब्यलीक मानस-गृह संतत रहे छाई।
अतिसय आनंदमूल तुलसिदास सानुकूल,
हरन सकल सूल, अवध-मंडन रघुराई॥

(८३) राग केदारा

सखि! रघुनाथ-रूप निहारु।
सरद-बिधु रबि-सुवन मनसिज-मानभंजनिहारु॥
स्याम सुभग सरीर जनु मन-काम पूरनिहारु।
चारु चंदन मनहुँ मरकत सिखर लसत निहारु॥
रुचिर उर उपबीत राजत, पदिक गजमनिहारु।
मनहुँ सुरधनु नखत गन बिच तिमिर-भंजनिहारु॥

बिमल पीत दुकूल दामिनि-दुति, बिनिंदनिहारु।
बदन सुखमा सदन सोभित मदन-मोहनिहारु॥
सकल अंग अनूप नहिं कोउ सुकबि बरननिहारु।
दास तुलसी निरखतहि सुख लहत निरखनिहारु॥

❑ ❑

कृष्णलीला

(८४) राग आसावरी

मोकहँ झूठेहु दोष लगावहिं।
मैया! इन्हहिं बानि परगृहकी, नाना जुगुति बनावहिं॥ १॥
इन्हके लिये खेलिबो छाड़्यों तऊ न उबरन पावहिं।
भाजन फोरि, बोरि कर गोरस देन उरहनों आवहिं॥ २॥
कबहुँक बाल रोवाइ पानि गहि मिसकरि उठि-उठि धावहिं।
करहिं आपु सिर धरहिं आनके बचन बिरंचि हरावहिं॥ ३॥
मेरी टेव बूझि हलधरको संतत संग खेलावहिं।
जे अन्याउ करहिं काहूको ते सिसु मोहि न भावहिं॥ ४॥
सुनि-सुनि बचन चातुरी ग्वालिनि हँसि-हँसि बदन दुरावहिं।
बालगोपाल-केलि-कल-कीरति तुलसिदास मुनि गावहिं॥ ५॥

(८५) राग केदारा

गोकुल प्रीति नित नई जानि।
जाइ अनत सुनाइ मधुकर ग्यानगिरा पुरानि॥
मिलहिं जोगी जरठ तिन्हहिं दिखाउ निरगुनखानि।
नवल नंदकुमारके ब्रज सगुन सुजस बखानि॥
तू जो हम आदर्‍यो सो तो नवकमलकी कानि।
तजहि तुलसी समुझि यह उपदेसिबेकी बानि॥

(८६) राग केदारा

हरिको ललित बदन निहारु!
निपटही डाँटति निठुर ज्यों लकुट करतें डारु॥
मंजु अंजन सहित जल-कन चुक्त लोचन-चारु।
स्याम सारस मग मनो ससि स्रवत सुधा-सिंगारु॥
सुभग उर, दधि बुंद सुंदर लखि अपनपौ वारु।
मनहुँ मरकत मृदु सिखरपर लसत बिसद तुषारु॥
कान्हहूँ पर सतर भौंहैं, महरि मनहिं बिचारु।
दास तुलसी रहति क्यों रिस निरखि नंद कुमारु॥

(८७) राग गौरी

टेरि कान्ह गोवर्धन चढ़ि गैया।
मथि मथि पियो बारि चारिकमें
भूख न जाति अघाति न घैया॥ १॥
सैल सिखर चढ़ि चितै चकित चित,
अति हित बचन कह्यो बल भैया।
बाँधि लकुट पट फेरि बोलाई,
सुनि कल बेनु धेनु धुकि धैया॥ २॥
बलदाऊ देखियत दूरिते
आवति छाक पठाई मेरी मैया।
किलकि सखा सब नचत मोर ज्यों
कूदत कपि कुरंगकी नैया॥ ३॥
खेलत खात परस्पर डहकत
छीनत कहत करत रोगदैया।
तुलसी बालकेलि सुख निरखत,
बरसत सुमन सहित सुरसैया॥ ४॥

(८८) राग गौरी

गोपाल गोकुल-बल्लभी-प्रिय, गोप गोसुत बल्लभं।
चरणारविन्दमहं भजे भजनीय सुर-मुनि-दुर्लभं॥
घनश्याम काम अनेक छबि लोकाभिराम मनोहरं।
किंजल्क-बसन किसोर मूरति भूरि गुन करुणाकरं॥
सिर केकिपच्छ, बिलोल कुण्डल अरुण बनरुह लोचनं।
गुंजावतंस विचित्र सब अंग धातु भव भय-मोचनं॥
कच कुटिल सुंदर तिलक भ्रू राका मयंक समाननं।
अपहरण-तुलसीदास त्रास, बिहार वृंदा-काननं॥

❑ ❑

सूरदास—नाम

(८९) राग भैरवी

रे मन, कृष्णनाम कहि लीजै।
गुरुके बचन अटल करि मानहि, साधु समागम कीजै॥
पढ़िये गुनिये भगति भागवत, और कहा कथि कीजै।
कृष्णनाम बिनु जनमु बादिही, बिरथा काहे जीजै॥
कृष्णनाम रस बह्यो जात है, तृषावन्त हैं पीजै।
सूरदास हरिसरन ताकिये, जनम सफल करि लीजै॥

(९०) राग धनाश्री

है हरि नामको आधार।
और या कलिकाल नाहिन, रह्यो बिधि-ब्योहार॥
नारदादि सुकादि संकर, कियो यहै बिचार।
सकल स्रुति दधि मथत पायो इतो यह घृतसार॥
दसहु दिसि गुन करम रोक्यो मीनको ज्यों जार।
सूर हरिके भजन-बलतें मिट गयो भव-भार॥

(९१) राग आसावरी

ताते तुमरो भरोसो आवै।
दीनानाथ पतितपावन जस, बेद उपनिषद गावै॥
जो तुम कहौ कौन खल तार्‍यो तौ हौं बोलौं साखी।
पुत्रहेतु हरिलोक गयो द्विज सक्यो न कोऊ राखी॥
गनिका किये कौन ब्रत संजम, सुक हित नाम पढ़ायौ।
मनसा करि सुमिर्‍यो गज बपुरो, ग्राह परमगति पायौ॥

(९२) राग सारंग

जो तू रामनाम चित धरतौ।
अबको जन्म आगिलो तेरो दोऊ जन्म सुधरतौ॥
जमको त्रास सबै मिटि जातो, भक्त नाम तेरो परतौ।
तंदुल घिरत सँवारि स्यामको संत परोसो करतौ॥
होतो नफा साधुकी संगति मूल गाँठते टरतौ।
सूरदास बैकुंठ पैठमें कोऊ न फैंट पकरतौ॥

(९३) राग सारंग

जो सुख होत गोपालहि गाये।
सो नहिं होत किये जप-तपके कोटिक तीरथ न्हाये॥
दिये लेत नहिं चारि पदारथ, चरन कमल चित लाये।
तीनि लोक तृन सम करि लेखत, नँदनंदन उर आये॥
बंसीबट बृंदाबन जमुना, तजि बैकुंठ को जाये।
सूरदास हरिको सुमिरन करि, बहुरि न भव चलि आये॥

(९४) राग विहागरो

जो पै रामनाम धन धरतो।
टरतौ नहीं जनम जनमान्तर कहा राज जम करतो॥
लेतो करि ब्योहार सबनिसों मूल गाँठमें परतो।
भजन प्रताप सदाई घृत मधु, पावक परे न जरतो॥
सुमिरन गोन बेद बिधि बैठो बिप्र परोहन भरतो।
सूर चलत बैकुण्ठ पेलिकै बीच कौन जो अरतो॥

(९५) राग कान्हरो

तुम्हरी कृपा गोबिंद गुसाँई हौं अपने अज्ञान न जानत।
उपजत दोष नयन नहिं सूझत रबिकी किरन उलूक न मानत॥
सब सुख निधि हरिनाम महामनि सो पायो नाहिन पहिचानत।
परम कुबुद्धि तुच्छ रस लोभी कौड़ी लगि सठ मग रज छानत॥

सिवको धन संतनको सरबसु, महिमा बेद पुरान बखानत।
इते मान यह सूर महासठ हरि-नग बदलि महा-खल आनत॥

❑ ❑

विनय

(९६) राग बागेश्री

जो हम भले-बुरे तौ तेरे।
तुम्हैं हमारी लाज बड़ाई, बिनती सुनु प्रभु मेरे॥
सब तजि तुव सरनागत आयो, निज कर चरन गहे रे।
तुव प्रताप बल बदत न काहू, निडर भये घर चेरे॥
और देव सब रंक भिखारी, त्यागे बहुत अनेरे।
सूरदास प्रभु तुम्हरि कृपा ते पाये सुख जु घनेरे॥

(९७) राग आसावरी

करी गोपालकी सब होइ।
जो अपनो पुरुषारथ मानत, अति झूठो है सोइ॥
साधन मंत्र यंत्र उद्यम बल, यह सब डारहु धोइ।
जो कछु लिखि राखी नँदनंदन, मेटि सकै नहिं कोइ॥
दुख-सुख लाभ-अलाभ समुझि तुम कतहिं मरत हौ रोइ।
सूरदास स्वामी करुनामय, स्यामचरन मन पोइ॥

(९८)

हरि हौं बड़ी बेरको ठाढ़ो।
जैसे और पतित तुम तारे तिनहिन महँ लिखि काढ़ो॥ १॥
जुग-जुग बिरद यही चलि आयो, टेर कहत हौं ताते।
मरियत लाज पंच पतितनमें, हौं धर कहो कहाँते॥ २॥
कै अब हार मानिकर बैठो, कै करु बिरद सही।
सूर पतित जो झूठ कहत है, देखो खोलि बही॥ ३॥

(९९) राग कान्हरो

दीनानाथ अब बार तुम्हारी।
पतित उधारन बिरद जानिकै, बिगरी लेहु सँभारी॥ १॥
बालापन खेलत ही खोयो, जुबा बिषयरस माते।
बृद्ध भयो सुधि प्रगटी मोको दुखित पुकारत ताते॥ २॥
सुतनि तज्यो, तिय तज्यो, भ्रात, तजि तनु त्वच भई जु न्यारी।
स्रवन न सुनत, चरनगति थाकी, नैन भये जल धारी॥ ३॥
पलित केस कफ कंठ बिरोध्यौ कल न परी दिन राती।
माया मोह न छाँड़ै तृस्ना, ए दोऊ दुखदाती॥ ४॥
अब या ब्यथा दूरि करिबैको, और न समरथ कोई।
सूरदास प्रभु करुनासागर, तुमते होइ सु होई॥ ५॥

(१००) राग सारंग

नाथ मोहिं अबकी बेर उबारो।
तुम नाथनके नाथ सुवामी, दाता नाम तिहारो।
करमहीन जनमको अंधो, मोते कौन नकारो॥ १॥
तीन लोकके तुम प्रतिपालक, मैं हूँ दास तिहारो।
तारी जाति कुजाति स्याम तुम मोपर किरपा धारो॥ २॥
पतितनमें इक नायक कहिये, नीचनमें सरदारो।
कोटि पाप इक पासँग मेरे, अजामिल कौन बिचारो॥ ३॥
नाठो धरम नाम सुनि मेरो, नरक दियो हठि तारो।
मोको ठौर नहीं अब कोऊ, अपनी बिरद सम्हारो॥ ४॥
छुद्र पतित तुम तारै रमापति, अब न करो जिय गारो।
सूरदास साचो तब माने, जो ह्वै मम निस्तारो॥ ५॥

(१०१) राग काफी

अबकी टेक हमारी लाज राखो गिरधारी।
जैसी लाज रखी पारथकी भारत जुद्ध मँझारी॥
सारथि होके रथको हाँक्यो, चक्रसुदर्सन-धारी।
भगतकी टेक न टारी॥ अबकी०॥ १॥

जैसी लाज रखी द्रौपदिकी होन न दीन्हि उघारी।
खैंचत खैंचत दोउ भुज थाके, दुस्सासन पचिहारी॥
चीर बढ़ायो मुरारी॥ अबकी०॥ २॥
सूरदासकी लज्जा राखो, अब को है रखवारी।
राधे राधे श्रीवर प्यारी, श्रीवृषभानु दुलारी॥
सरन तकि आयो तुम्हारी॥ अबकी०॥ ३॥

(१०२) राग आसावरी

दीनन दुखहरन देव, संतन सुखकारी।
अजामील गीध ब्याध, इनमें कहो कौन साध,
पंछीहू पद पढ़ात गनिका-सी तारी॥
ध्रुवके सिर छत्र देत, प्रह्लाद कहँ उबार लेत,
भगत हेत बाँध्यो सेत, लंकापुरी जारी॥
तंदुल देत रीझ जात, सागपातसों अघात,
गिनत नहिं जूठे फल खाटे-मीठे-खारी॥
गजको जब ग्राह ग्रस्यो, दुस्सासन चीर खस्यो,
सभा बीच कृष्ण कृष्ण, द्रौपदी पुकारी॥
इतनेमें हरि आइ गये, बसनन आरूढ़ भये;
सूरदास द्वारे ठाढ़ो, आँधरो भिखारी॥

(१०३)

तुम तजि और कौन पै जाऊँ।
काके द्वार जाइ सिर नाऊँ, पर हथ कहाँ बिकाऊँ॥ १॥
ऐसो को दाता है समरथ, जाके दिये अघाऊँ।
अंतकाल तुमरो सुमिरन गति, अनत कहूँ नहिं पाऊँ॥ २॥
रंक अयाची कियो सुदामा, दियो अभय पद ठाऊँ।
कामधेनु चिंतामनि दीनो, कलप-बृच्छ तर छाऊँ॥ ३॥
भवसमुद्र अति देखि भयानक, मनमें अधिक डराऊँ।
कीजै कृपा सुमिरि अपनो पन, सूरदास बलि जाऊँ॥ ४॥

(१०४)

अब कैसे दूजे हाथ बिकाऊँ।
मन-मधुकर कीनों वा दिनतें, चरन-कमल निज ठाऊँ॥ १॥
जो जानों औरै कोउ कर्ता तऊ न मन पछिताऊँ।
जो जाको सोई सो जानै, अघतारन नर नाऊँ॥ २॥
या परतीति होय या जुगकी, परमित छुटत डराऊँ।
सूरदास प्रभु सिंधु सरन तजि, नदी-सरन कत जाऊँ॥ ३॥

(१०५) राग आसावरी

अबकी राखि लेहु भगवान।
हम अनाथ बैठे द्रुम-डरियाँ, पारधि साध्यो बान॥ १॥
ताके डर निकसन चाहत हैं, ऊपर रह्यो सचान।
दुहूँ भाँति दुख भयो कृपानिधि, कौन उबारै प्रान॥ २॥
सुमिरत ही अहि डस्यो पारधी, लाग्यो तीर सचान।
सूरदास गुन कहँ लग बरनौ, जै जै कृपानिधान॥ ३॥

(१०६) राग सारंग

अपनी भगति दे भगवान।
कोटि लालच जो दिखावहु नाहिनै रुचि आन॥
जरत ज्वाला, गिरत गिरिते, स्वकर काटत सीस।
देखि साहस सकुच मानत राखि सकत न ईस॥
कामना करि कोपि कबहूँ करत कर पसु घात।
सिंह सावक जात गृह तजि, इन्द्र अधिक डरात॥
जा दिनातें जनमु पायों यहै मेरी रीति।
बिषय बिष हठि खात नाहीं डरत करत अनीति॥
थके किंकर जूथ जमके टारे टरत न नेक।
नरक-कूपनि जाइ जमपुर पर्‌यो बार अनेक॥
महा माचल मारिबेकी सकुच नाहिन मोंहि।
पर्‌यो हौं पन किये द्वारे लाज पनकी तोंहि॥

नाहिनै काँचो कृपानिधि करौ कहा रिसाइ।
सूर तबहुँ न द्वार छाँड़ै डारिहौ कढ़राइ॥

(१०७) राग धनाश्री

अपनेको को न आदर देय।
ज्यों बालक अपराध कोटि करै मात न मारै तेय॥
तेय बेली कैसें दहियतु है जो अपने रस भेय।
श्रीसंकर बहु रतन त्यागिकें बिषहिं कंठ लपटेय॥
माता अछत छीर बिनु सुत मरै अजाकंठ कुच सेय।
जद्यपि सूर महापतित है पतितपावन तुम तेय॥

(१०८) राग बिलावल

अबके माधव मोहि उधारि।
मगन हौं भव-अंबु-निधिमें कृपासिंधु मुरारि॥
नीर अति गम्भीर माया, लोभ लहरि तरंग।
लिये जात अगाध जलमें गहे ग्राह अनंग॥
मीन इंद्रिय अतिहि काटत मोट अघ सिर भार।
पग न इत उत धरन पावत उरझि मोह सेवार॥
काम क्रोध समेत तृस्ना पवन अति झकझोर।
नाहिं चितवन देत तिय सुत नाम-नौका ओर॥
थक्यो बीच बेहाल बिहबल सुनहु करुना मूल।
स्याम भुज गहि काढ़ि डारहु सूर ब्रजके कूल॥

(१०९) राग धनाश्री

अब मोहि भीजत क्यों न उबारो।
दीनबन्धु करुनामय स्वामी जनके दु:ख निवारो॥
ममता घटा, मोहकी बूँदें, सरिता मैन अपारो।
बूड़त कतहुँ थाह नहिं पावत गुरुजन ओट अधारो॥
गरजन क्रोध, लोभको नारो सूझत कहुँ न उधारो।
तृसना तड़ित चमकि छिन ही छिन अह निसि यह तन जारो॥

यह सब जल कलिमलहिं गहे है बोरत सहस प्रकारो।
सूरदास पतितनको संगी बिरदहिं नाथ सम्हारो॥

(११०) राग कान्हरो

ऐसो कब करिहो गोपाल।
मनसा नाथ मनोरथ दाता हौ प्रभु दीनदयाल॥
चित्त निरंतर चरनन अनुरत रसना चरित रसाल।
लोचन सजल प्रेम पुलकित तन कर-कंजनि-दल-माल॥
ऐसे रहत, लिखै छिनु छिनु जम अपनौ भायो जाल।
सूर सुजस रागी न डरत मन सुनि जातना कराल॥

(१११) राग धनाश्री

ऐसे प्रभु अनाथके स्वामी।
कहियत दीन दास पर-पीरक सब घट अन्तरजामी॥
करत बिबस्त्र द्रुपद-तनयाको 'सरन' शब्द कहि आयो।
पूर्ण अनंत कोटि परिबसननि अरिको गरब गँवायो॥
सुत हित बिप्र, कीर हित गनिका, परमारथ प्रभु पायो।
छन चितवन साप संकट ते गज ग्राह ते छुटायो॥
तब तव पद न देखि अविगतको जन लगि बेष बनायो।
जे जन दुखी जानि भए ते रिपु हति हति सुख उपजायो॥
तुम्हरि कृपा जदुनाथ गुसाईं किहि न आसु सुख पायो।
सूरदास अंध अपराधी सो काहे बिसरायो॥

(११२) राग सारंग

कौन गति करिहौ मेरी नाथ।
हौं तो कुटिल कुचाल कुदरसन रहत बिषयके साथ॥
दिन बीतत मायाके लालच कुल कुटुंबके हेत।
सारी रैन नींद भरि सोवत जैसे पसू अचेत॥
कागज धरनि करै द्रुम लेखनि जल सायर मसि घोर।
लिखैं गनेस जनमभरि ममकृत तऊ दोष नहिं ओर॥

गज गनिका अरु बिप्र अजामिल अगनित अधम उधारे।
अपथै चलि अपराध करे मैं तिनहूँ ते अति भारे॥
लिखि लिखि मम अपराध जनमके चित्रगुप्त अकुलायो।
भृगुऋषि आदि सुनत चकित भये जम सुनि सीस डुलायो॥
परम पुनीत पवित्र कृपानिधि पावन नाम कहायो।
सूर पतित जब सुन्यो बिरद यह तब धीरज मन आयो॥

(११३) राग कल्याण

जैसेहि राखौ तैसेहि रहौं।
जानत हौ सब दुख-सुख जनकौ मुखकरि कहा कहौं॥
कबहुँक भोजन देत कृपाकरि कबहुँक भूख सहौं।
कबहुँक चढ़ौं तुरंग महागज कबहुँक भार बहौं॥
कमलनयन घनस्याम मनोहर अनुचर भयो रहौं।
सूरदास प्रभु भगत कृपानिधि तुम्हरे चरन गहौं॥

(११४) राग धनाश्री

नाथजू अबकै मोहि उबारो।
पतितनमें बिख्यात पतित हौं पावन नाम तुम्हारो॥
बड़े पतित नाहिन पासंगहु अजामेलको जु बिचारो।
भाजैं नरक नाउ मेरो सुनि जमहु देय हठि तारो॥
छुद्र पतित तुम तारे श्रीपति अब न करो जिय गारो।
सूरदास साँचो तब माने जब होय मम निस्तारो॥

(११५) राग नट

प्रभु मेरे अवगुन चित न धरो।
समदरसी प्रभु नाम तिहारो अपने पनहि करो॥
इक लोहा पूजामें राखत इक घर बधिक परो।
यह दुबिधा पारस नहिं जानत कंचन करत खरो॥
एक नदिया एक नार कहावत मैलो नीर भरो।
जब मिलिकै दोउ एक बरन भए सुरसरि नाम परो॥

एक जीव इक ब्रह्म कहावत सूर स्याम झगरो।
अबकी बेर मोहि पार उतारो नहिं पन जात टरो॥

(११६) राग केदारा

बंदौं चरन सरोज तुम्हारे।
जे पदपदुम सदासिवके धन सिंधुसुता उरतें नहिं टारे॥
जे पदपदुम परसि भइ पावन सुरसरि दरस कटत अघ भारे॥
जे पदपदुम परसि ऋषि-पत्नी, बलि, नृप, ब्याध-पतित बहु तारे।
जे पदपदुम रमत बृंदाबन अहि सिर धरि अगनित रिपु मारे॥
जे पदपदुम परसि ब्रज भामिनि, सरबसु दै सुत सदन बिसारे।
जे पदपदुम रमत पांडव दल दूत भये सब काज सँवारे।
सूरदास तेई पदपंकज त्रिबिध ताप दुख हरन हमारे॥

(११७) राग धनाश्री

बिनती जन कासों करै गुसाँई।
तुम बिनु दीनदयालु, देवतन सब फीकी ठकुराई॥
अपने-से कर चरन नैन मुख अपनी-सी बुधि बाई।
काल करम बस फिरत सकल प्रभु ते हमरी ही नाईं॥
पराधीन परबदन निहारत मानत मोह बड़ाई।
हँसे हँसैं, बिलखैं लखि पर दुख ज्यों जलदर्पन झाई॥
लियो दियो चाहै जो कोऊ सुनि समरथ जदुराई।
देव सकल ब्यापार निरत नित ज्यों पसु दूध चराई॥
तुम बिनु और न कोउ कृपानिधि पावै पीर पराई।
सूरदासके त्रास हरनको कृष्ण नाम प्रभुताई॥

(११८) राग बिहागरो

भजु मन चरन संकटहरन॥
सनक संकर ध्यान लावत निगम असरन सरन।
सेस सारद कहैं नारद संत चिंतत चरन॥
पद पराग प्रताप दुरलभ रमा को हितकरन।
परसि गंगा भई पावन तिहूँ पुर उद्धरन॥

चित्त चेतत करत, अन्त:करन तारन तरन।
गए तरि लै नाम केते संत हरि पुर घरन॥
जासु पदरज परसि गौतम-नारि गति उद्धरन।
जासु महिमा प्रगट कहत न धोइ पग सिर धरन॥
कृष्णपद मकरंद पावत और नहिं सिर परन।
सूर प्रभु चरनारबिंदतें मिटै जन्मरु मरन॥

(११९) राग सारंग

माधव! मोहि काहेकी लाज?
जनम जनम ह्वै रहो मैं ऐसौ अभिमानी बेकाज॥
कोटिक कर्म किये करुनामय या देहीके साज।
निसिबासर बिषयारत रुचितें कबहुँ न आयो बाज॥
बहुत बार जल थल जग जायो भ्रम आयो दिन देव।
औगुनकी कछु सकुच न संका परि आई यह टेव॥
अब अनखाय कहौं घर अपने राखो बाँधि बिचारि।
सूर स्वानके पालनहारे लावत है दिन गारि॥

(१२०) राग रामकली

सरन गयेको को न उबार्‌यो?
जब जब भीर परी भगतनपै चक्रसुदरसन तहाँ सँभार्‌यो॥
भयो प्रसाद जु अंबरीषपै दुरबासाको क्रोध निवार्‌यो।
ग्वालन हेतु धर्‌यो गोबर्धन, प्रगट इंद्रको गर्व प्रहार्‌यो॥
करी कृपा प्रह्लाद भगतपै खंभ फारि उर नखन बिदार्‌यो।
नरहरिरूप धर्‌यो करुना करि छिनक माहिं हिरनाकुस मार्‌यो॥
ग्राह ग्रसित गजको जल बूड़त नाम लेत तुरतै दुख टार्‌यो।
सूर स्याम बिनु और करै को रंगभूमिमें कंस पछार्‌यो॥

(१२१) राग धनाश्री

हमें नँदनंदन मोल लियो।
जमकी फाँसि काटि मुकरायो अभय अजात कियो॥
मूड़ मुड़ाय कंठ बन माला चक्रके चिन्ह दियो।
माथे तिलक स्रवन तुलसीदल मेटेव अंग बियो॥
सब कोउ कहत गुलाम स्यामको सुनत सिहात हियो।
सूरदास प्रभुजूको चेरो जूठनि खाय जियो॥

(१२२) राग नट

हरिसों ठाकुर और न जनको।
जेहि जेहि बिधि सेवक सुख पावै तेहि बिधि राखत तिनको॥
भूखे बहु भोजन जु उदरको, तृषा तोय, पट तनको।
लग्यो फिरत सूरति ज्यों सुतसँग, उचित गमन गृह बनको॥
परम उदार चतुर चिंतामन कोटि कुबेर निधनको।
राखत है जनकी परतिग्या हाथ पसारत कनको॥
संकट परे तुरत उठि धावत परम सुभट निज पनको।
कोटिक करै एक नहिं मानै, सूर महा कृतघनको॥

(१२३) राग धनाश्री

हरिको मीत न देखौं कोई।
अंतकाल सुमिरत तेहि अवसर आनि प्रतिच्छो होई॥
ग्राह गहे गजपति मुकरायो हाथ चक्र लै धायो।
तजि बैकुंठ गरुड़ तजि श्री तजि निकट दासके आयो॥
दुरबासाको साप निवार्‌यो अंबरीष पति राखी।
ब्रह्मलोक परजंत फिर्‌यो तहँ, देव मुनीजन साखी॥
लाखा गृहतें जरत पांडु-सुत बुधि बल नाथ उबारे।
सूरदास प्रभु अपने जनके नाना त्रास निवारे॥

(१२४) राग देवगंधार

तुम मेरी राखो लाज हरी।
तुम जानत सब अंतरजामी, करनी कछु न करी॥
औगुन मोते बिसरत नाहीं, पल छिन घरी घरी।
सब प्रपंचकी पोट बाँधि कै, अपने सीस धरी॥
दारा-सुत-धन मोह लिये हैं, सुधि-बुधि सब बिसरी।
सूर पतित को बेग उधारो, अब मेरी नाव भरी॥

(१२५) राग बिलावल

तुम गोपाल मोसों बहुत करी।
नर देही दीनी सुमिरनको मो पापीते कछु न सरी॥ १॥
गरभ-बास अति त्रास अधोमुख तहाँ न मेरो सुधि बिसरी।
पावक जठर जरन नहिं दीनों कंचन-सी मेरी देह करी॥ २॥
जगमें जनमि पाप बहु कीने आदि-अंत लौं सब बिगरी।
सूर पतित तुम पतित उधारन अपने बिरदकी लाज धरी॥ ३॥

❑ ❑

दैन्य

(१२६) राग सारंग

हरि हौं सब पतितनको राव।
को करि सकै बराबरि मेरी, सो तौ मोहि बताव॥
ब्याध गीध अरु पतित पूतना, तिनमहँ बढ़ि जो और।
तिनमें अजामील गनिका पति, उनमें मैं सिरमौर॥
जहँ तहँ सुनियत यहै बड़ाई, मो समान नहिं आन।
अब रहे आजु कालिके राजा, मैं तिनमें सुलतान॥
अबलौं तो तुम बिरद बुलायो, भई न मोसों भेंट।
तजौ बिरद कै मोहि उधारो, सूर गही कसि फेंट॥

सूर तुम्हारी ऐसे निबही, संकटके तुम साथी।
ज्यों जानों त्यों करो दीनकी, बात सकल तुम हाथी॥ ६॥

(१३३) राग नट

हैं प्रभु! मोहूँ तें बढ़ि पापी?
घातक कुटिल चबाई कपटी मोह क्रोध संतापी॥ १॥
लंपट भूत पूत दमरीकौ बिषय जाप नित जापी।
काम बिबस कामिनिहीके रस हठ करि मनसा थापी॥ २॥
भच्छ अभच्छ अपै पीवनको लोभ लालसा धापी।
मन क्रम बचन दुसह सबहिन सों कटुक बचन आलापी॥ ३॥
जेते अधम उधारे प्रभु तुम मैं तिन्हकी गति मापी।
सागर सूर बिकार जल भरो बधिक अजामिल बापी॥ ४॥

(१३४) राग सारंग

हरि हौं सब पतितनको नायक।
को करि सकै बराबरि मेरी और नहीं कोउ लायक॥
जैसो अजामीलको दीनो सोइ पटो लिखि पाऊँ।
तौ बिस्वास होइ मन मेरे औरौ पतित बुलाऊँ॥
यह मारग चौगुनो चलाऊँ तो पूरो ब्योपारी।
बचन मानि लै चलों गाँठि दै पाऊँ सुख अति भारी॥
यह सुनि जहाँ तहाँते सिमटैं आइ होइ एक ठौर।
अबकी तौ अपनी लै आयों बेरि बहुरिकी और॥
होड़ा होड़ी मन हुलास करि किये पाप भरि पेट।
सबै पतित पायन तर डारौं इहै हमारी भेंट॥
बहुत भरोसो जानि तुम्हारो अघ कीन्हें भरि भाँड़ो।
लीजै नाथ निबेर तुरंतहिं सूर पतितको टाँड़ो॥

(१३०) राग धनाश्री

पतितपावन हरि बिरद तुम्हारो कौने नाम धर्‍यो।
हौं तो दीन-दुखित अति दुर्बल द्वारे रटत पर्‍यो॥
चारि पदारथ दये सुदामहि तंदुल भेंट धर्‍यो।
द्रुपद-सुताकी तुम पति राखी अंबर दान कर्‍यो॥
संदीपन-सुत तुम प्रभु दीने बिद्या पाठ कर्‍यो।
सूरकी बिरियाँ निठुर भये प्रभु मोतें कछु न सर्‍यो॥

(१३१) राग सारंग

प्रभु हौं सब पतितनको राजा।
पर निंदा मुख पूरि रह्यो, जग यह निसान नित बाजा॥
तृषना देसरु सुभट मनोरथ इंद्रिय खड़्ग हमारे।
मंत्री काम कुमत दैबेको क्रोध रहत प्रतिहारे॥
गज अहँकार चढ़्यो दिग-बिजयी लोभ छत्र धरि सीस।
फौज असत-संगतिकी मेरी ऐसो हौं मैं ईस॥
मोह मदै बंदी गुन गावत मागध दोष अपार।
सूर पापको गढ़ दृढ़ कीनो मुहकम लाइ किंवार॥

(१३२) राग सारंग

तुम हरि साँकरेके साथी।
सुनत पुकार परम आतुर ह्वै दौरि छुड़ायो हाथी॥ १॥
गर्भ परिच्छित रच्छा कीन्हीं बेद उपनिषद साखी।
बसन बढ़ाय द्रुपद-तनयाके, सभा माँझ पत राखी॥ २॥
राज-रवनि गाई ब्याकुल ह्वै, दै दै सुतका धीरक।
मागध हति राजा सब छोरे, ऐसे प्रभु पर पीरक॥ ३॥
कपट-स्वरूप धर्‍यो जब कोकिल नृप प्रतीति कर मानी।
कठिन परी तबहीं प्रभु प्रगटे, रिपु हति सब सुखदानी॥ ४॥
ऐसे कहौं कहाँ लौं गुन, गन, लिखित अंत नहिं पइये।
कृपासिंधु उनहीके लेखे, मम लज्जा निरबहिये॥ ५॥

(१२७)

अब मैं नाच्यौं बहुत गुपाल।
काम क्रोधको पहिरि चोलना, कंठ बिषयकी माल॥ १॥
महा मोहके नूपुर बाजत, निंदा शब्द रसाल।
भरम भर्‌यो मन भयो पखावज, चलत कुसंगत चाल॥ ३॥
तृष्ना नाद करत घट भीतर, नाना बिधि दै ताल।
मायाको कटि फेंटा बाध्यो लोभ तिलक दै भाल॥ ३॥
कोटिक कला काँछि देखराई, जलथल सुधि नहिं काल।
सूरदासकी सबै अबिद्या, दूरि करौं नँदलाल॥ ४॥

(१२८) राग आसावरी

मो सम कौन कुटिल खल कामी।
जिन तनु दियो ताहि बिसरायो, ऐसो नमकहरामी॥ १॥
भरि-भरि उदर बिषयकों धायो जैसे सूकर-ग्रामी।
हरिजन छाँड़ि हरी बिमुखनकी निसि दिन करत गुलामी॥ २॥
पापी कौन बड़ो जग मोते सब पतितनमें नामी।
सूर पतितको ठौर कहाँ है, तुम बिनु श्रीपति स्वामी॥ ३॥

(१२९) राग भैरवी

सुने री मैंने निरबलके बल राम।
पिछली साख भरूँ संतनकी, अड़े सँवारे काम॥ १॥
जब लगि गज बल अपनो बरत्यो, नेक सर्‌यो नहिं काम।
निरबल ह्वै बल राम पुकार्‌यो आये आधे नाम॥ २॥
द्रुपद सुता निरबल भइ ता दिन, तजि आये निज धाम।
दुस्सासनकी भुजा थकित भई, बसन रूप भये स्याम॥ ३॥
अप-बल, तप-बल और बाहु-बल, चौथो है बल दाम।
सूर किसोर-कृपातें सब बल हारेको हरिनाम॥ ४॥

(१३५) राग धनाश्री

तुम कब मोसो पतित उधार्‌यो।
काहेको प्रभु बिरद बुलावत बिनु मसकतको तार्‌यो॥
गीध ब्याध पूतना जो तारी तिनपर कहा निहोरो।
गनिका तरी आपनी करनी नाम भयो प्रभु तोरो॥
अजामील द्विज जनम जनमको हुतो पुरातन दास।
नेक चूकतें यह गति कीन्ही पुनि बैकुण्ठहि बास॥
पतित जानिकै सब जन तारे रही न काहू खोट।
तौ जानौं जो मोकहँ तारो सूर कूर कबि ढोट॥

❑ ❑

चेतावनी

(१३६) राग आसावरी

छाँड़ि मन हरि बिमुखन को संग।
जिनके संग कुबुधि उपजति है परत भजनमें भंग॥
कहा होत पय पान कराये, बिष नहिं तजत भुजंग।
कागहि कहा कपूर चुगाये स्वान न्हवाये गंग॥
खरको कहा अरगजा-लेपन, मरकट भूषन अंग।
गजको कहा न्हवाये सरिता बहुरि धरै खहि छंग॥
पाहन पतित बाँस नहिं बेधत, रीतो करत निषंग।
सूरदास खल कारी कामरि, चढ़त न दूजो रंग॥

(१३७) राग आसावरी

भजन बिनु कूकर सूकर जैसो।
जैसे घर बिलावके मूसा, रहत बिषय-बस तैसो॥
बकी और बक गीध गीधनी, आइ जनम लिय वैसो।
उनहूँके ये सुत दारा हैं, इन्हैं भेद कहु कैसो॥
जीव मारिकैं उदर भरत हैं, तिनके लेखे ऐसो।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, मनो ऊँट खर भैंसो॥

(१३८) राग आसावरी

भगति बिनु बैल बिराने ह्वैहौ॥
पाँव चारि, सिर सींग, गूँग मुख, तब गुन कैसे गैहौ।
टूटे कंध सु-फूटी नाकनि, कौ लौं धौं भुस खैहौ॥
लादत जोतत लकुट बाजिहै तब कहँ मूड़ दुरैहौ।
सीत घाम घन बिपति बहुत बिधि, भार तरे मरि जैहौ॥
हरि-दासनको कह्यो न मानत, कियो आपनो पैहौ।
सूरदास भगवंत-भजन बिनु, मिथ्या जनम गँवैहौ॥

(१३९) राग भीमपलासी

रे मन जनम पदारथ जात।
बिछुरे मिलन बहुरि कब ह्वै हैं ज्यौं तरुवरके पात॥ १॥
सन्निपात कफ कंठ बिरोधी, रसना टूटी जात।
प्रान लिये जम जात मूढ़मति, देखत जननी तात॥ २॥
छिन इक माँहि कोटि जुग बीतत फेरि नरककी बात।
यह जग प्रीति सुआ सेमरकी चाखत ही उड़ि जात॥ ३॥
जमके फंद नहीं पड़ु बौरे, चरनन चित्त लगात।
कहत सूर बिरथा यह देही, अंतर क्यों इतरात॥ ४॥

(१४०) राग धनाश्री

सबै दिन गये बिषयके हेत।
तीनौ पन ऐसे ही बीते, केस भये सिर सेत॥
आँखिन अंध श्रवन नहिं सुनियत, थाके चरन समेत।
गंगाजल तजि पियत कूप जल, हरि तजि पूजत प्रेत॥
रामनाम बिनु क्यों छूटोगे, चंद्र गहे ज्यों केत।
सूरदास कछु खरच न लागत, रामनाम मुख लेत॥

(१४१)

सोई भलो जो रामहिं गावै।
स्वपच प्रसन्न होइ बड़ सेवक, बिनु गुपाल द्विज जन्म न भावै॥ १॥
बाद-बिबाद जग्य ब्रत साधै, कतहूँ जाइ जन्म डहकावै।
होइ अटल जगदीस-भजनमें, सेवा तासु चारि फल पावै॥ २॥
कहूँ ठौर नहिं चरन-कमल बिनु, भृंगी ज्यों दसहूँ दिसि धावै।
सूरदास प्रभु संत-समागम, आनँद अभय निसान बजावै॥ ३॥

(१४२)

सबै दिन नाहिं एक-से जात।
सुमिरन ध्यान कियो करि हरिको, जब लगि तन कुसलात॥ १॥
कबहूँ कमला चपला पाके, टेढ़े टेढ़े जात।
कबहुँक मग-मग धूरि टटोरत, भोजनको बिलखात॥ २॥
या देहीके गरब बावरो, तदपि फिरत इतरात।
बाद-बिबाद सबै दिन बीते, खेलत ही अरु खात॥ ३॥
हौं बड़, हौं बड़, बहुत कहावत, सूधे करत न बात।
जोग न जुगुति ध्यान नहिं पूजा, बृद्ध भये अकुलात॥ ४॥
बालापन खेलत ही खोयो, तरुनापन अलसात।
सूरदास अवसरके बीते, रहिहौ पुनि पछितात॥ ५॥

(१४३)

रे मन मूरख जनम गँवायो।
कर अभिमान बिषयसों राच्यों, नाम सरन नहिं आयो॥ १॥
यह संसार फूल सेमरको सुंदर देखि लुभायो।
चाखन लाग्यो रूई उड़ि गइ, हाथ कछू नहिं आयो॥ २॥
कहा भयो अबके मन सोचे, पहिले नाहिं कमायो।
सूरदास हरि नाम-भजन बिनु सिर धुनि-धुनि पछितायो॥ ३॥

(१४४)

जा दिन मन पंछी उड़ि जैहैं।
ता दिन तेरे तन-तरुवरके सबै पात झरि जैहैं॥ १॥
घरके कहिहैं बेगहिं काढ़ो, भूत भये कोउ खैहैं।
जा प्रीतमसों प्रीति घनेरी, सोऊ देखि डरैहैं॥ २॥
कहँ वह ताल कहाँ वह शोभा, देखत धूरि उड़ैहैं।
भाई बन्धू कुटुँब कबीला, सुमिरि-सुमिरि पछितैहैं॥ ३॥
बिना गुपाल कोऊ नहिं अपनों, जस कीरति रहि जैहैं।
सो तो सूर दुर्लभ देवनको, सत-संगति महँ पैहैं॥ ४॥

(१४५) राग बागेश्री

हरि बिन कौन दरिद्र हरै!
कहत सुदामा सुन सुंदरि जिय मिलन न हरि बिसरै॥
और मित्र ऐसे कुसमै महँ कत पहिचान करै।
बिपति परे कुसलात न बूझै, बात नहीं उचरै॥
उठिके मिले तंदुल हम दीन्हें, मोहन बचन फुरै।
सूरदास स्वामीकी महिमा, बिधि टारी न टरै॥

(१४६) राग टोडी

अजहूँ सावधान किन होहि।
माया बिषम भुजंगिनिको बिष उतर्‌यो नाहिन तोहि॥
कृष्ण सुमंत्र सुद्ध बन मूरी जिहि जन मरत जिवायो।
बार-बार स्त्रवनन समीप होइ गुरु गारुड़ी सुनायो॥
जाग्यौ, मोह मैर मति छूटी सुजस गीतके गाए।
सूर गई अग्यान, मूरछा ग्यान-सुभेषज खाए॥

(१४७) राग मलार

ऐसी करत अनेक जनम गये मन संतोष न पायो।
दिन दिन अधिक दुरासा लागी सकल लोक फिरि आयो॥ १॥
सुनि सुनि स्वर्ग रसातल भूतल तहीं तहीं उठि धायो।
काम क्रोध मद लोभ अगिन ते जरत न काहु बुझायो॥ २॥

स्त्रक चंदन बनिता बिनोद सुख यह जुर जरत बितायो।
मैं अजान अकुलाइ अधिक लै जरत माँझ घृत नायो॥ ३॥
भ्रमि भ्रमि हौं हार्‌यो हिय अपने देखि अनल जग छायो।
सूरदास प्रभु तुम्हरि कृपा बिनु कैसे जात बुतायो॥ ४॥

(१४८) राग बिलावल

कहा कमी जाके रामधनी?
मनसा नाथ मनोरथ-पूरन सुखनिधान जाकी मौज घनी॥ १॥
अर्थ धर्म अरु काम मोच्छ फल चार पदारथ देत छनी।
इन्द्र समान हैं जाके सेवक मो बपुरेकी कहा गनी॥ २॥
कहौ कृपनकी माया कितनी करत फिरत अपनी अपनी।
खाइ न सकै खरच नहिं जानै ज्यों भुजंग सिर रहत मनी॥ ३॥
आनँद मगन रामगुन गावैं दुख संतापकी काटि तनी।
सूर कहत जे भजत रामको तिन सों हरिसों सदा बनी॥ ४॥

(१४९) राग धनाश्री

कितक दिन हरि सुमिरन बिनु खोये।
पर निंदा रसमें रसनाके जपने परत डबोये॥
तेल लगाइ कियो रुचि मर्दन बस्त्रहिं मलि मलि धोये।
तिलक लगाइ चले स्वामी बनि बिषयनिके मुख जोये॥
काल बलीते सब जग कंपत ब्रह्मादिक हू रोये।
सूर अधमकी कहौ कौन गति उदरि भरे पर सोये॥

(१५०) राग बागेश्री

मो सम पतित न और गुसाईं!
औगुन मोते अजहुँ न छूटत, भली, तजी अब ताईं॥
जनम-जनम योंही भ्रमि आयो, कपि-गुंजाकी नाईं।
परसत सीत जात नहिं क्योंहू, लै लै निकट बनाईं॥
मोह्यो जाइ कनक-कामिनिसों, ममता मोह बढ़ाई।
रसना स्वादु मीन ज्यों उरझी सूझत नहिं फंदाई॥

सोवत मुदित भयो सुपनेमें पाई निधि जो पराई।
जागि पर्‌यो कछु हाथ न आयो, यह जगकी प्रभुताई॥
परसे नाहि चरन गिरिधरके बहुत करी अनिआई।
सूर पतितकों ठौर और नहिं राखिलेउ सरनाई॥

(१५१) राग केदारो

तुम्हरो कृष्ण कहत कहा जात।
बिछुरे मिलन बहुरि कब ह्वैहैं ज्यों तरवरके पात॥
सीत बायु कफ कंठ बिरोध्यौ रसना टूटी बात।
प्रान लिये जम जात मूढ़ मति देखत जननी तात॥
छिनु एक माँह कोटि जुग बीतत, नरककी पाछे बात।
यह जग प्रीति सुआ सेमर ज्यों चाखत ही उड़ि जात॥
जमकी त्रास नियर नहिं आवत चरनन चित्त लगात।
गावत सूर बृथा या देही इतनौ कत इतरात॥

❑ ❑

भक्त-महिमा

(१५२)

हम भगतनके भगत हमारे।
सुन अरजुन परतिग्या मोरी यह ब्रत टरत न टारे॥
भगतन काज लाज हिय धरिकैं पाँय पियादे धायौ।
जहँ-जहँ भीर परै भगतनपै तहँ-तहँ होत सहायौ॥
जो भगतनसों बैर करत है सो निज बैरी मेरो।
देख बिचार भगत-हित कारन हाँकत हौं रथ तेरो॥
जीते जीत भगत अपनेकी हारे हार बिचारों।
सूर स्याम जो भगत-बिरोधी चक्र सुदरसन मारों॥

❑ ❑

महिमा

(१५३) राग देवगंधार

जाको मनमोहन अंग करै।
ताको केस खसै नहि सिरतें जो जग बैर परै॥
हिरनकसिपु परहारि थक्यो प्रहलाद न नेकु डरै।
अजहूँ सुत उत्तानपादको राज करत न टरै॥
राखी लाज द्रुपदतनयाकी कुरुपति चीर हरै।
दुर्योधनको मान भंग करि बसन प्रबाह भरै॥
बिप्र भगत नृप अंधकूप दियो, बलि पढ़ि बेद छरै।
दीन दयालु कृपालु दयानिधि कापै कह्यो परै॥
जब सुरपति कोप्यो ब्रज ऊपर कहिहू कछु न सरै।
राखे ब्रजजन नँदके लाला गिरिधर बिरद धरै॥
जाको बिरद है गरब प्रहारी सो कैसे बिसरै।
सूरदास भगवंत-भजन करि, सरन गहे उधरै॥

❑ ❑

प्रकीर्ण

(१५४) राग कान्हरो

अविगत गति कछु कहत न आवै।
ज्यों गूँगेहि मीठे फलको रस अंतरगत ही भावै॥
परम स्वाद सब ही जु निरंतर अमित तोष उपजावै।
मन बानीको अगम अगोचर सो जानै जो पावै॥
रूप रेख गुन जाति जुगुति बिनु निरालंब मन चकृत धावै।
सब बिधि अगम बिचारहिं तातें सूर सगुन लीलापद गावै॥

(१५५) राग धनाश्री

दयानिधि तेरी गति लखि न परै।
धर्म अधर्म, अधर्म धर्म करि अकरन करन करै॥
जय अरु बिजय पाप कह कीनो ब्राह्मन साप दिवायो।
असुरजोनि दीनी ताऊपर धरम उछेह करायो॥

पिता बचन छंडै सो पापी सो प्रहलादै कीन्हो।
तिनके हेत खंभते प्रगटे नरहरि रूप जु लीन्हो॥
द्विज कुलपतित अजामिल बिषयी गनिका प्रीति बढ़ाई।
सुत हित नाम नरायन लीनो तिहि तुव पदवी पाई॥
जग्य करत बैरोचनको सुत बेद बिहित बिधि कर्म।
तिहि हठ बाँधि पतालहि दीनो कौन कृपानिधि धर्म॥
पतिबरता जालंधर जुबती प्रगटि सत्य तें टारी।
अधम पुंसचली दुष्ट ग्रामकी सुआ पढ़ावत तारी॥
दानी धर्म भानुसुत सुनियत तुमतें बिमुख कहावैं।
बेद बिरुद्ध सकल पांडव-सुत सो तुम्हरे जिय भावैं॥
मुक्ति हेतु जोगी बहु स्रम करै, असुर बिरोधे पावै।
अकथित कथित तुम्हारी महिमा सूरदास कह गावै॥

❑ ❑

वेदान्त

(१५६) राग आसावरी

अपुनपो आपुन ही बिसर्‌यो।
जैसे स्वान काँच-मंदिरमें भ्रमि भ्रमि भूसि मर्‌यो॥
हरि सौरभ मृग नाभि बसतु है, द्रुमतृन सूँघि मर्‌यो।
ज्यों सपनेमें रंक भूप भयो तसकरि अरि पकर्‌यो॥
ज्यों केहरि प्रतिबिंब देखिकैं, आपुन कूप पर्‌यो।
ऐसे गज लखि फटिक-सिलामें, दसनन जाइ अर्‌यो॥
मरकट मूठि छाँड़ि नहिं दीनी, घर-घर द्वार फिर्‌यो।
सूरदास नलिनीको सुवटा, कहि कौने जकर्‌यो॥

❑ ❑

लीला

(१५७) राग बिलावल

जागिये ब्रजराजकुँअर कमल कुसुम फूले।
कुमुद-बृंद सकुचित भये भृंग लता फूले॥ १॥
तमचुर खग रौर सुनहु बोलत बनराई।
राँभति गौ खरिकनमें बछरा हित धाई॥ २॥
बिधु मलीन रबिप्रकास गावत नर-नारी।
सूर स्याम प्रात उठौ अंबुज कर धारी॥ ३॥

(१५८) राग गौरी

जसोदा हरि पालने झुलावै।
हलरावै दुलराइ मल्हावै जोइ सोई कछु गावै॥
मेरे लालको आउ निदरिया काहे न आनि सुआवै।
तू काहे न बेगि-सी आवै तोको कान्ह बुलावै॥
कबहुँ पलक हरि मूँदि लेत हैं कबहुँ अधर फरकावै।
सोवत जानि मौन ह्वै ह्वै रही कर कर सैन बतावै॥
इहि अंतर अकुलाइ उठे हरि जसुमति मधुरे गावै।
जो सुख सूर अमर मुनि दुर्लभ सो नँद भामिनि पावै॥

(१५९) राग बिलावल

जसुमति मन अभिलाष करै।
कब मेरो लाल घुटुरुवन रेंगै कब धरनी पग द्वैक धरै॥
कब द्वै दंत दूधके देखौं कब तुतरे मुख बैन झरै।
कब नंदहि कहि बाबा बोलै कब जननी कहि मोहि ररै॥
कब मेरो अँचरा गहि मोहन जोइ-सोइ कहि मोसों झगरै।
कबधौं तनक तनक कछु खैहैं अपने करसों मुखहिं भरै॥
कब हँसि बात कहैगो मोसों छबि पेखत दुख दूरि टरै।
स्याम अकेले आँगन छाँड़े आपु गई कछु काज घरै॥

एहि अंतर अँधबाइ उठी इक गरजत गमन सहित थहरै।
सूरदास ब्रज लोग सुनत धुनि जो जहँ तहँ सब अतिहि डरै॥

(१६०) राग गौरी

लालन हौं बारी तेरे या मुख ऊपर।
माई मेरिहि डीठि न लागै ताते मसिबिंदा दयो भ्रूपर॥ १॥
सर्बसु मैं पहिले ही दीनी नान्ही नान्ही दँतुली दूपर।
अब कहा करों निछावरि सूर जसोमति अपने लालन ऊपर॥ २॥

(१६१) राग सारंग

लालन तेरे मुखपर हौं बारी।
बाल-गोपाल लगौं इन नैननि रोगु बलाय तुम्हारी॥
लट-लटकन मोहन मसि बिंदुका तिलक भाल सुखकारी।
मनहुँ कमल अलिसाधक पंगति उड़त मधुर छबि भारी॥
लोचन ललित कपोलनि काजर छबि उपजत अधिकारी।
मुख सनमुख औरै रुचि बाढ़ति हँसत दै दै किलकारी॥
अल्प दसन कलबल करि बोलनि बिधि नहिं परति बिचारी।
निकसति दुति अधरन के बिच ह्वै मानो बिधुमें बीजु उज्यारी॥
सुंदरताको पार न पावति रूप देखि महतारी।
सूर सिंधुकी बूँद भई मिलि मति गति दीठि हमारी॥

(१६२) राग देवगंधार

कहन लगे मोहन मैया मैया।
पिता नंदसों बाबा बाबा अरु हलधरसों भैया॥
ऊँचे चढ़ि चढ़ि कहत जसोदा लै लै नाम कन्हैया।
दूरि कहूँ जिनि जाहु लला रे मारेगी काहूकी गैया॥
गोपी ग्वाल करत कौतूहल घर घर लेत बलैया।
मनिखंभन प्रतिबिंब बिलोकत नचत कुँवर निज पैया॥
नंद जसोदाजीके उरतें इह छबि अनत न जइया।
सूरदास प्रभु तुमरे दरसको चरननकी बलि गइया॥

(१६३) राग बिलावल

बरनौं बाल-भेष मुरारि।
थकित जित-तित अमर-मुनि-गन नंदलाल निहारि॥
केस सिर बिन पवनके चहुँ दिसा छिटके झारि।
सीसपर धरे जटा मानो रूप किय त्रिपुरारि॥
तिलक ललित ललाट केसरि बिंदु सोभाकारि।
अरुन रेखा जनु त्रिलोचन रह्यो निज पुर जारि॥
कंठ कठुला नील मनि, अंभोज-माल सँवारि।
गरल ग्रीव कपाल उर यहि भाय भये मदनारि॥
कुटिल हरि नख हिये हरिके हरषि निरखति नारि।
ईस जनु रजनीस राख्यो भालहू ते उतारि॥
सदन-रज तन स्याम सोभित सुभग इहि अनुहारि।
मनहु अंग बिभूति, राजत संभु सो मधु-हारि॥
त्रिदसपति-पति असनको अति जननिसों करि आरि।
सूरदास बिरंचि जाको जपत निज मुख चारि॥

(१६४) राग रामकली

मेरो माई ऐसो हठी बालगोबिंदा।
अपने कर गहि गगन बतावत खेलनको माँगै चंदा॥
बासनकै जल धर्‍यौ जसोदा हरिको आनि दिखावै।
रुदन करत ढूँढ़ै नहिं पावत धरनि चंद कैसे आवै॥
दूध दही पकवान मिठाई जो कछु माँगु मेरे छौना।
भौंरा चकई लाल पाटको लेड़ुवा माँगु खिलौना॥
दैत्यदलन गजदंत उपारन कंसकेस धरि फंदा।
सूरदास बलि जाइ जसोमति सुखसागर दुखखंदा॥

(१६५) राग रामकली

मैया कबहिं बढ़ैगी चोटी!
किती बार मोहि दूध पिवत भई यह अजहूँ है छोटी॥
तू जो कहति बलकी बेनी ज्यों ह्वैहै लाँबी मोटी।
काढ़त गुहत न्हवावत ओंछति नागिन-सी भुइँ लोटी॥
काचो दूध पिवावत पचि पचि देत न माखन रोटी।
सूर स्याम चिरजिव दोउ भैया हरि-हलधरकी जोटी॥

(१६६) राग गौरी

मैया मोहिं दाऊ बहुत खिझायो।
मोसो कहत मोलको लीनो तोहि जसुमति कब जायो॥ १॥
कहा कहौं एहि रिसके मारे खेलन हौं नहिं जातु।
पुनि पुनि कहत कौन है माता को है तुम्हरो तातु॥ २॥
गोरे नंद जसोदा गोरी तुम कत स्याम सरीर।
चुटकी दै दै हँसत ग्वाल सब सिखै देत बलबीर॥ ३॥
तू मोहीको मारन सीखी दाउहि कबहु न खीझै।
मोहनको मुख रिस समेत लखि जसुमति सुनि सुनि रीझै॥ ४॥
सुनहु कान्ह बलभद्र चबाई जनमत ही को धूत।
सूर स्याम मोहि गोधनकी सौं हौं माता तू पूत॥ ५॥

(१६७) राग रामकली

मो देखत जसुमति तेरे ढोटा अबहीं माटी खाई।
इह सुनिके रिस करि उठि धाई बाँह पकरि लै आई॥ १॥
इक करसों भुज गहि गाढ़े करि इक कर लीने साँटी।
मारति हौं तोहि अबहिं कन्हैया बेगि न उगिलो माटी॥ २॥
ब्रज-लरिका सब तेरे आगे झूठी कहत बनाई।
मेरे कहे नहीं तू मानति दिखरावौं मुँह बाई॥ ३॥
अखिल ब्रह्मांड खंड की महिमा दिखराई मुख माहीं।
सिंधु सुमेरु नदी बन परबत चकित भई मन माहीं॥ ४॥

करते साँटि गिरत नहिं जानी भुजा छाँड़ि अकुलानी।
सूर कहै जसुमति मुख मूँदेउ बलि गई सारँग पानी॥ ५॥

(१६८) राग गौरी

मैया री मोहिं माखन भावै।
मधु मेवा पकवान मिठाई मोहिं नहिं रुचि आवै॥
ब्रजजुबती इक पाछे ठाढ़ी सुनति स्यामकी बातैं।
मन मन कहति कबहुँ अपने घर देखौं माखन खातैं॥
बैठे जाय मथनियाँके ढिग, मैं तब रहौं छिपानी।
सूरदास प्रभु अंतरजामी ग्वालि मनहिकी जानी॥

(१६९) राग गौरी

जो तुम सुनहु जसोदा गोरी।
नँदनंदन मेरे मंदिरमें आजु करन गये चोरी॥
हौं भई आनि अचानक ठाढ़ी कह्यो भवनमें को री।
रहे छिपाइ सकुचि रंचक ह्वै भई सहज मति भोरी॥
जब गहि बाँह कुलाहल कीनो तब गहि चरन निहोरी।
लगे लेन नैनन भरि आँसू तब मैं कानि न तोरी॥
मोहि भयो माखनको बिस्मय रीती देखि कमोरी।
सूरदास प्रभु करत दिनहि दिन ऐसी लरकि-सलोरी॥

(१७०) राग तिलक

मैया मोरी मैं नहिं माखन खायो।
भोर भयो गैयनके पाछे, मधुबन मोहि पठायो।
चार पहर बंसीबट भटक्यो, साँझ परे घर आयो॥
मैं बालक बहिंयनको छोटो, छींको किहि बिधि पायो।
ग्वाल बाल सब बैर परे हैं बरबस मुख लपटायो॥
तू जननी मनकी अति भोरी, इनके कहे पतिआयो।
जिय तेरे कछु भेद उपजिहैं जानि परायो जायो॥
यह लै अपनी लकुट कमरिया बहुतहि नाच नचायो।
सूरदास तब बिहँसि जसोदा, लै उर कंठ लगायो॥

(१७१) राग सोरठ

जसोदा तेरो भलो हियो है माई।
कमलनयन माखनके कारन बाँधे ऊखल लाई॥
जो संपदा देवमुनि दुरलभ सपनेहुँ दइ न दिखाई।
याहीं ते तू गरब भुलानी घर बैठे निधि पाई॥
सुत काहूको रोअत देखति दौरि लेत हिय लाई।
अब अपने घरके लरिकासों इती कहा जड़ताई॥
बारंबार सजल लोचन ह्वै चितवत कुँवर कन्हाई।
कहा करौं बलि जाऊँ छोरती तेरी सौंह दिवाई॥
जो मूरति जल थलमें ब्यापक निगम न खोजत पाई।
सो मूरति तू अपने आँगन चुटकी दै दै नचाई॥
सुरपालक सब असुर-संहारक त्रिभुवन जाहि डराई।
सूरदास प्रभुकी यह लीला निगम नेति नित गाई॥

(१७२) राग गौरी

नंदनँदन मुख देखो माई।
अंग अंग छबि उगे मनहुँ रबि ससि अरु समर लजाई॥ १॥
खंजन मीन कुरंग भृंग बारिज पर अति रुचि पाई।
स्रुति मंडल कुंडल बिंबिमकर सुबिलसत मदन सहाई॥ २॥
कंठ कपोत कीर बिद्रुमपर दारिम कननि चुनाई।
दुइ सारंग बाँहपर मुरली आई देत दोहाई॥ ३॥
मोहे थिर चर बिटप बिहंगम ब्योमबिमान थकाई।
कुसुमांजुलि बरसत सुर ऊपर सूरदास बलि जाई॥ ४॥

(१७३) राग बिहागरो

नटवर बेष काछे स्याम।
पद कमल नख इंदु सोभा ध्यान पूरन काम॥
जानु जंघ सुघट निकाई नाहि रंभा तूल।
पीत पट काछनी मानहुँ जलज केसरि झूल॥

कनक छुद्रावली पंगति नाभि कटिके भीर।
मनहुँ हंस रसाल पंगति रहे हैं ह्रद तीर॥
छलक रोमावली सोभा ग्रीव मोतिनहार।
मनहूँ गंगा बीच जमुना चली मिलिकै धार॥
बाहुदंड बिसाल तट दोउ अंग चंदन रेन।
तीर तरु बनमालकी छबि ब्रज जुबति सुख देन॥
चिबुकपर अधरन दसन दुति बिंब बीजु लजाइ।
नासिका सुक नैन खंजन कहत कबि सरमाइ॥
स्त्रवन कुंडल कोटि रबि छबि भृकुटि काम कोदंड।
सूर प्रभु है नीमके तर सिर धरे सीखंड॥

(१७४) राग गौरी

बिछुरत श्रीब्रजराज आज सखि, नैननिकी परतीति गई।
उड़ि न मिले हरि संग बिहंगम ह्वै न गये घनस्याम मई॥ १॥
याते क्रूर कुटिल सह मेचक, बृथा मीन छबि छीन लई।
रूपरसिक लालची कहावत, सो करनी कछु तौ न भई॥ २॥
अब काहे सोचत जल मोचत, समय गये नित सूल नई।
सूरदास याहीतें जड़ भए, जबतें पलकन दगा दई॥ ३॥

(१७५) राग जिल्हा

चले गये दिलके दामनगीर॥
जब सुधि आवे प्यारे दरसकी उठत कलेजे पीर।
नटवर भेष नयन रतनारे सुंदर स्याम सरीर॥
आपन जाय द्वारका छाए खारी नदके तीर।
ब्रजगोपिनको प्रेम बिसार्‌यो ऐसे भए बेपीर॥
बृंदाबन बंसीबट त्यागो निरमल जमुना नीर।
सूर स्याम ललिता उठ बोली आखिर जाति अहीर॥

(१७६) राग धनाश्री

ऊधो मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं।
हंससुताकी सुंदर कलरव अरु तरुवनकी छाहीं॥
वे सुरभी वे बच्छ दोहनी खिरक दुहावन जाहीं।
ग्वालबाल सब करत कुलाहल नाचत गह-गह बाहीं॥
यह मथुरा कंचनकी नगरी मनि-मुक्ता जिहि माहीं।
जबहिं सुरत आवत वा सुखकी जिया उमगत सुध नाहीं॥
अनगिन भाँति करी बहु लीला जसुदा-नंद निबाहीं।
सूरदास प्रभु रहे मौन मह यह कह-कह पछिताहीं॥

(१७७) राग बिलावल

ऊधौ इतनो कहियो जाई।
हम आवैंगे दोऊ, भैया मैया जनि अकुलाई॥
याको बिलग बहुत हम मान्यो जो कहि पठयो धाई।
वह गुन हमको कहा बिसरिहैं बड़े किये पय प्याई॥
और जु मिल्यो नंद बाबासों तौ कहियो समुझाई।
तौलौं दुखी होन नहिं पावै धवरी धूमरि गाई॥
जद्यपि यहाँ अनेक भाँति सुख तदपि रह्यो न जाई।
सूरदास देखौं ब्रजबासिन तबहि हियो हरखाई॥

(१७८) राग सोरठ

मनौं हौं ऐसे ही मरि जैहौं।
इहि आँगन गोपाल लालको कबहुँक कनियाँ जैहौं॥
कब वह मुख बहुरो देखोंगी कब वैसो सचु पैहौं।
कब मोपै माखन माँगैंगो कब रोटी धरि दैहौं॥
मिलन आस तन प्रान रहत हैं दिन दस मारग चैहौं।
जो न सूर कान्ह आइहैं तौ जाइ जमुन धँसि जैहौं॥

(१७९) राग रामकली

सँदेसो देवकी सों कहियो।
हौं तो धाइ तुम्हारे सुतकी मैया करत नित रहियो॥
जदपि टेव तुम जानत उनकी तऊ मोहि कहि आवै।
प्रातहिं उठत तुम्हारे कान्हको माखन रोटी भावै॥
तेल उबटनो अरु तातो जल ताहि देखि भगि जावै।
जोइ जोइ माँगत सोइ सोइ देती क्रम क्रम करि करि न्हावै॥
सूर पथिक सुनि मोहिं रैन दिन बढ़्यो रहत उर सोच।
मेरो अलक लडैतो मोहन ह्वैहै करत सकोच॥

(१८०) राग धनाश्री

सुनहू गोपी हरिको संदेस।
करि समाधि अंतर्गति ध्यावहु यह उनको उपदेस॥
वह अबिगत अबिनासी पूरन सब घट रह्यो समाई।
निरगुन ग्यान बिनु मुक्ति नहीं है बेद पुरानन गाई॥
सगुन रूप तजि निरगुन ध्यावौ इक चित इक मन लाई।
यह उपाय करि बिरह तरी तुम मिलै ब्रह्म तब आई॥
दुसह सँदेस सुनत माधोको गोपीजन बिलखानी।
सूर बिरहकी कौन चलावै बूड़त मन बिन पानी॥

(१८१) राग बिहाग

मधुकर स्याम हमारे चोर।
मन हर लियो माधुरी मूरत निरख नयनकी कोर॥
पकरे हुते आन उर अंतर प्रेम प्रीतिके जोर।
गये छुड़ाय तोर सब बंधन दै गये हँसन अकोर॥
उचक परों जागत निसि बीते तारे गिनत भई भोर।
सूरदास प्रभु हत मन मेरो सरबस लै गयो नंदकिसोर॥

(१८२) राग सारंग

ऊधो मन न भये दस बीस।
एक हुतो सो गयो स्याम सँग को अवराधै ईस॥
इंद्री सिथिल भई केसो बिन ज्यों देही बिन सीस।
आसा लगी रहत तनु खासा जीजो कोटि बरीस॥
तुम तो सखा स्यामसुंदरके सकल जोगके ईस।
सूरदास वा रसकी महिमा जो पूँछैं जगदीस॥

(१८३) राग केदारो

गोकुल सबै गोपाल उपासी।
जोग अंग साधत जे ऊधो ते सब बसत ईसपुर कासी॥ १॥
जद्यपि हरि हम तजि अनाथ करि तदपि रहति चरनन रस रासी।
अपनी सीतलताहि न छाँड़त जद्यपि हैं ससि राहु-गरासी॥ २॥
का अपराध जोग लिखि पठवत प्रेमभजन तजि करन उदासी।
सूरदास ऐसी को बिरहिनि माँगति मुक्ति तजे धन रासी॥ ३॥

(१८४) राग मलार

हमरे कौन जोग ब्रत साधै?
मृग-त्वच, भस्म, अधारि, जटाको, को इतनो अवराधै॥
जाकी कहूँ थाह नहिं पैये, अगम अपार अगाधै।
गिरधरलाल छबीले मुखपर, इते बाँध को बाँधै?
आसन पवन भूति मृगछाला ध्याननि को अवराधै।
सूरदास मानिक परिहरिकै, राख गाँठि को बाँधै॥

(१८५) राग सारंग

निर्गुन कौन देसको बासी?
मधुकर! हँसि-समुझाय सौंह दे, बूझति साँच न हाँसी॥
को है जनक, जननि को कहियत, कौन नारि को दासी।
कैसो बरन, भेस है कैसो, केहि रसमें अभिलासी॥

पावैगो पुनि कियो आपनो, जो रे! कहैगो गाँसी।
सुनत मौन ह्वै रह्यो ठग्यो-सो सूर सबै मति नासी॥

(१८६) राग सारंग

बिनु गुपाल बैरिन भई कुंजैं।
तब ये लता लगति अति सीतल, अब भई बिषम ज्वालकी पुंजैं॥ १॥
बृथा बहत जमुना खग बोलत, बृथा कमल फूलैं अलि गुंजैं।
पवन, पानि घनसार, सजीवनि, दधि-सुत-किरन भानु भइँ भुंजैं॥ २॥
ये ऊधो कहियो माधवसों, बिरह करत कर मारत लुंजैं।
सूरदास प्रभुको मग जोवत, अँखियाँ भई बरन ज्यों गुंजैं॥ ३॥

(१८७) राग सोरठ

अब या तनहि राखि का कीजै।
सुन री सखी! स्यामसुन्दर बिनु, बाँटि बिषम बिष पीजै॥ १॥
कै गिरिये गिरि चढ़िकै सजनी, स्वकर सीस सिव दीजै।
कै दहिये दारुन दावानल, जाय जमुन धँसि लीजै॥ २॥
दुसह बियोग बिरह माधवके, कौन दिनहि दिन छीजै।
सूरदास प्रीतम बिन राधे, सोचि-सोचि मन खीजै॥ ३॥

(१८८) राग गौरी

कहाँ लौं कहिये ब्रजकी बात।
सुनहु स्याम तुम बिनु उन लोगइ जैसे दिवस बितात॥
गोपी गाइ ग्वाल गोसुत वह मलिन बदन कृस गात।
परमदीन जनु सिसिर हिमी हित अंबुजगन बिनु पात॥
जा कहुँ आवत देखि दूरते सब पूछति कुसलात।
चलत न देत प्रेम आतुर उर कर चरनन लपटात॥
पिक चातक बन बसन न पावहि बायस बलिहि न खात।
सूर स्याम संदेसनके डर पथिक न उहि मग जात॥

(१८९) राग सारंग

निसिदिन बरसत नैन हमारे।
सदा रहत पावस ऋतु हमपर जबतें स्याम सिधारे॥
अंजन थिर न रहत अँखियनमें कर कपोल भये कारे।
कंचुकि-पट सूखत नहिं कबहूँ, उर बिच बहत पनारे॥
आँसू सलिल भये पग थाके, बहै जात सित तारे।
सूरदास अब डूबत है ब्रज, काहे न लेत उबारे॥

(१९०) राग मलार

मधुकर! इतनी कहियहु जाइ।
अति कृस-गात भई ये तुम बिन परम दुखारी गाइ॥
जल समूह बरसत दोउ आँखैं, हूँकति लीन्हें नाउँ।
जहाँ-जहाँ गोदोहन कीनों, सूँघति सोई ठाउँ॥
परति पछार खाइ छिनहीं छिन, अति आतुर ह्वै दीन।
मानहुँ सूर काढ़ि डारी है, बारि-मध्यतें मीन॥

(१९१) राग धनाश्री

नैना भये अनाथ हमारे।
मदनगुपाल यहाँ ते सजनी, सुनियत दूरि सिधारे॥
वै हरि जल हम मीन बापुरी कैसे जिवहिं नियारे।
हम चातक चकोर स्यामल घन, बदन सुधानिधि प्यारे॥
मधुबन बसत आस दरसनकी नैन जोइ मग हारे।
सूर स्याम करी पिय ऐसी, मृतक हुते पुनि मारे॥

(१९२) राग मलार

रुक्मिनि मोहि ब्रज बिसरत नाहीं।
वा क्रीड़ा खेलत जमुना-तट, बिमल कदमकी छाहीं॥
गोपबधूकी भुजा कंठ धरि बिहरत कुंजन माहीं।
अमित बिनोद कहाँ लौं बरनौं, मो मुख बरनि न जाहीं॥

सकल सखा अरु नंद जसोदा वे चितते न टराहीं।
सुतहित जानि नंद प्रतिपाले, बिछुरत बिपति सहाहीं॥
जद्यपि सुखनिधान द्वारावति, तोउ मन कहुँ न रहाहीं।
सूरदास प्रभु कुंज-बिहारी, सुमिरि सुमिरि पछिताहीं॥

❑❑

प्रेम

(१९३) राग सारंग

आजु हौं एक-एक करि टरिहौं।
कै हमहीं कै तुमहीं माधव, अपुन भरोसे लरिहौं॥
हौं तो पतित सात पीढ़िनको पतितै ह्वै निस्तरिहौं।
अब हौं उघरि नचन चाहत हौं तुम्हें बिरद बिनु करिहौं॥
कत अपनी परतीति नसावत, मैं पायो हरि हीरा।
सूर पतित तबहीं लै उठिहै, जब हँसि दैहो बीरा॥

(१९४)

वा पट पीतकी फहरान!
कर धरि चक्र चरनकी धावनि, नहिं बिसरत वह बान॥
रथते उतरि अवनि आतुर ह्वै कच-रजकी लपटान।
मानो सिंह सैलतें निकस्यो, महामत्त गज जान॥
जिन गुपाल मेरो प्रन राख्यो, मेटि बेदकी कान।
सोई सूर सहाय हमारे निकट भये हैं आन॥

(१९५)

आज जो हरिहिं न सस्त्र गहाऊँ।
तौं लाजौं गंगा-जननीको, सांतनु-सुत न कहाऊँ॥
स्यंदन खंडि महारथ खंडौं, कपिध्वज सहित डुलाऊँ।
इती न करौं सपथ मोहि हरिकी, छत्रिय-गतिहि न पाऊँ॥
पांडव-दल सनमुख ह्वै धाऊँ सरिता रुधिर बहाऊँ।
सूरदास रनभूमि बिजय बिनु, जियत न पीठ दिखाऊँ॥

(१९६) राग भीमपलासी

सबसों ऊँची प्रेम सगाई।
दुरजोधनके मेवा त्यागे, साग बिदुर घर खाई॥
जूठे फल सबरीके खाये, बहु बिधि स्वाद बताई।
प्रेमके बस नृप सेवा कीन्हीं आप बने हरि नाई॥
राजसु-जग्य जुधिष्ठिर कीन्हों तामें जूँठ उठाई।
प्रेमके बस पारथ रथ हाँक्यो, भूलि गये ठकुराई॥
ऐसी प्रीति बढ़ी बृंदाबन, गोपिन नाच नचाई।
सूर कूर इहि लायक नाहीं, कहँ लगि करौं बड़ाई॥

(१९७) राग खमाच

अब तो प्रगट भई जग जानी।
वा मोहनसों प्रीति निरंतर, क्यों निबहैगी छानी॥
कहा करौं सुंदर मूरति, इन नयननि माँझि समानी।
निकसत नाहि बहुत पचि हारी, रोम-रोम अरुझानी॥
अब कैसे निर्बारि जाति है, मिल्यो दूध ज्यौं पानी।
सूरदास प्रभु अंतरजामी, उर अंतरकी जानी॥

(१९८)

सोइ रसना जो हरिगुन गावै।
नैननकी छबि यहै चतुरता, ज्यों मकरंद मुकुंदहि ध्यावै॥
निर्मल चित तौ सोई साँचो, कृष्ण बिना जिय और न भावै।
स्रवननकी जु यहै अधिकाई, सुनि हरि-कथा सुधारस प्यावै॥
कर तेई जे स्यामहि सेवै चरननि चलि बृंदाबन जावै।
सूरदास जैये बलि ताके, जो हरिजू सों प्रीति बढ़ावै॥

(१९९) राग बिलावल

ऐसी प्रीतिकी बलि जाउँ।
सिंहासन तजि चले मिलनको सुनत सुदामा नाउँ॥
गुरु-बांधव अरु बिप्र जानिकै चरनन हाथ पखारे।
अंकमाल दै कुसल बूझिकै सिंहासन बैठारे॥

अरधंगी बूझत मोहनको कैसे हितू तुम्हारे।
दुर्बल हीन छीन देखतिहौं पाउँ कहाँ ते धारे॥
संदीपनके हमरु सुदामा पढ़े एक चटसार।
सूर स्यामकी कौन चलावै भक्तन कृपा अपार॥

(२००) राग कान्हरा

जाको मन लाग्यो नंदलालहिं ताहि और नहिं भावे हो।
ज्यों गूँगो गुर खाइ अधिक रस सुख सवाद न बतावे हो॥
जैसे सरिता मिलै सिंधुको बहुरि प्रवाह न आवे हो।
ऐसे सूर कमललोचन ते चित नहिं अनत डुलावे हो॥

(२०१) राग सोरठ

मोहन इतनो मोहि चित धरिये।
जननी दुखित जानिकै कबहुँ मथुरागमन न करिये॥ १॥
यह अक्रूर-क्रूर कृत रचिकै, तुमहिं लेन है आयो।
तिरछे भये कर्म कृत पहिले, बिधि यह ठाठ बनायो॥ २॥
बार बार जननी कहि मोसों माखन माँगत जौन।
सूर तिनहिं लेबैको आयो करिहै सूनो भौन॥ ३॥

(२०२) राग सारंग

प्रीति करि काहू सुख न लह्यो।
प्रीति पतंग करी दीपकसों आपै प्रान दह्यो॥
अलिसुत प्रीति करी जलसुतसों करि मुख माँहि गह्यो।
सारँग प्रीति करी जो नादसों सन्मुख बान सह्यो॥
हम जो प्रीति करी माधवसों चलत न कछू कह्यो।
सूरदास प्रभु बिनु दुख दूनो नैननि नीर बह्यो॥

(२०३) राग बिलावल

नाहिन रह्यो हियमें ठौर।
नंद-नंदन अछत कैसे आनिये उर और॥
चलत चितवत दिवस जागत, स्वप्न सोवत रात।
हृदयतें वह स्याम मूरति छिन न इत उत जात॥

कहत कथा अनेक ऊधो! लोक लाज दिखात।
कहा करौं तन प्रेम-पूरन, घट न सिंधु समात॥
स्यामगात सरोज आनन, ललित गति मृदु हास।
सूर ऐसे रूप कारन, मरत लोचन प्यास॥

(२०४) राग सोरठ

हम न भईं बृंदाबन-रेनु।
जिन चरनन डोलत नँदनंदन नित प्रति चारत धेनु॥ १॥
हमतें धन्य परम ये द्रुम-बन बाल बच्छ अरु धेनु।
सूर सकल खेलत हँसि बोलत ग्वालन सँग मथि पीवत धेनु॥ २॥

(२०५) राग धनाश्री

अँखियाँ हरि दरसनकी भूखी।
अब क्यों रहति स्याम रँग राती, ए बातैं सुनि रूखी॥ १॥
अवधि गनत इकटक मग जोवत, तब ए इतों नहिं झूखी।
इते मान इहि जोग संदेसन सुनि अकुलानी दूखी॥ २॥
सूर सकत हठ नाव चलावत, ए सरिता हैं सूखी।
बारक वह मुख आनि देखावहु, दुहि पै पिवत पतूखी॥ ३॥

(२०६)

अँखियाँ हरि दरसनकी प्यासी।
देख्यौ चाहत कमलनैनको, निसिदिन रहत उदासी॥
केसर तिलक मोतिनकी माला, बृंदाबनके बासी।
नेह लगाय त्यागि गये तृन सम, डारि गये गल-फाँसी॥
काहूके मनकी को जानत, लोगनके मन हाँसी।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरस बिन, लैहों करवट कासी॥

(२०७) राग भैरव

ऐसेहि बसिये ब्रजकी बीथिनि।
साधुनिके पनवारे चुनि चुनि उदर जु भरिये सीतनि॥ १॥
पैड़ेमेंके बसन बीनि तन छाया परम पुनीतनि।
कुंज-कुंज तर लोटि-लोटि रचि रज लागै रंगीतनि॥ २॥

निसिदिन निरखि जसोदानंदन अरु, जमुना जल पीतनि।
दरसन सूर होत तन पावन, दरस न मिलत अतीतनि॥ ३॥

(२०८) राग देवगंधार

मोहि प्रभु तुमसो होड़ परी।
ना जानों करिहौ जु कहा तुम नागर नवल हरी॥
पतित समूहन उद्धरिबेको तुम जिय जक पकरी।
मैं जू राजिवनैननि दूरि गयो पाप-पहार दरी॥
एक अधार साधु-संगतिको रचि-पचि कै सँचरी।
भई न सोचि सोचि जिय राखी अपनी धरनि धरी॥
मेरी मुकति बिचारत हौ प्रभु पूँछत पहर घरी।
स्रमतें तुम्हें पसीनो ऐहै कत यह जकनि करी॥
सूरदास बिनती कहा बिनवै दोसहिं देह भरी।
अपनो बिरद सँभारहुगे तब यामें सब निनुरी॥

❑ ❑

कबीरदास

नाम-महिमा

(२०९) राग खमाच

भजौ रे भैया राम गोबिंद हरी।
जप तप साधन नहिं कछु लागत, खरचत नहिं गठरी॥ १॥
संतत संपत सुखके कारन, जासों भूल परी॥ २॥
कहत कबीरा राम न जा मुख ता मुख धूल भरी॥ ३॥

(२१०) राग केदारो

तू तो राम सुमर जग लड़वा दे।
कोरा कागज काली स्याही, लिखत पढ़त वाको पढ़वा दे॥
हाथी चलत हैं अपनी गतमें, कुतर भुकत वाको भुकवा दे।
कहत कबीर सुनो भाई साधो! नरक पचत वाको पचवा दे॥

❑ ❑

नाम

(२११)

जो जन लेहि खसमका नाऊँ तिनके सद बलिहारी जाऊँ।
जो गुरुके निर्मल गुन गावै, सो भाई मोरे मन भावै॥
जेहिं घट नाम रह्यो भरपूर, तिनकी पग-पंकज हम धूर।
जाति जुलाहा मतिका धीर, सहज-सहज गुनि लेहि कबीर॥

(२१२) राग भैरवी—ताल तेवरा

मत कर मोह तू, हरि भजनको मान रे।
नयन दिये दरसन करनेको, स्रवन दिये सुन ज्ञान रे॥
बदन दिया हरिगुन गानेको, हाथ दिये कर दान रे।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, कंचन निपजत खान रे॥

❑ ❑

चेतावनी

(२१३) राग आसावरी-दीपचन्दी

मन तोहे किहि बिध मैं समझाऊँ।
सोना होय तो सुहाग मँगाऊँ बंकनाल रस लाऊँ॥
ग्यान सबदकी फूँक चलाऊँ पानी कर पिघलाऊँ।
घोड़ा होय तो लगाम लगाऊँ ऊपर जीन कसाऊँ॥
होय सवार तेरेपर बैठूँ, चाबुक देके चलाऊँ।
हाथी होय जंजीर गढ़ाऊँ, चारों पैर बँधाऊँ॥
होय महावत तेरे गर बैठूँ अंकुश लेके चलाऊँ।
लोहा होय तो ऐरण मँगाऊँ, ऊपर धुवन धुवाऊँ॥
धूवनकी घनघोर मचाऊँ जंतर तार खिंचाऊँ।
ग्यानी न हो ग्यान सिखाऊँ, सत्यकी राह चलाऊँ॥
कहत कबीर सुनो भाई साधू अमरापुर पहुँचाऊँ॥

(२१४) राग बरवा काफी—तीन ताल

जन्म तेरा बातों ही बीत गयो। तूने कबहूँ न कृष्ण कह्यो। ध्रु०।
पाँच बरसका भोला-भाला अब तो बीस भयो।
मकरपचीसी माया कारन देस बिदेस गयो॥
तीस बरसकी अब मति उपजी लोभ बढ़े नित नयो।
माया जोरी लाख करोरी अजहुँ न तृप्त भयो॥
बृद्ध भयो तब आलस उपजी कफ नित कंठ रह्यो।
संगति कबहूँ न कीनी बिरथा जन्म लियो॥
यह संसार मतलबका लोभी झूँठा ठाट रच्यो।
कहत कबीर समझ मन मूरख तू क्यों भूल गयो॥

(२१५) राग काफी

तोरी गठरीमें लागे चोर बटोहिया का सोवै॥ टेक॥
पाँच पचीस तीन है चुरवा, यह सब कीन्हा सोर।
जागु सबेरा बाट अनेरा, फिर नहिं लागै जोर॥
भवसागर इक नदी बहतु है, बिन उतरे जाब बोर।
कहै कबीर सुनो भाई साधो! जागत कीजै मोर॥

(२१६)

कौन ठगवा नगरिया लूटल हो॥ टेक॥
चंदन काठ कै बनल खटोलना, तापर दुलहिन सूतल हो॥
उठो री सखी मोरी माँग सँवारो दुलहा मोसे रूठल हो।
आये जमराज पलँग चढ़ि बैठे, नैनन अँसुआ टूटल हो॥
चारि जने मिलि खाट उठाइन चहुँदिसि धू धू ऊठल हो।
कहत कबीर सुनो भाई साधो! जगसे नाता छूटल हो॥

(२१७) राग बिलावल

रहना नहिं देस बिराना है।
यह संसार कागदकी पुड़िया, बूँद पड़े घुल जाना है।
यह संसार काँटकी बाड़ी उलझ पुलझ मरि जाना है॥

यह संसार झाड़ औ झाँखर, आग लगे बरि जाना है।
कहत कबीर सुनो भाई साधो! सतगुरु नाम ठिकाना है॥

(२१८) राग बागेश्री

ीत गये दिन भजन बिना रे!
ाल अवस्था खेल गँवायो, जब जवानि तब मान घना रे॥
ाहे कारन मूल गँवायो, अजहुँ न गइ मन की तृसना रे।
हत कबीर सुनो भाई साधो! पार उतर गये संत जना रे॥

(२१९) राग सारंग

माया महा ठगिनि हम जानी।
निरगुन फाँस लिये कर डोलै बोलै मधुरी बानी॥
केसवके कमला ह्वै बैठी, सिवके भवन भवानी।
पंडाके मूरति ह्वै बैठी, तीरथमें भइ पानी॥
जोगीके जोगिन ह्वै बैठी, राजाके घर रानी।
काहूके हीरा ह्वै बैठी, काहूके कौड़ी कानी॥
भगतनके भगतिन ह्वै बैठी, ब्रह्माके ब्रह्मानी।
कहत कबीर सुनो हो संतो! यह सब अकथ कहानी॥

(२२०)

केहि समुझावों सब जग अंधा॥
क-दुइ होय उन्हें समुझावों, सबहि भुलाना पेटके धंधा।
नी कै घोड़ा पवन असवरवा, ढरकि परै जस ओसके बुंदा॥
हेरी नदिया अगम बहै धरवा खेवनहाराके पड़िगा फंदा।
की बस्तु नजर नहिं आवत, दियना बारिके ढूँढ़त अंधा॥
गी आग सबै बन जरिगा, बिनु गुरु ज्ञान भटकिगा बंदा।
है कबीर सुनो भाई साधो! इक दिन जाय लंगोटी झार बंदा॥

(२२१) राग सारंग

धुबिया जल बिच मरत पियासा॥ टेक॥
जलमें ठाढ़ पिये नहिं मूरख अच्छा जल है खासा।
अपने घरकै मरम न जानै करै धुबियनकै आसा॥
छिनमें धुबिया रोवै, धोवै, छिनमें होय उदासा।
आपै बँधे करमकी रस्सी, आपन गरकै फाँसा॥
सच्चा साबुन लेहि न मूरख, है संतनके पासा।
दाग पुराना छूटत नाहीं, धोवत बारह मासा॥
एक रातिकौ जोरि लगावै, छोरि दिये भरि मासा।
कहै कबीर सुनो भाई साधो! आछत अन्न उपासा॥

(२२२)

जागु पिआरी, अबका सोवै। रैन गई दिन काहेको खोवै॥
जिन जागा तिन मानिक पाया। तैं बौरी सब सोय गँवाया॥
पिय तेरे चतुर तू मूरख नारी। कबहुँ न पियकी सेज सँवारी॥
तैं बौरी बौरापन कीन्हों। भर जोबन पिय अपन न चीन्हों॥
जागु देख पिय सेज न तेरे। तोहि छाँड़ि उठि गये सबेरे॥
कह कबीर सोई धुन जागे। सब्द बान उर अंतर लागे॥

❑ ❑

प्रेम

(२२३) राग काफी

नैहरवा हमकाँ न भावै॥ टेक॥
साईंकी नगरी परम अति सुंदर, जहँ कोई जाय न आवै।
चाँद, सूरज जहँ पवन न पानी, को सँदेस पहुँचावै॥
दरद यह साईं को सुनावै॥ १॥
आगै चलौं पंथ नहिं सूझै, पीछे दोष लगावै।
केहि बिधि ससुरे जाऊँ मोरी सजनी, बिरहा जोर जनावै॥
बिषैरस नाच नचावै॥ २॥

बिन सतगुरु अपनी नहिं कोई, जो यह राह बतावैं।
कहत कबीर सुनो भाई साधो! सुपने न पीतम पावै॥
तपन यह जियकी बुझावै॥ ३॥

(२२४) गजल

हमन है इश्क मस्ताना हमनको होशियारी क्या?
रहै आजाद या जगमें, हमन दुनियाँसे यारी क्या?
जो बिछुड़े हैं पियारेसे भटकते दर-बदर फिरते।
हमारा यार है हममें, हमनको इंतजारी क्या?
खलक सब नाम अपनेको, बहुत कर सर पटकता है।
हमन हरि-नाम राँचा है, हमन दुनियाँसे यारी क्या?
न पल बिछुड़े पिया हमसें, न हम बिछुड़े पियारेसे।
उन्हींसे नेह लागा है, हमनको बेकरारी क्या?
कबीरा इश्कका माता दुईको दूर कर दिलसे।
जो चलना राह नाजुक है, हमन सर बोझ भारी क्या?

(२२५) राग काफी

कौन मिलावै मोहि जोगिया हो,
जोगिया बिन रह्यो न जाय॥ टेक॥
हौं हिरनी पिय पारधी हो, मारे सबदके बान।
जाहि लगी सरे जान ही हो, और दरद नहिं जान॥
मैं प्यासी हौं पीवकी हो, रटत सदा पिय पीव।
पिया मिले तो जीव है, नातो सहजै त्यागो जीव॥
पिय कारन पियरी भई हो, लोग कहैं तन रोग।
चह-छह लाँघन मैं किया रे, पिया मिलनके जोग॥
कह कबीर, सुनु जोगिनी हो तनमें मनहिं मिलाय।
तुम्हरी प्रीतिके कारने हो बहुरि मिलहिंगे आय॥

(२२६)

अबिनासी दुलहा कब मिलिहौ भगतनके रछपाल॥
जल उपजी जलही सो नेहा रटत पियास पियास।
मैं ठाढ़ी बिरहिन मग जोऊँ प्रियतम तुमरी आस॥
छोड़े गेह नेह लगि तुमसों, भई चरन लौलीन।
ताला बेलि होति घट भीतर, जैसे जल बिन मीन॥
दिवस न भूख रैन नहिं निदिया, घर अँगना न सुहाय।
सेजरिया बैरिन भई हमको, जागत रैन बिहाय॥
हम तो तुमरी दासी सजना, तुम हमरे भरतार।
दीन दयाल दया कर आवो, समरथ सिरजनहार॥
कै हम प्रान तजत हैं प्यारे, कै अपनी कर लेब।
दास कबीर बिरह अति बाढ़्यो हमको दरसन देब॥

(२२७)

प्रीति लगी तुम नाम की, पल बिसरैं नाहीं।
नजर करो अब मेहरकी मोहि मिलो गुसाईं॥
बिरह सतावै हाय अब जिव तड़पै मेरा।
तुम देखनको चाव है प्रभु मिलौ सबेरा॥
नैना तरसैं दरसको पल पलक न लागै।
दरदबंद दीदारका निसि बासर जागै॥
जो अबके प्रीतम मिलै करूँ निमिष न न्यारा।
अब कबीर गुरु पाँइया मिला प्रान पियारा॥

(२२८) राग कान्हरा—दीपचन्दी

घूँघटका पट खोल री तोहे पीव मिलेंगे॥ —ध्रु०॥
घट घट रमता राम रमैया कटुक बचन मत बोल रे॥ —तोहे०॥ १॥
रंगमहलमें दीप बरत हैं आसनसे मत डोल रे॥ —तोहे०॥ १॥
कहत कबीर सुनो भाई साधू अनहद बाजत ढोल रे॥ —तोहे०॥ १॥

❑ ❑

वैराग्य

(२२९)

मन लागो मेरो यार फकीरीमें ॥ टेक ॥
जो सुख पावों नाम-भजनमें, सो सुख नाहिं अमीरीमें ॥ १ ॥
भला-बुरा सबको सुनि लीजै, करि गुजरान गरीबीमें ॥ २ ॥
प्रेमनगरमें रहनि हमारी, भलि बनि आई सबूरीमें ॥ ३ ॥
हाथमें कूँड़ी बगलमें सोंटा चारो दिसा जगीरीमें ॥ ४ ॥
आखिर यह तन खाक मिलैगा, कहा फिरत मगरूरीमें ॥ ५ ॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो, साहिब मिलै सबूरीमें ॥ ६ ॥

(२३०) राग काफी

आई गवनवाँकी सारी उमिरि अबहीं मोरि बारी ॥ टेक ॥
साज समाज पिया लै आये और कहरिया चारी।
बम्हना बेदरदी अँचरा पकरिकै जोरत गठिया हमारी ॥
सखी सब पारत गारी ॥ १ ॥
बिधिगति बाम कछु समुझि परति ना, बैरी भई महतारी।
रोय रोय अँखियाँ मोरि पोंछत घरबासे देत निकारी ॥
भई सबको हम भारी ॥ २ ॥
गौन कराय पिया लै चाले, इत उत बाट निहारी।
छूटत गाँव नगरसों नाता, छूटै महल अटारी ॥
कर्म गति टरै न टारी ॥ ३ ॥
नदिया किनारे बलम मोर रसिया, दीन्ह घूँघट पट टारी।
थरथराय तनु काँपन लागे, काहु न देख हमारी ॥
पिया लै आये गोहारी ॥ ४ ॥

(२३१)

हमका ओढ़ावै चदरिया चलती बिरिया।
प्रान राम जब निकसन लागे उलटि गई दोउ नैन पुतरिया।
भीतरसे जब बाहर लाये छूट गई सब महल अटरिया ॥

चार जने मिलि खाट उठाइनि, रोवत ले चले डगर डगरिया।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, संग चली वह सूखी लकरिया॥

(२३२) राग काफी

या बिधि मनको लगावै, मनके लगाये प्रभु पावै॥
जैसे नटवा चढ़त बाँसपर, ढोलिया ढोल बजावै।
अपना बोझ धरे सिर ऊपर, सुरति बरतपर लावै॥
जैसे भुवंगम चरत बनहिंमें, ओस चाटने आवै।
कबहुँ चाटै कबहुँ मनि चितवै, मनि तजि प्रान गँवावै॥
जैसे कामिन भरे कूप जल कर छोड़े बरतावै।
अपना रंग सखियन सँग राचै, सुरति गगरपर लावै॥
जैसी सती चढ़ी सत ऊपर, अपनी काया जरावै।
मातु-पिता सब कुटुँब तियागै, सुरति पिया घर लावै॥
धूप दीप नैबेद अरगजा, ज्ञानकी आरत लावै।
कहै कबीर सुनो भाई साधो, फेर जन्म नहिं पावै॥

(२३३) राग पीलू—दीपचन्दी

तनकी धनकी कौन बड़ाई।
देखत नैनोंमें माटी मिलाई॥ ध्रु० ॥
अपने खातर महल बनाया।
आपहि जाकर जंगल सोया॥ १ ॥
हाड़ जले जैसे लकरिकी मोली।
बाल जले जैसे घासकी पोली॥ २ ॥
कहत कबीरा सुन मेरे गुनिया।
आप मुवे पिछे डूब गई दुनिया॥ ३ ॥

(२३४)

ऐसी नगरियामें किहि बिधि रहना।
नित उठ कलक लगावै सहना॥ १ ॥
एकै कुवाँ पाँच पनिहारी।
एकै लेजुर भरे नौ नारी॥ २ ॥

फट गया कुवाँ बिनस गइ बारी।
बिलग भई पाँचो पनिहारी॥ ३॥
कहैं कबीर नाम बिनु बेरा।
उठ गया हाकिम लुट गया डेरा॥ ४॥

❑ ❑

वेदान्त

(२३५)

दरस दिवाना बावला अलमस्त फकीरा।
एक अकेला है रहा अस मतका धीरा॥
हिरदेमें महबूब है, हरदमका प्याला।
पीवेगा कोइ जौहरी गुरु मुख मतवाला॥
पियत पियाला प्रेमका सुधरे सब साथी।
आठ पहर झूमत रहै जस मैगल हाथी॥
बंधन काट मोहके बैठा निरसंका।
वाके नजर न आवता क्या राजा क्या रंका॥
धरती तो आसन किया, तम्बू असमाना।
चोला पहिरा खाकका रह पाक समाना॥
सेवकको सतगुरु मिलै कछु रहि न तबाही।
कह कबीर निज घर चलौ जहँ काल न जाही॥

(२३६)

रस गगन गुफामें अजर झरै।
बिन बाजा झनकार उठै जहँ समुझि परै जब ध्यान धरै॥
बिना ताल जहँ कमल फुलाने, तेहि चढ़ि हंसा केलि करै।
बिन चंदा उजियारी दरसैं जहँ-तहँ हंसा नजर परै॥
दसवें द्वारे ताली लागी अलख पुरख जाको ध्यान धरै।
काल कराल निकट नहिं आवै, काम क्रोध मद लोभ जरै॥

जुगन जुगन की तृषा बुझाती करम भरम अघ ब्याधि टरै।
कहैं कबीर सुनो भई साधो, अमर होय, कबहूँ न मरै॥

❑ ❑

प्रकीर्ण

(२३७)

रमैया की दुलहिन लूटा बजार।
सुरपुर लूट नागपुर लूटा, तीन लोक मच हाहाकार॥ १॥
ब्रह्मा लूटे महादेव लूटे, नारद मुनिके परी पिछार।
स्रिंगीकी भिंगी करि डारी, पारासरके उदर बिदार॥ २॥
कनफूका चिदकासी लूटे, लूटे जोगेसर करत बिचार।
हम तो बचिगे, साहब दयासे, सब्दडोर गहि उतरे पार॥ ३॥
कहत कबीर सुनो भई साधो, इस ठगनीसे रहो हुसियार॥ ४॥

(२३८)

डर लागै औ हाँसी आवै अजब जमाना आया रे॥
धन दौलत ले माल खजाना, बेस्या नाच नचाया रे।
मुट्ठी अन्न साधु कोई माँगे, कहैं नाज नहिं आया रे॥
कथा होय तहँ स्रोता सोवैं, वक्ता मूँड़ पचाया रे।
होय जहाँ कहिं स्वाँग, तमासा, तनिक न नींद सताया रे॥
भंग तमाखू सुलफा गाँजा सूखा खूब उड़ाया रे।
गुरु चरनामृत नेम न धारै, मधुवा चाखन आया रे॥
उलटी चलन चली दुनियामें ताते जिय घबराया रे।
कहत कबीर सुनो भई साधो का पाछे पछताया रे॥

(२३९)

बाबू ऐसो है संसार तिहारो, है यह कलि ब्यवहारा।
को अब अनख सहै प्रतिदिनको नाहिन रहन हमारा॥
सुमति सुभाव सबै कोई जानै, हृदया तत्त न बूझै।
निरजीव आगे सरजीव थापे, लोचन कछुव न सूझै॥

तजि अमरत बिष काहै अँचवूँ गाँठी बाँधू खोटा।
चोरनको दिय पाट सिंहासन साहुहिं कीन्हों ओटा॥
कह कबीर झूठो मिली झूठा ठग ही ठग ब्यवहारा।
तीन लोक भरपूर रह्यो है, नाहीं है पतियारा॥

❑ ❑

हितहरिवंश

(२४०) गौरी

यह जु एक मन बहुत ठौर करि कहि कौने सचु पायो।
जहँ तहँ बिपति जारि जुबती ज्यों प्रगट पिंगला गायो॥
द्वै तुरंग पर जोर चढ़त हठि परत कौन पै धायो।
कहि धौं कौन अंक पर राखै ज्यों गनिका सुत जायो॥
हितहरिबंस प्रपंच बंच सब काल ब्यालको खायो।
यह जिय जानि स्याम-स्यामा पद कमल संगि सिर नायो॥

(२४१) पद

तातें भैया, मेरी सौं, कृष्ण-गुन-संचु।
कुत्सित बाद बिकारहि परधन सुनु सिख परतिय बंचु।
मनि गुन पुंज ब्रजपति छाँड़त हितहरिबंस सुकर गहि कंचु॥ १ ॥
पायो जानि जगतमें सब जन कपटी कुटिल कलिजुगी टंचु।
इहि परलोक सकल सुख पावत, मेरी सौं, कृष्ण-गुन संचु॥ २ ॥

(२४२) बिलावल

मोहन लालके रँग राची।
मेरे ख्याल परौ जिन कोऊ, बात दसो दिसि माची॥
कंत अनंत करौ किन कोऊ, नाहिं धारना साँची।
यह जिय जाहु भले सिर ऊपर, हौं तु प्रगट है नाची॥
जाग्रत सयन रहत ऊपर मनि, ज्यों कंचन सँग पाँची।
हितहरिबंस डरौं काके डर, हौं नाहिन मति काँची॥

(२४३) भैरवी

रहौ कोउ काहू मनहि दियें।
मेरे प्राननाथ श्रीस्यामा, सपथ करौं तिन छियें॥
जे अवतार कदंब भजत हैं, धरि दृढ़ ब्रत जु हियें।
तेऊ उमगि तजत मरजादा, बन बिहार रस पियें॥
खोये रतन फिरत जे घर-घर कौन काज इमि जियें।
हितहरिबंस अनतु सचु नाहीं, बिन या रसहिं लियें॥

(२४४) बिहाग

प्रीति न काहु कि कानि बिचारै।
मारग अपमारग बिथकित मन, को अनुसरत निवारै॥
ज्यों पावस सरिता जल उमगत, सनमुख सिंधु सिधारै।
ज्यों नादहिं मन दिये कुरंगनि, प्रगट पारधी मारै॥
हितहरिबंसहिं लग सारँग ज्यों, सलभ सरीरहिं जारै।
नाइक, निपुन नवल मोहन बिनु, कौन अपनपौ हारै॥

स्वामी हरिदास

(२४५) विभास

ज्योंहीं ज्योंहीं तुम राखत हौ त्योंहीं त्योंहीं रहियतु है हो हरि।
और अचरचै पाइ धरौं, सु तौ कहौं कौनके पैंड भरि॥
जदपि हौं अपनो भायो कियो चाहौं, कैसे करि सकौं जो तुम राखौ पकरि।
कहि हरिदास पिंजराके जनावरलौं, तरफराइ रह्यौ उड़िबेको कितो उकरि॥

(२४६)

काहूको बस नाहिं तुम्हारी कृपा तें, सब होय बिहारी बिहारिनि।
और मिथ्या प्रपंच काहेको भाषियै, सो तो है हारनि॥ १॥
जाहि तुमसों हित ताहि तुम हित करौ, सब सुख कारनि।
श्रीहरिदासके स्वामी स्यामा कुंजबिहारी, प्राननिके आधारनि॥ २॥

(२४७) आसावरी

हित तौ कीजै कमलनैनसों, जा हित आगे और हित लागो फीको।
कै हित कीजै साधुसँगतिसों, जावै कलमष जी को॥ १॥
हरिको हित ऐसो जैसो रंग-मजीठ, संसारहित कसूंभि दिन दुतीको।
कहि हरिदासहित कीजै बिहारीसों और न निबाहु जानि जी को॥ २॥

(२४८)

तिनका बयारिके बस।
ज्यों भावै त्यों उड़ाइ लै जाइ आपने रस॥
ब्रह्मलोक, सिवलोक और लोक अस।
कह हरिदास बिचारि देख्यो बिना बिहारी नाहीं जस॥

(२४९)

हरिके नामको आलस क्यों करत है रे काल फिरत सर साँधैं।
हीरा बहुत जवाहर संचे, कहा भयो हस्ती दर बाँधैं॥
बेर कुबेर कछू नहिं जानत, चढ़ो फिरत है काँधैं।
कहि हरिदास कछू न चलत जब, आवत अंत की आँधैं॥

(२५०)

मन लगाइ प्रीति कीजै कर करवा सों, ब्रजबीथिन दीजै सोहिनी।
बृंदाबन सों बन उपबन सों, गुंज माल कर पोहिनी॥
गो गोसुतन सों मृग मृगसुतन सों, और तन नेक न जोहिनी।
श्रीहरिदासके स्वामी स्यामा कुंजबिहारी सों, चित ज्यों सिरपर दोहिनी॥

(२५१) कल्यान

हरिको ऐसोइ सब खेल।
मृग-तृस्ना जग ब्याप रही हैं, कहूँ बिजोरो न बेल॥
धनमद जोबनमद और राजमद, ज्यों पंछिनमें डेल।
कह हरिदास यहै जिय जानौ, तीरथको सो मेल॥

(२५२)

जौ लौं जीवै तौ लौं हरि भजु रे मन, और बात सब बादि।
दिवस चारिको हला भला तू कहा लेइगो लादि॥
मायामद गुनमद जोबनमद, भूल्यौ नगर बिबादि।
कहि हरिदास लोभ चरपट भयो काहेंकी लागै फिरादि॥

(२५३)

प्रेमसमुद्र रूपरस गहिरे, कैसे लागै घाट।
बेकार्यो दै जानि कहावत जानि पनोकी कहा परी बाट॥
काहूको सर परै न सूधो, मारत गाल गली गली हाट।
कहि हरिदास बिहारिहि जानौ, तकौ न औघट घाट॥

(२५४) बिहाग

गहौ मन सब रसको रस सार।
लोक बेद कुल करमै तजिये, भजिये नित्य बिहार॥
गृह कामिनि कंचन धन त्यागौ, सुमिरौ स्याम उदार।
कहि हरिदास रीति संतनकी, गादीको अधिकार॥

❑ ❑

गदाधर भट्ट

(२५५)

सखी, हौं स्याम रंग रँगी।
देखि बिकाइ गई वह मूरति, सूरति माहि पगी॥ १॥
संग हुतो अपनो सपनो सो, सोइ रही रस खोई।
जागेहु आगे दृष्टि परै सखि, नेकु न न्यारो होई॥ २॥
एक जु मेरी अँखियनमें निसिद्योस रह्यो करि भौन।
गाइ चरावन जात सुन्यो सखि, सो धौं कन्हैया कौन॥ ३॥
कासों कहौं कौन पतियावै, कौन करै बकवाद।
कैसे कै कहि जात गदाधर, गूँगेको गुड़ स्वाद॥ ४॥

(२५६) विभास

दिन दूलह मेरो कुँवर कन्हैया।
नितप्रति सखा सिंगार सँवारत, नित आरती उतारति मैया॥ १॥
नितप्रति गीत बाद्यमंगल धुनि, नित सुर मुनिवर बिरद कहैया।
सिरपर श्रीब्रजराज राजबित, तैसेई ढिग बलनिधि बल भैया॥ २॥
नितप्रति रासबिलास ब्याहबिधि, नित सुर-तिय सुमननि बरसैया।
नित नव नव आनंद बारिनिधि, नित ही गदाधर लेत बलैया॥ ३॥

(२५७) ध्रुपद

श्रीगोबिन्द पद-पल्लव सिर पर बिराजमान,
कैसे कहि आवै या सुखको परिमान।
ब्रजनरेस देस बसत कालानल हू त्रसत,
बिलसत मन हुलसत करि लीलामृत पान॥ १॥
भीजे नित नयन रहत प्रभुके गुनग्राम कहत,
मानत नहिं त्रिबिधताप जानत नहिं आन।
तिनके मुखकमल दरस पातन पद-रेनु परस,
अधम जन गदाधरसे पावैं सनमान॥ २॥

(२५८) श्री

नमो नमो जय श्रीगोबिंद।
आनँदमय ब्रज सरस सरोवर,
प्रगटित बिमल नील अरबिंद॥ १॥
जसुमति नीर नेह नित पोषित,
नव नव ललित लाड़ सुखकंद।
ब्रजपति तरनि प्रताप प्रफुल्लित,
प्रसरित सुजस सुवास अमंद॥ २॥
सहचरि जाल मराल संग रँग,
रसभरि नित खेलत सानंद।
अलि गोपीजन नैन गदाधर,
सादर पिवत रूपमकरंद॥ ३॥

(२५९) सारंग

हरि हरि हरि हरि रट रसना मम।
पीवति खाति रहति निधरक भई होत कहा तो को स्रम॥
तैं तो सुनी कथा नहिं मोसे, उधरे अमित महाधम।
ग्यान ध्यान जप तप तीरथ ब्रत, जोग जाग बिनु संजम॥
हेमहरन द्विजद्रोह मान मद, अरु पर गुरु दारागम।
नामप्रताप प्रबल पावकके, होत जात सलभा सम॥
इहि कलिकाल कराल ब्याल, बिषज्वाल बिषम भोये हम।
बिनु इहि मंत्र गदाधरके क्यों, मिटिहै मोह महातम॥

(२६०) आसावरी

है हरितें हरिनाम बड़ेरो ताकों मूढ़ करत कत झेरो॥ १॥
प्रगट दरस मुचुकुंदहिं दीन्हों, ताहू आयुसु भो तप केरो॥ २॥
सुतहित नाम अजामिल लीनों, या भवमें न कियो फिर फेरो॥ ३॥
पर-अपवाद स्वाद जिय राच्यो, बृथा करत बकवाद घनेरो॥ ४॥
कौन दसा ह्वै है जु गदाधर, हरि हरि कहत जात कहा तेरो॥ ५॥

(२६१) सारंग

कबै हरि, कृपा करिहौ सुरति मेरी।
और न कोऊ काटनको मोह बेरी॥ १॥
काम लोभ आदि ये निरदय अहेरी।
मिलिकै मन मति मृगी चहूँधा घेरी॥ २॥
रोपी आइ पास-पासि दुरासा केरी।
देत वाहीमें फिरि फिरि फेरी॥ ३॥
परी कुपथ कंटक आपदा घनेरी।
नैक ही न पावति भजि भजन सेरी॥ ४॥
दंभके आरंभ ही सतसंगति डेरी।
करै क्यों गदाधर बिनु करुना तेरी॥ ५॥

(२६२) दंडक

जयति श्रीराधिके सकलसुखसाधिके
तरुनिमनि नित्य नवतन किसोरी।
कृष्णतनु लीन मन रूपकी चातकी
कृष्णमुख हिमकिरिनकी चकोरी॥ १ ॥
कृष्णदृग भृंग बिस्रामहित पद्मिनी
कृष्णदृग मृगज बंधन सुडोरी।
कृष्ण-अनुराग मकरंदकी मधुकरी
कृष्ण-गुन-गान रस-सिंधु बोरी॥ २ ॥
बिमुख परचित्त ते चित्त जाको सदा
करत निज नाहकी चित्त चोरी।
प्रकृति यह गदाधर कहत कैसे बनै
अमित महिमा इतै बुद्धि थोरी॥ ३ ॥

(२६३) दंडक

जय महाराज ब्रजराज-कुल-तिलक
गोबिंद गोपीजनानंद राधारमन।
नंद-नृप-गेहिनी गर्भ आकर रतन
सिष्ट-कष्टद धृष्ट दुष्ट दानव-दमन॥ १ ॥
बल-दलन-गर्व-पर्वत-बिदारन
ब्रज-भक्त-रच्छा-दच्छ गिरिराजधर धीर।
बिबिध बेला कुसल मुसलधर संग लै
चारु चरणांक चित तरनि तनया तीर॥ २ ॥
कोटि कंदर्प दर्पापहर लावन्य धन्य
बृंदारन्य भूषन मधुर तरु।
मुरलिकानाद पियूषनि महानंदन
बिदित सकल ब्रह्म रुद्रादि सुरकरु॥ ३ ॥

गदाधरबिषै बृष्टि करुना दृष्टि करु
दीनको त्रिविध संताप ताप तवन।
मैं सुनी तुव कृपा कृपन जन-गामिनी
बहुरि पैहै कहा मो बराबर कवन॥ ४॥

(२६४) हिंडोल

झूलत नागरि नागर लाल।
मंद मंद सब सखी झुलावति गावति गीत रसाल॥
फरहराति पट पीत नीलके अंचल चंचल चाल।
मनहुँ परसपर उमँगि ध्यान छबि, प्रगट भई तिहि काल॥
सिलसिलात अति प्रिया सीस तें, लटकति बेनी नाल।
जनु पिय मुकुट बरहि भ्रम बसतहँ, ब्याली बिकल बिहाल॥
मल्ली माल प्रियाकी उरझी, पिय तुलसी दल माल।
जनु सुरसरि रबितनया मिलिकै, सोभित स्रेनि मराल॥
स्यामल गौर परसपर प्रति छबि, सोभा बिसद बिसाल।
निरखि गदाधर रसिक कुँवरि मन, पर्‌यो सुरस जंजाल॥

(२६५) गौरी

आजु ब्रजराजको कुँवर बनते बन्यो,
देखि आवत मधुर अधर रंजित बेनु।
मधुर कलगान निज नाम सुनि स्रवन-पुट,
परम प्रमुदित बदन फेरि हूँकति धेनु॥ १॥
मदबिघूर्णित नैन मंद बिहँसनि बैन,
कुटिल अलकावली ललित गोपद रेनु।
ग्वाल-बालनि जाल करत कोलाहलनि,
सृंग दल ताल धुनि रचत संचत कैनु॥ २॥
मुकुटकी लटक अरु चटक पटपीतकी
प्रकट अकुरित गोपी मनहिं मैनु।
कहि गदाधरजु इहि न्याय ब्रजसुंदरी
बिमल बनमालके बीच चाहतु ऐनु॥ ३॥

(२६६) गारी

सुंदर स्याम सुजानसिरोमनि, देउँ कहा कहि गारी हो।
बड़े लोगके औगुन बरनत, सकुचि उठत मन भारी हो॥ १॥
को करि सकै पिताको निरनौ जाति-पाँति को जाने हो।
जाके मन जैसीयै आवत तैसिय भाँति बखानै हो॥ २॥
माया कुटिल नटी तन चितवत कौन बड़ाई पाई हो।
इहि चंचल सब जगत बिगोयो जहँ तहँ भई हँसाई हो॥ ३॥
तुम पुनि प्रगट होइ बारे तें कौन भलाई कीनी हो।
मुकुति-बधू उत्तम जन लायक लै अधमनिकों दीनी हो॥ ४॥
बसि दस मास गरभ माताके इहि आसा करि जाये हो।
सो घर छाँड़ि जीभके लालच भयो हो पूत पराये हो॥ ५॥
बारेतें गोकुल गोपिनके सूने घर तुम डाटे हो।
पैठे तहाँ निसंक रंक लौं दधिके भाजन चाटे हो॥ ६॥
आपु कहाइ धनीको ढोटा भात कृपन लौं माँग्यो हो।
मान भंग पर दूजैं जाचतु नैकु सँकोच न लाग्यो हो॥ ७॥
लोलुप तातें गोपिनके तुम सूने भवन ढँढोरे हो।
जमुना न्हात गोप-कन्यनिके निलज निपट पट चोरे हो॥ ८॥
बैनु बजाइ बिलास करत बन बोलि पराई नारी हो।
ते बातें मुनिराज सभामें है निसंक बिस्तारी हो॥ ९॥
सब कोउ कहत नंदबाबाको घर भर्‌यो रतन अमोलै हो।
गर गुंजा सिर मोर-पखौंवा गायनके सँग डोलै हो॥ १०॥
साधु-सभामें बैठनिहारो कौन तियन सँग नाचै हो।
अग्रज संग राज-मारगमें कुबजहिं देखत लाचै हो॥ ११॥
अपनि सहोदरि आपुहि छल करि अरजुन संग नसाई हो।
भोजन करि दासी-सुतके घर जादव जाति लजाई हो॥ १२॥
लै लै भजै नृपतिकी कन्या यह धौं कौन बड़ाई हो।
सतभामा गोतमें बिबाही उलटी चाल चलाई हो॥ १३॥

बहिन पिताकी सास कहाई नैकहुँ लाज न आई हो।
ऐसेइ भाँति बिधाता दीन्हीं सकल लोक ठकुराई हो॥ १४॥
मोहन बसीकरन चट चेटक मंत्र जंत्र सब जानै हो।
तात भले जु भले सब तुमको भले भले करि मानै हो॥ १५॥
बरनौं कहा जथा मति मेरी बेदहु पार न पावै हो।
भट्ट गदाधर प्रभुकी महिमा गावत ही उर आवै हो॥ १६॥

❑ ❑

नन्ददास

(२६७)

राम-कृष्ण कहिये उठि भोर।
अवध-ईस वे धनुष धरे हैं, यह ब्रज-माखनचोर॥
उनके छत्र चँवर सिंहासन, भरत सत्रुहन लछमन जोर।
इनके लकुट मुकुट पीताम्बर, नित गायन सँग नंद-किसोर॥
उन सागरमें सिला तराई, इन राख्यौ गिरि नखकी कोर।
'नंददास' प्रभु सब तजि भजिये, जैसे निरखत चंद चकोर॥

(२६८)

जो गिरि रुचै तौ बसौ श्रीगोबर्धन, गाम रुचै तौ बसौ नँदगाम।
नगर रुचै तौ बसौ श्रीमधुपुरी, सोभासागर अति अभिराम॥ १॥
सरिता रुचै तौ बसौ श्रीजमुनातट, सकल मनोरथ पूरन काम।
'नंददास' कानन रुचै तौ, बसौ भूमि बृंदाबन-धाम॥ २॥

❑ ❑

कुम्भनदास

(२६९) सारंग

भगतकौ कहा सीकरी काम।
आवत जात पन्हैया टूटी बिसरि गयो हरिनाम॥
जाको मुख देखे दुख लागै ताकों करन परी परनाम।
कुंभनदास लाल गिरधर बिन यह सब झूठौ धाम॥

(२७०) धनाश्री

नैन भरि देख्यौ नंदकुमार।
ता दिनतें सब भूलि गयौ हौं बिसर्‌यौ पन परवार॥
बिन देखे हौं बिकल भयौं हौं अंग-अंग सब हारि।
ताते सुधि है साँवरि मूरतिकी लोचन भरि भरि बारि॥
रूप-रास पैमित नहीं मानों कैसें मिलै लो कन्हाइ।
कुंभनदास प्रभु गोबरधन-धर मिलियै बहुरि री माइ॥

(२७१)

हिलगिन कठिन है या मनकी।
जाके लिये देखि मेरी सजनी लाज गयी सब तनकी॥
धरम जाउ अरु लोग हँसौं सब अरु गावौ कुल गारी।
सो क्यौं रहै ताहि बिनु देखे जा जाकौ हितकारी॥
रसलुबधक निमिख न छाँड़त है ज्यों अधीन मृग गानों।
कुंभनदास सनेह परम श्रीगोबरधन-धर जानों॥

(२७२) सारंग

जो पै चोंप मिलनकी होय।
तौ क्यों रहै ताहि बिनु देखे लाख करौ जिन कोय॥
जो यह बिरह परस्पर ब्यापै जो कछु जीवन बनै।
लोकलाज कुलकी मरजादा एकौ चित्त न गनै॥
कुंभनदास प्रभु जाय तन लागी और न कछू सुहाय।
गिरधरलाल तोहि बिनु देखे छिन-छिन, कलप बिहाय॥

❑ ❑

परमानन्ददास

(२७३) बिहागरौ

ब्रजके बिरही लोग बिचारे।
बिन गोपाल ठगेसे ठाढ़े अति दुरबल तन हारे॥
मात जसोदा पंथ निहारत निरखत साँझ सकारे।
जो कोइ कान्ह कान्ह कहि बोलत अँखियन बहत पनारे॥

यह मथुरा काजरकी रेखा जे निकसे ते कारे।
परमानंद स्वामि बिनु ऐसे ज्यों चंदा बिनु तारे॥

(२७४) कान्हरा

कौन रसिक है इन बातन कौ।
नंद-नँदन बिन कासों कहिये
सुन री सखी मेरौ दुख या मनकौ॥ १॥
कहाँ वह जमुनापुलिन मनोहर
कहाँ वह चंद सरद रातिनकौ।
कहाँ वह मंद सुगन्ध अमल रस
कहाँ वह षटपद जलजातनकौ॥ २॥
कहाँ वह सेज पौढ़िबौ बनकौ
फूल बिछौना मृदु पातनकौ।
कहाँ वह दरस परस परमानँद
कोमल तन कोमल गातनकौ॥ ३॥

(२७५) सारंग

जियकी साधन जिय ही रही री।
बहुरि गोपाल देखि नहिं पाये बिलपत कुंज अही री॥
एक दिन सोंज समीप यहि मारग बेचन जात दही री।
प्रीतके लएँ दानमिस मोहन मेरी बाँह गही री॥
बिन देखे घड़ि जात कलप सम बिरहा अनल दही री।
परमानंद स्वामि बिनु दरसन नैनन नीर बही री॥

(२७६) बिलावल

जसौदा तेरे भागकी कही न जाय।
जो मूरति ब्रह्मादिक दुरलभ सो प्रगटे हैं आय॥
सिव नारद सनकादि महामुनि मिलिबे करत उपाय।
ते नँदलाल धूरि-धूसर-बपु रहत गोद लिपटाय॥

रतन जड़ित पौढ़ाय पालनै बदन देखि मुसुकाइ।
झूलौ मेरे लाल बलिहारी परमानंद जस गाइ॥

(२७७) पूरबी

मेरौ माई माधो सों मन लाग्यौ।
मेरौ नैन अरु कमलनैनकौ इकठौरौ करि मान्यौ॥
लोक बेदकी कानि तजी मैं न्यौती अपने आन्यौ।
इक गोबिन्द चरनके कारन बैर सबनसों ठान्यौ॥
अबको भिन्न होय मेरी सजनी! दूध मिल्यौ जैसे पान्यौ।
परमानंद मिली गिरधर सों है पहली पहचान्यौ॥

❑ ❑

कृष्णदास

(२७८) देवगंधार

जब तें स्याम सरन हौं पायौ।
तबतें भैंट भई श्रीबल्लभ, निज पति नाम बतायौ॥
और अबिद्या छाँड़ि मलिन मति, स्रुतिपथ आय दृढ़ायौ।
कृष्णदास जन चहुँ जुग खोजत, अब निहचै मन आयौ॥

(२७९) बिलावल

बाल दसा गोपालकी सब काहू प्यारी।
लै लै गोद खिलावहीं, जसुमति महतारी॥ १॥
पीत झँगुलि तन सोहहीं, सिर कुलहि बिराजै।
छुद्रघंटिका कटि बनी, पाय नूपुर बाजै॥ २॥
मुरि मुरि नाचै मोर ज्यों सुर नर मुनि मोहै।
कृष्णदास प्रभु नंदके आँगनमें सोहै॥ ३॥

(२८०) गौरी

मो मन गिरिधरछबिपै अटक्यौ।
ललित त्रिभंग चालपै चलिकै,
चिबुक चारु गड़ि ठटक्यौ॥ १॥

सजल स्याम घन बरन लीन ह्वै,
फिर चित अनत न भटक्यौ।
कृष्णदास किये प्रान निछावर,
यह तन जग सिर पटक्यौ॥ २॥

❑ ❑

व्यास

(२८१) सारंग

राधा बल्लभ मेरौ प्यारौ।
सरबोपरि सबहीकौ ठाकुर, सब सुखदानि हमारौ॥
ब्रज बृंदाबन नाइक सेवालाइक स्याम उज्यारौ।
प्रीत रीत पहचानै जानै रसिकनकौ रखवारौ॥
स्याम कमल-दल-लोचन मोचन दुख नैननकौ तारौ।
अवतारी सब अवतारनकौ महतारी महतारौ॥
मूरतिवंत काम गोपिनको गाय गोप को गारौ।
ब्यासदासकौं प्रान सजीवन छिनभर हृदय न टारौ॥

(२८२) सारंग

बृंदाबन की सोभा देखे मेरे नैन सिरात।
कुंज निकुंज पुंज सुख बरसत हरषत सबकौ गात॥
राधा मोहनके निज मंदिर महाप्रलय नहिं जात।
ब्रह्मातें उपज्यो न अखंडित कबहूँ नाहिं नसात॥
फनिपर रवि तरि नहिं बिराट महँ नहिं संध्या नहिं प्रात।
माया कालरहित नित नूतन सदा फूल फल पात॥
निरगुन सगुन ब्रह्मतें न्यारौ बिहरत सदा सुहात।
ब्यास बिलास रास अदभुत गति, निगम अगोचर बात॥

(२८३) चर्चरी

नव चक्र चूड़ा नृपति मन साँवरौ,
राधिका तरुनिमनि पट्टरानी।
सेस ग्रह आदि बैकुंठ परिजंत सब,
लोक थानैत ब्रज राजधानी॥ १॥
मेघ छ्यानवै कोटि बाग सींचत जहाँ,
मुक्ति चारौ तहाँ भरति पानी।
सूर ससि पाहरू पवन जन इंदिरा,
चरनदासी भाट निगम बानी॥ २॥
धर्म कुतवाल सुक सूत नारद चारु,
फिरत चर चारि सनकादि ग्यानी।
सत्तगुन पौरिया काल बँधुवा जहाँ,
कर्म बस काम रति सुख निसानी॥ ३॥
कनक मरकत धरनि कुंज कुसुमिति महल,
मध्यकमनीय सयनीय ठानी।
पल न बिछुरत दुऊ जात नहिं तहँ कोऊ,
ब्यास महलनि लिये पीकदानी॥ ४॥

(२८४) धनाश्री

हरिदासनके निकट न आवत प्रेत पितर जमदूत।
जोगी भोगी संन्यासी अरु पंडित मुंडित धूत॥
ग्रह गन्नेस सुरेस सिवा सिव डर करि भागत भूत।
सिधि निधि बिधि निषेध हरिनामहिं डरपत रहत कुपूत॥
सुख-दुख पाप-पुन्य मायामय ईति-भीति आकूत।
सबकी आसत्रास तजि ब्यासहि भावत भगत सपूत॥

(२८५) सारंग

रसिक अनन्य हमारी जाति।
कुलदेवी राधा, बरसानौ खेरौ,
ब्रजबासिन सौं पाँति॥ १॥

गोत गोपाल, जनेऊ माला,
सिखा सिखंडि, हरि-मंदिर भाल।
हरिगुन नाम बेद धुनि सुनियत,
मूँज पखावज कुस करताल॥ २॥
साखा जमुना, हरि-लीला षटकरम,
प्रसाद प्रान धन रास।
सेवा बिधि-निषेध जड़ संगति,
बृत्ति सदा बृंदाबन बास॥ ३॥
समृति भागवत, कृष्ण नाम संध्या,
तरपन गायत्री जाप।
बंसी रिषि जजमान कलपतरु
ब्यास न देत असीस सराप॥ ४॥

(२८६)

ऐसे ही बसिये ब्रजबीथिन।
साधुनके पनवारे चुनि चुनि, उदर पोषियत सीथिन॥ १॥
घूरनमेंके बीनि चिनगटा रच्छा कीजै सीतन।
कुंज-कुंज प्रति लोटि लगै उड़ि रज ब्रजकी अंगीतन॥ २॥
नितप्रति दरस स्याम-स्यामाको नित जमुना जल पीतन।
ऐसेहि ब्यास रुचै तन पावन ऐसेहि मिलत अतीतन॥ ३॥

(२८७)

जैये कौनके अब द्वार।
जो जिय होय प्रीति काहूके दुख सहिये सौ बार॥
घर-घर राजस-तामस बाढ़्यो, धन-जोबनकौ गार।
काम-बिबस ह्वै दान देत नीचनकों होत उदार॥
साधु न सूझत बात न बूझत ये कलिके ब्यौहार।
ब्यासदास कत भाजि उबरियै परियै माँझीधार॥

(२८८)

कहा-कहा नहिं सहत सरीर।
स्याम-सरन बिनु, करम सहाइन जनम-मरनकी पीर॥
करुनावंत साधु-संगति बिनु, मनहि देय को धीर।
भगति भागवत बिनु, को मेटै, सुख दै दुखकी भीर॥
बिनु अपराध चहूँ दिसि बरषत पिसुन बचन अति तीर।
कृष्ण-कृपा कवचीतें उबरै पावै तबही सीर॥
चेतहु भैया, बेगि बढ़ी कलिकाल नदी गंभीर।
ब्यास बचन बलि बृंदाबन बसि, सेवहु कुंज कुटीर॥

(२८९)

भजौ सुत, साँचे स्याम पिताहि।
जाके सरन जात ही मिटिहैं दारुन दुखकी दाहि॥
कृपावंत भगवंत सुने मैं छिनि छाड़ौं जिनि ताहि।
तेरे सकल मनोरथ पूजैं जो मथुरा लौं जाहि॥
वै गोपाल दयाल दीन तू, करिहैं कृपा निबाहि।
और न ठौर अनाथ दुखिन कौं मैं देख्यौ जग माँहि॥
करुना बरुनालयकी महिमा मोपै कही न जाहि।
ब्यासदासके प्रभुको सेवत हारि भई कहु काहि?॥

(२९०) सारंग

धरम दुर्‌यो कलिराज दिखाई॥
कीनों प्रगट प्रताप आपनौ सब बिपरीत चलाई।
धन भौ मीत, धरम भौ बैरी पतितन सो हितबाई॥
जोगी जती तपी संन्यासी ब्रत छाँड़्यो अकुलाई।
बरनास्रमकी कौन चलावै संतनहूमें आई॥
देखत संत भयानक लागत भावते ससुर जमाई।
संपति सुकृत सनेह मान चित ग्रह ब्यौहार बड़ाई॥
कियो कुमंत्री लोभ आपुनों महामोह जु सहाई।
काम क्रोध मद मोह मत्सरा दीन्हीं देस दुहाई॥

दान लैनकौं बड़े पातकी मचलनकौं बँभनाई।
लरन मरनकौं बड़े तामसी वारौं कोटि कसाई॥
उपदेसनकौं गुरू गोसाईं आचरनैं अधमाई।
ब्यासदासके सुकृत साँकरेमें गोपाल सहाई॥

(२९१)

साधन बैरागी जड़ बंग।
धातु रसायन औषध सेवत निसिदिन बढ़त अनंग॥
सुक-बचननकौ रंग न लाग्यौ भयौ न संसै भंग।
बिष बिकारगुन उपजै बित लगि सबै करत चित भंग॥
बनमें रहत गहत कामिनि कुच सेवत पीन उतंग।
धनि धनि साधु! दंभकी मूरति, दियो छाड़ि हरि संग॥
लोभ बचन बाननि अँग-अंगनि सोभित निकर निषंग।
ब्यास आस जम पासि गरे, तिहि भावै राग न रंग॥

(२९२)

जो दुख होत बिमुख घर आये।
ज्यौं कारौ लागे कारी निसि, कोटिक बीछू खाये॥
दुपहर जेठ जरत बारूमें घायन लौन लगाये।
काँटन माँझ भिरै बिनु पनहीं, मूड़ै टोला खाये॥
ज्यों बाँझहिं दुख होत सौतिकौ सुंदर बेटा जाये।
देखतही मुख होत जितौ दुख बिसरत नहिं बिसराये॥
भटकत फिरत निलज बरजत ही कूकर ज्यों झहराये।
गारी देत बिलग नहिं मानत फूलत दमरी पाये॥
अति दुख दुष्ट जगतमें जेते नैक न मेरे भाये।
भूलि दरस नहिं कीजौ वाकौ, ब्यास बचन बिसराये॥

(२९३)

सुने न देखे भगत भिखारी।
तिनके दाम कामकौ लोभ न जिनके कुंजबिहारी॥
सुक नारद अरु सिव सनकादिक, जे अनुरागी भारी।
तिनको मत भागवत न समुझै सबकी बुधि पचि हारी॥
रसना इंद्री दोऊ बैरिन जिनकी अनी अन्यारी।
करि आहार बिहार परसपर बैर करत बिभचारी॥
बिषइनिकी परतीति न हरिसों प्रीति रीति बाजारी।
ब्यास आस-सागरमें बूड़ै आई भगति बिसारी॥

(२९४)

जो सुख होत भगत घर आये।
सो सुख होत नहीं बहु संपति, बाँझहिं बेटा जाये॥
जो सुख होत भगत चरनोदक पीवत गात लगाये।
सो सुख सपनेहू नहिं पैयत कोटिक तीरथ न्हाये॥
जो सुख भगतनकौ मुख देखत उपजत दुख बिसराये।
सो सुख होत न कामिहिं कबहूँ कामिनि उर लपटाये॥
जो सुख कबहुँ न पैयत पितु घर सुतकौ पूत खिलाये।
सो सुख होत भगत बचननि सुनि नैननि नीर बहाये॥
जो सुख होत मिलत साधुनसों छिन-छिन रंग बढ़ाये।
सो सुख होत न नेक ब्यासकौं लंक सुमेरहु पाये॥

(२९५)

हरि बिनु को अपनौं संसार।
माया मोह बँध्यो जग बूड़त, काल नदीकी धार॥
जैसे संघट होत नावमें रहत न पैले पार।
सुत संपति दारा सों ऐसे बिछुरत लगै न बार॥
जैसे सपने रंक पाय निधि जानै कछू न सार।
ऐसे छिन भंगुर देहीके गरबहि करत गँवार॥

जैसे अंधरे टेकत डोलत गनत न खाइ पनार।
ऐसे ब्यास बहुत उपदेसे सुनि-सुनि गये न पार॥

(२९६)

कहत सुनत बहुतै दिन बीते भगति न मनमें आई।
स्यामकृपा बिनु, साधुसंग बिनु कहि कौने रति पाई॥
अपने अपने मत-मद भूले करत आपनी भाई।
कह्यो हमारौ बहुत करत हैं, बहुतनमें प्रभुताई॥
मैं समझी सब काहु न समझी, मैं सबहिन समझाई।
भोरे भगत हुते सब तबके, हमरे बहु चतुराई॥
हमही अति परिपक्व भये औरनिकै सबै कचाई।
कहनि सुहेली रहनि दुहेली बातनि बहुत बड़ाई॥
हरि मंदिर माला धरि, गुरु करि जीवनके सुखदाई।
दया दीनता दासभाव बिनु मिलैं न ब्यास कन्हाई॥

(२९७) कान्हरा

परमधन राधे नाम अधार।
जाहि स्याम मुरलीमें टेरत, सुमिरत बारंबार॥
जंत्र-मंत्र औ बेद तंत्रमें सबै तारकौ तार।
श्रीसुक प्रगट कियो नहिं यातैं जानि सारको सार॥
कोटिन रूप धरे नँद-नंदन, तऊ न पायौ पार।
ब्यासदास अब प्रगट बखानत, डारि भारमें भार॥

❑ ❑

श्रीभट्ट

(२९८) पद

मदनगुपाल, सरन तेरी आयौ।
चरनकमलकी सरन दीजिये, चेरौ करि राखौ घर जायौ॥ १ ॥
धनि-धनि-मात-पिता सुत-बंधू, धनि जननी जिन गोद खिलायौ।
धनि-धनि चरन चलत तीरथकौं, धनि गुरुजन हरिनाम सुनायौ॥ २ ॥

जे नर बिमुख भये गोबिंदसों, जनम अनेक महादुख पायौ।
श्रीभटके प्रभु दियौ अभय पद, जन डरप्यौ जब दास कहायौ॥ ३॥

(२९९)

ब्रजभूमि मोहिनी मैं जानी।
मोहन कुंज मोहन बृंदाबन मोहन जमुना पानी॥ १॥
मोहन नारि सकल गोकुलकी बोलति अमरतबानी।
श्रीभटके प्रभु मोहन नागर मोहनि राधारानी॥ २॥

(३००)

सेब्य हमारे हैं पिय प्यारे बृंदा बिपिन-बिलासी।
नँद-नंदन बृषभानु-नंदिनी चरन अनन्य उपासी॥ १॥
मत्त प्रनयबस सदा एकरस बिबिध निकुंजनिवासी।
श्रीभट जुगुलरूप बंसीबट सेवत सब सुखरासी॥ २॥

(३०१)

स्यामा स्याम पद पावैं सोई।
मन-बच-क्रम करि सदा नित्य जेहि हरि गुरु पदपंकज रति होई॥ १॥
नंदसुवन वृषभानुसुता पद भजै तजै मन आनै जोई।
श्रीभट अटकि रहे स्वामीपन आन ब्रतै मानै सब छोई॥ २॥

(३०२)

जुगुलकिसोर हमारे ठाकुर।
सदा सरबदा हम जिनके हैं, जनम जनम घरजाये चाकर॥ १॥
चूक परै परिहरैं न कबहूँ, सबही भाँति दयाके आकर।
जे श्रीभट्ट प्रगट त्रिभुवनमें, प्रनतनि पोषत परम सुधाकर॥ २॥

(३०३)

बलि-बलि श्रीराधे-नँदनँदना।
मेरे मनकी अमित अघटनी को जानै तुम बिना॥
भलेई चारु चरन दरसाये ढूँढ़त फिरिहौं बृंदाबना।
जै श्रीभट स्यामा स्यामरूप पै निवछावर तन-मना॥

(३०४)

राधे, तेरे प्रेमकी कापै कहि आवै।
तेरीसी गोपकी तोपै बनि आवै॥
मन-बच-क्रम दुरगम सदा तापै चरन छुवावै।
जै श्रीभट मति बृषभानु तेज प्रताप जनावै॥

(३०५)

बसौ मेरे नैननिमें दोउ चंद।
गौरबदनि बृषभानुनंदिनी, स्यामबरन नँदनंद॥ १॥
गोकुल रहे लुभाय रूपमें निरखत आनँदकंद।
जै श्रीभट्ट प्रेमरस-बंधन, क्यों छूटै दृढ़ फंद॥ २॥

❑ ❑

सूरदास मदनमोहन

(३०६) बधाई

नंदजू मेरे मन आनंद भयो, हौं गोबरधन तें आयौ।
तुम्हरे पुत्र भयो, हौं सुनिकै अति आतुर उठि धायौ॥
बंदीजन अरु भिच्छुक सुनि सुनि देस-देस तें आये।
इक पहले ही आसा लागे बहुत दिनन तें छाये॥
ते पहिरैं कंचन मनि मुकता नाना बसन अनूप।
मोहि मिले मारगमें मानो जात कहूके भूप॥
तुम तौ परम उदार नंदजू जोइ माँग्या सोइ दीनौं।
ऐसौ और कौन त्रिभुवनमें तुम सरि साकौ कीनौं॥
लच्छ हेतु तौ पर्‌यौ रहौं हौं बिनु देखे नहिं जैहौं।
नंदराइ सुनि बिनती मेरी तबै बिदा भलि ह्वैहौं॥
दीजै मोहि कृपा करि साईं जो हौं आयौ माँगन।
जसुमति सुत अपने पाइनि चलि खेलत आवै आँगन॥
जब तुम मदनमोहन कहि टेरौ यह सुनि हौं घर जाउँ।
हौं तौ तेरो घरकौ ढाढ़ी सूरदास मो नाउँ॥

(३०७)

प्रगट भई सोभा त्रिभुवनकी भानु गोपके आइ।
अदभुत रूप देखि ब्रजबनिता रीझीं लेत बलाइ॥
नहिं कमला, नहिं सची, नहीं रति उपमाहू न समाइ।
जा हित प्रगट भये ब्रजभूषन धन्य पिता धन माइ॥
जुग जुग राज करो दोऊ जन इत तुव उत नँदराइ।
उनके मदनमोहन तेरे स्यामा सूरदास बलि जाइ॥

(३०८) देस

मेरे गति तुमहीं अनेक तोष पाऊँ।
चरन-कमल-नख-मनिपर बिषै-सुख बहाऊँ।
घर घर जो डोलौं तौ हरि तुम्हैं लजाऊँ॥ १॥
तुम्हरौ कहाइ कहौ कौन कौ कहाऊँ।
तुमसे प्रभु छाँड़ि कहा दीननकौं धाऊँ॥ २॥
सीस तुम्हैं नाय कहौ कौनकौ नवाऊँ।
कंचन उर हार छाँड़ि काच क्यों बनाऊँ॥ ३॥
सोभा सब हानि करूँ जगतकौं हसाऊँ।
हाथीतें उतरि कहा गदहा चढ़ि धाऊँ॥ ४॥
कुमकुमकौ लेप छाँड़ि काजर मुँह लाऊँ।
कामधेनु घरमें तज अजा क्यों दुहाऊँ॥ ५॥
कनकमहल छाँड़ि क्योंऽब परन कुटी छाऊँ।
पाइन जो पेलौ प्रभु तौ न अनत जाऊँ॥ ६॥
सूरदास मदनमोहन जनम जनम गाऊँ।
संतनकी पनहीकौ रच्छक कहाऊँ॥ ७॥

(३०९) बिलावल

मधुके मतवारे स्याम, खोलौ प्यारे पलकैं।
सीस मुकुट लटा छुटी और छुटी अलकैं॥ १॥
सुर-नर-मुनि द्वार ठाढ़ दरसहेतु किलकैं।
नासिकाके मोति सोहैं बीच लाल ललकैं॥ २॥

कटि पीताम्बर मुरली कर स्त्रवन-कुँडल झलकैं।
सूरदास मदनमोहन दरस दैहौं भलकैं॥ ३॥

(३१०) देस

चलौ री, मुरली सुनिये, कान्ह बजाई जमुना तीर।
तजि लोकलाज कुलकी कानि गुरुजनकी भीर॥
जमुनाजल थकित भयो बछा न पीवैं छीर।
सुरविमान थकित भये थकित कोकिल-कीर॥
देहकी सुधि बिसरि गई बिसरौ तनकौ चीर।
मात तात बिसरि गये बिसरे बालक-बीर॥
मुरली-धुनि मधुर बाजै कैसेकै धरौं धीर।
सूरदास मदनमोहन जानत हौ परपीर॥

❑ ❑

नागरीदास

(३११)

हमारै मुरलीवारौ स्याम।
बिनु मुरली बनमाल चन्द्रिका, नहिं पहिचानत नाम॥
गोपरूप बृंदाबन-चारी, ब्रज-जन पूरन काम।
याही सों हित चित बढ़ौ नित, दिन-दिन पल-छिन जाम॥
नंदीसुर गोबरधन गोकुल बरसानों बिस्राम।
नागरिदास द्वारका मथुरा, इनसों कैसो काम॥

(३१२)

चरचा करी कैसे जाय।
बात जानत कछुक हमसों, कहत जिय थहराय॥
कथा अकथ सनेहकी, उर नाहिं आवत और।
बेद समृती उपनिषदकों, रही नाहिंन ठौर॥
मनहिमें है कहनि ताकी, सुनत श्रोता नैन।
सोऽब नागर लोग बूझत, कहि न आवत बैन॥

(३१३)

जो मेरै तन होते दोय।
मैं काहू तें कछु नहिं कहतौ,
मोतें कछु कहतौ नहिं कोय॥ १॥
एक जु तन हरि-बिमुखनके
सँग रहतो देस-बिदेस।
बिबिध भाँति के जग-दुख सुख जहँ,
नहीं भगति-लवलेस॥ २॥
एक जु तन सत्संग रंग रँगि,
रहतौ अति सुख पूर।
जनम सफल कर लेतौ ब्रज बसि,
जहँ ब्रज जीवनमूर॥ ३॥
द्वै तन बिन द्वै काज न ह्वैहैं,
आयु सु छिन-छिन छीजै।
नागरिदास एक तनते अब,
कहौ कहा करि लीजै॥ ४॥

(३१४)

दरपन देखत, देखत नाहीं।
बालापन फिर प्रकट स्याम कच, बहुरि स्वेत ह्वै जाहीं॥
तीन रूप या मुखके पलटे, नहिं अयानता छूटी।
नियरे आवत मृत्यु न सूझत, आँखें हियकी फूटी॥
कृष्ण भगति सुख लेत न अजहूँ बृद्ध देह दुखरासी।
नागरिया सोई नर निहचै, जीवत नरकनिवासी॥

(३१५)

हरि जू अजुगत जुगत करेंगे।
परबत ऊपर बहल काँचकी, नीके लै निकरेंगे॥
गहिरे जल पाषान नाव बिच आछी भाँति तरेंगे।
मैंन तुरंग चढ़े पावक बिच, नाहीं पिघरि परेंगे॥

याहू ते असमंजस हो किन, प्रभु दृढ़ कर पकरेंगे।
नागर सब आधीन कृपाके, हम इन डर न करेंगे॥

(३१६)

दुहुँ भाँतिनकौ मैं फल पायौ।
पाप किये ताते बिमुखन सँग, देस देस भटकायौ।
तुच्छ कामना हित कुसंग बसि, झूठे लोभ लुभायौ॥
कौन पुन्य अब बृंदाबन बरसाने सुबस बसायौ।
आनँदनिधि ब्रज अनन्य-मंडली, उर लगाय अपनायौ॥
सुनिबेहूकों दुरलभ सो सब रस बिलास दरसायौ।
स्यामा-स्याम दास नागरकौ, कियो मनोरथ भायौ॥

(३१७)

हमारी सब ही बात सुधारी।
कृपा करी श्रीकुंजबिहारिनि, अरु श्रीकुंजबिहारी॥
राख्यौ अपने बृंदाबनमें, जिहि ठाँ रूप उजारी।
नित्य केलि आनंद अखंडित, रसिक संग सुखकारी॥
कलह कलेस न ब्यापै इहि ठाँ, ठौर बिस्व तें न्यारी।
नागरिदासहिं जन्म जितायो, बलिहारी बलिहारी॥

(३१८)

भगति बिन हैं सब लोग निखट्टू।
आपसमें लड़िबे भिड़िबेकों, जैसे जंगी टट्टू॥
नित उनकी मति भ्रमत रहत है, जैसे लोलुप लट्टू।
नागरिया जगमें वे उछरत जिहि बिधि नटके बट्टू॥

(३१९)

किते दिन बिन बृंदाबन खोये।
योंही बृथा गये ते अब लौं, राजस रंग समोये॥
छाँड़ि पुलिन फूलनकी सैया सूल सरनि सिर सोये।
भीजे रसिक अनन्य न दरसे, बिमुखनिके मुख जोये॥

हरि बिहारकी ठौरि रहे नहिं, अति अभाग्य बल बोये।
कलह सराय बसाय भठ्यारी, माया राँड़ बिगोये॥
इक रस ह्याँकि सुख तजिकै हाँ, कबौं हँसे कबौं रोये।
कियौ न अपनो काज, पराये भार सीसपर ढोये॥
पायौ नहिं आनंद लेस मैं, सबै देस टकटोये।
नागरिदास बसै कुंजनमें, जब सब बिधि सुख भोये॥

(३२०)

ब्रजबासीतें हरिकी सोभा।
बैन अधर छबि भये त्रिभंगी, सो वा ब्रजकी गोभा॥
ब्रज बन धातु बिचित्र मनोहर, गुंज पुंज अति सोहैं।
ब्रजमोरनिको पंख सीसपर ब्रज जुवती मन मोहैं॥
ब्रज-रजनीकी लगति अलकपै, ब्रजद्रुम फल अरु माल।
ब्रज गउवनके पीछे आछे, आवत मद गज चाल॥
बीच लाल ब्रजचंद सुहाये, चहूँ ओर ब्रज गोप।
नागरिया परमेसुरहूकी ब्रज तें बाढ़ी ओप॥

(३२१)

ब्रज-सम और कोउ नहिं धाम।
या ब्रजमें परमेसुरहूके सुधरे सुंदर नाम॥
कृष्ण नाँव यह सुन्यो गर्गतें, कान्ह-कान्ह कहि बोलैं।
बालकेलि रस मगन भये सब, आनँदसिंधु कलोलैं॥
जसुदानंदन, दामोदर, नवनीत प्रिय, दधिचोर।
चीरचोर, चितचोर, चिकनियाँ चातुर नवलकिसोर॥
राधा-चंद-चकोर, साँवरौ, गोकुलचंद, दधिदानी।
श्रीबृंदाबनचंद, चतुर चित, प्रेम-रूप-अभिमानी॥
राधारमन, सु राधाबल्लभ, राधाकान्त, रसाल।
बल्लभ-सुत, गोपीजन, बल्लभ गिरिवर-धर छबिजाल॥
रासबिहारी, रसिकबिहारी, कुंजबिहारी स्याम।
बिपिनबिहारी, बंकबिहारी, अटल बिहारऽभिराम॥

छैलबिहारी, लालबिहारी, बनवारी, रसकंद।
गोपीनाथ, मदनमोहन, पुनि बंसीधर, गोबिंद॥
ब्रजलोचन, ब्रजरमन, मनोहर, ब्रजउत्सव, ब्रजनाथ।
ब्रजजीवन, ब्रजबल्लभ सबके, ब्रजकिसोर, सुभगाथ॥
ब्रजमोहन, ब्रजभूषन, सोहन, ब्रजनायक, ब्रजचंद।
ब्रजनागर, ब्रजछैल, छबीले, ब्रजवर, श्रीनँदनंद॥
ब्रज आनँद, ब्रजदूलह नितहीं, अति सुंदर ब्रजलाल।
ब्रज गउवनके पाछे आछे, सोहत ब्रजगोपाल॥
ब्रज संबंधी नाम लेते ये, ब्रजकी लीला गावै।
नागरिदासहि मुरलीवारो, ब्रजको ठाकुर भावै॥

❑ ❑

भगवतरसिक

(३२२) पद

लखी जिन लालकी मुसक्यान।
तिनहिं बिसरी बेदबिधि, जप, जोग, संयम, ध्यान॥
नेम, ब्रत, आचार, पूजा, पाठ, गीता-ज्ञान।
रसिक भागवत दृग दई असि, ऐंचिकै मुख म्यान॥

(३२३)

परसपर दोउ चकोर दोउ चंदा।
दोउ चातक, दोउ स्वाती, दोउ घन, दोउ दामिनी अमंदा॥ १॥
दोउ अरबिंद, दोऊ अलि लंपट, दोउ लोहा, दोउ चुंबक।
दोउ आसिक महबूब दोउ मिलि, जुरे जुराफा अंबक॥ २॥
दोउ मेघ, दोउ मोर, दोउ मृग, दोउ राग-रस-भीने।
दोउ मनि बिसद, दोउ बर पन्नग, दोउ बारि, दोउ मीने॥ ३॥
भगवतरसिक बिहारिनि प्यारी, रसिक बिहारी प्यारे।
दोउ मुख देखि जियत अधरामृत पियत होत नहिं न्यारे॥ ४॥

(३२४) सारंग

बेषधारी हरिके उर सालैं।
लोभी, दंभी, कपटी नट-से, सिस्नोदरको पालैं॥ १॥
गुरू भये घर घरमें डोलैं, नाम धनीको बेंचैं।
परमारथ सपने नहिं जानैं पैसनहीको खैंचैं॥ २॥
कबहुँक बकता ह्वै बनि बैठे, कथा भागवत गावैं।
अरथ अनरथ कछू नहिं भाषैं, पैसनहीकों धावैं॥ ३॥
कबहुँक हरिमंदिरकों सेवैं, करैं निरंतर बासा।
भाव भगतिकौ लेस न जानैं, पैसनहीकी आसा॥ ४॥
नाचैं, गावैं, चित्र बनावैं, करैं काब्य चटकीली।
साँच बिना हरि हाथ न आवै, सब रहनी है ढीली॥ ५॥
बिनु बिबेक-बैरागय भगति बिनु सत्य न एकौ मानौ।
भगवत बिमुख कपट चतुराई, सो पाखंडै जानौ॥ ६॥

(३२५)

इतने गुन जामें सो संत।
श्रीभागवत मध्य जस गावत, श्रीमुख कमलाकंत॥
हरिकौ भजन साधुकी सेवा सर्वभूत पर दाया।
हिंसा, लोभ, दंभ, छल त्यागै, बिषसम देखै माया॥
सहनसील, आसय उदार अति, धीरजसहित बिबेकी।
सत्य बचन सबसों सुखदायक, गहि अनन्य ब्रत एकी॥
इंद्रीजित, अभिमान न जाके, करै जगतकों पावन।
भगवतरसिक तासुकी संगति तीनहुँ ताप नसावन॥

(३२६) गौरी

नमो नमो बृंदाबनचंद।
नित्य, अनन्त, अनादि, एकरस, पिय प्यारी बिहरत स्वच्छंद॥ १॥
सत्त-चित्त-आनंदरूपमय खग-मृग, द्रुम-बेली बर बृंद।
भगवतरसिक निरंतर सेवत, मधुप भये पीवत मकरंद॥ २॥

(३२७) ईमन

जय जय रसिक रवनीरवन।
रूप, गुन, लावन्य, प्रभुता, प्रेम पूरन भवन॥
बिपति जनकी भानबेकों, तुम बिना कहु कवन।
हरहु मनकी मलिनता, ब्यापै न माया पवन॥
बिषय रस इंद्री अजीरन अति करावहु बवन।
खोलिये हियके नयन, दरसै सुखद बन अवन॥
चतुर, चिंतामनि, दयानिधि, दुसह दारिद दवन।
मेटिये भगवत ब्यथा, हँसि भेंटिये तजि मवन॥

❑ ❑

नारायण-स्वामी

(३२८) आसावरी

सखि, मेरे मनकी को जानै।
कासों कहौं सुनै जो चित दै, हितकी बात बखानै॥
ऐसो को है अंतरजामी, तुरत पीर पहिचानै।
नारायन जो बीत रही है, कब कोई सच मानै॥

(३२९) सोरठ

जाहि लगन लगी घनस्यामकी।
धरत कहूँ पग, परत हैं कितहूँ, भूल जाय सुधि धामकी॥ १॥
छबि निहार नहिं रहत सार कछु, घरि पल निसिदिन जामकी।
जित मुँह उठै तितै ही धावै, सुरति न छाया घामकी॥ २॥
अस्तुति निन्दा करौ भलै ही, मेंड़ तजी कुल गामकी।
नारायन बौरी भइ डोलै, रही न काहू कामकी॥ ३॥

(३३०)

मोहन बसि गयो मेरे मनमें।
लोक-लाज कुल-कानि छूटि गई, याकी नेह-लगनमें॥
जित देखों तितही वह दीखै, घर-बाहर, आँगनमें।
अंग-अंग प्रति रोम-रोममें, छाइ रह्यो तन-मनमें॥

कुंडल-झलक कपोलन सोहै, बाजूबंद भुजनमें।
कंकन-कलित ललित बनमाला, नूपुर धुनि चरननमें॥
चपल नैन, भ्रकुटी बर बाँकी, ठाढ़ो सघन लतनमें।
नारायन बिन मोल बिकी हौं याकी नैंक हसनमें॥

(३३१)

मनमोहन जाकी दृष्टि परत, ताकी गति होत है और और।
न सुहात भवन, तन असन बसन, बनहीको धावत दौर दौर॥ १॥
नहिं धरत धीर, हिय बरत पीर, ब्याकुल ह्वै भटकत ठौर ठौर।
कब अँसुवन भर नारायन मन, झाँकत डोलत पौर-पौर॥ २॥

(३३२) खमाच

प्रीतम, तू मोहिं प्रान ते प्यारौ।
जो तोहि देखि हियौ सुख पावत, सो बड़ भागनवारौ॥
तू जीवनधन सरबस तू ही, तू ही दृगनकौ तारौ।
जो तोकों पलभर न निहारूँ, दीखत जग अँधियारौ॥
मोद बढ़ावनके कारन हम, मानिनि रूपहिं धारौ।
नारायन हम दोउ एक हैं फूल सुगंध न न्यारौ॥

(३३३) बिहाग

करु मन, नंदनँदनको ध्यान।
यहि अवसर तोहिं फिर न मिलैगौ, मेरौ कह्यौ अब मान॥
घूँघरवारी अलकैं मुखपै, कुंडल झलकत कान।
नारायन अलसाने नैना, झूमत रूप निधान॥

(३३४) झँझोटी

स्याम दृगनकी चोट बुरी री।
ज्यों ज्यों नाम लेति तू वाकौ, मो घायलपै नौन पुरी री॥ १॥
ना जानौं अब सुध-बुध मेरी, कौन बिपिनमें जाय दुरी री।
नारायन नहिं छूटत सजनी, जाकी जासों प्रीति जुरी री॥ २॥

(३३५) कान्हरा

नंदनँदनके ऐसे नैन।
अति छबि भरे नागके छौना, डरति डसैं करि सैन॥
इन सम साबर मंत्र न होई, जादू जंत्र, तंत्र नहिं कोई।
एक दृष्टिमें मन हरि लेवैं करि देवैं बेचैन॥
चितवनमें घायल करि डारैं इनपै कोटि बान लै बारैं।
अति पैने, तिरछे हिय कसकैं, स्वास न देवैं लेन॥
चंचल चपल मनोहर कारे, खंजन-मान लजावन हारे।
नारायन सुन्दर मतवारे अनियारे, दुख दैन॥

(३३६) काफी

या साँवरेसों मैं प्रीति लगाई।
कुल-कलंकतें नाहिं डरौंगी, अब तौ करौं अपनी मन भाई॥
बीच बजार पुकार, कहौं मैं चाहे करौ तुम कोटि बुराई।
लाज म्रजाद मिली औरनकों मृदु मुसकनि मेरे बट आई॥
बिनु देखे मनमोहन कौ मुख, मोहि लगत त्रिभुवन दुखदाई।
नारायन तिनकों सब फीकौ, जिन चाखी यह रूप-मिठाई॥

(३३७)

बेदरदी तोहि दरद न आवै।
चितवनमें चित बस करि मेरौ, अब काहेकों आँख चुरावै॥
कबसों परी द्वारपै तेरे, बिन देखे जियरा घबरावै।
नारायन महबूब साँवरे घायल करि फिर गैल बतावै॥

(३३८) नट

देख सखी नव छैल छबीलौ, प्रातसमय इततें को आवै।
कमलसमान बड़े दृग जाके, स्याम सलौनो मृदु मुसकावै॥ १॥
जाकी सुन्दरता जग बरनत, मुख-सोभा लखि चंद लजावै।
नारायन यह किधौं वही है, जो जसुमतिकौ कुँवर कहावै॥ २॥

(३३९) ईमन

मोपै कैसी यह मोहिनी डारी।
चितचोर छैल गिरिधारी॥
ग्रहकारजमें जी न लगत है, खानपान लगै खारी।
निपट उदास रहत हौं जबते, सूरत देखि तिहारी॥
संगकी सखी देति मोहिं धीरज, बचन कहत हितकारी।
एक न लगत कही काहूकी कहति कहति सब हारी॥
रही न लाज सकुच गुरुजनकी, तन मन सुरति बिसारी।
नारायन मोहिं समुझि बावरी, हँसत सकल नर नारी॥

(३४०) कबित्त

चाहै तू योग करि भृकुटीमध्य ध्यान धरि,
चाहै नाम रूप मिथ्या जानिकै निहार लै।
निरगुन, निरभय, निराकार ज्योति ब्याप रही,
ऐसो तत्त्वज्ञान निज मनमें तू धार लै॥
नारायन अपनेकौ आप ही बखान करि,
'मोतें वह भिन्न नहीं' या बिधि पुकार लै।
जौलौं तोहि नन्दकौ कुमार नाहिं दृष्टि पर्‍यौ,
तौलौं तू भलै बैठि ब्रह्मकों बिचार लै॥

(३४१) बिहाग

नयनों रे, चित-चोर बतावौ।
तुमहीं रहत भवन रखवारे, बाँके बीर कहावौ॥
तुम्हरे बीच गयौ मन मेरौ, चाहै सौंहैं खावौ।
अब क्यों रोवत हौ दइमारे, कहुँ तौ थाह लगावौ॥
घरके भेदी बैठि द्वार पै, दिनमें घर लुटवावौ।
नारायन मोहि बस्तु न चहिये, लेनेहार दिखावौ॥

(३४२) लावनी

रूपरसिक, मोहन, मनोज-मन-हरन, सकल-गुन-गरबीले।
छैल-छबीले चपललोचन चकोर चित चटकीले॥ टेक॥
रतन-जटित सिर मुकुट लटक रहि सिमट स्याम लट घुँघरारी।
बाल बिहारी कन्हैयालाल, चतुर, तेरी बलिहारी॥
लोलक मोती कान कपोलन झलक बनी निरमल प्यारी।
ज्योति उज्यारी, हमैं हरबार दरस दै गिरिधारी॥
बिज्जुछटा-सी दंतछटा मुख देखि सरदससि सरमीले।
छैल-छबीले चपललोचन चकोर चित चटकीले॥
मंद हसन, मृदु बचन तोतले, बय किसोर भोली-भाली।
करत चोचले, अमोलक अधर पीक रच रही लाली॥
फूल गुलाब चिबुक सुंदरता, रुचिर कंठछबि बनमाली।
कर सरोजमें, बुंद मेहँदी अति अमंद है प्रतिपाली॥
फूलछरी-सी नरम कमर करधनीसब्द हैं तुरसीले।
छैल-छबीले चपललोचन चकोर चित चटकीले॥
झँगुली झीन जरीपट कछनी, स्यामल गात सुहात भले।
चाल निराली, चरन कोमल पंकजके पात भले॥
पग नूपुर झनकार परम उत्तम जसुमतिके तात भले।
संग सखनके, जमुनतट गो-बछरान चरात भले॥
ब्रज-जुवतिनकौ प्रेम निरखि कर घर-घर माखन गटकीले।
छैल-छबीले, चपललोचन चकोर चित चटकीले॥
गावैं बाग बिलास चरित हरि सरद-रैन-रस रास करैं।
मुनिजन मोहैं, कृष्ण कंसादिक खल-दल नास करैं॥
गिरिधारी महराज सदा श्रीब्रजबृंदाबन बास करैं।
हरिचरित्रकों स्रवन सुन-सुन करि अति अभिलाष करैं॥
हाथ जोरि करि करे बीनती 'नारायन' दिल दरदीले।
छैल-छबीले चपललोचन चकोर चित चटकीले॥

(३४३) कालिंगड़ा

मूरख, छाड़ि बृथा अभिमान।
औसर बीति चल्यो है तेरौ, दो दिनकौ मेहमान॥
भूप अनेक भये पृथिवीपर, रूप तेज बलवान।
कौन बच्यो या काल ब्याल तें मिटि गये नाम निसान॥
धवल धाम धन, गज, रथ, सेना नारी चंद्र समान।
अंतसमै सबहीकों तजिकै, जाय बसे समसान॥
तजि सतसंग भ्रमत बिषयनमें, जा बिधि मरकट स्वान।
छिन भरि बैठि न सुमिरन कीन्हों, जासों होय कल्यान॥
रे मन मूढ़ अनत जनि भटकै, मेरौ कह्यौ अब मान।
नारायन ब्रजराज कुँवरसों, बेगहि करि पहिचान॥

(३४४)

टेर सुनों ब्रजराज-दुलारे।
दीन मलीन हीन सब गुनते, आय पर्‌यो हौं द्वार तिहारे॥ टेर॥
काम क्रोध अरु कपट मोह, मद, सो जाने निज प्रीतम प्यारे।
भ्रमत रह्यौं सँग इन बिषयनके, तुव पदकमल न मैं उर धारे॥ १॥
कौन कुकर्म किये नहिं मैंने, जो गये भूल सो लिये उधारे।
ऐसी खेप भरी रचि पचिकै चकित भये लखिकै बनिजारे॥ २॥
अब तौ एक बार कहौ हँसिके, आजहिते तुम भये हमारे।
वाहि कृपाते नारायनकी बेगि लगैगी नाव किनारे॥ ३॥

❑ ❑

ललितकिशोरी

(३४५) झँझोटी

मन पछितैहौ भजन बिनु कीने।
धन-दौलत कछु काम न आवै, कमल-नयन-गुन चित बिनु दीने॥ १॥
देखतकौ यह जगत सँगाती, तात-मात अपने सुख भीने।
ललितकिसोरी दुंद मिटै ना, आनँदकंद बिना हरि चीने॥ २॥

(३४६) गौरी

मुसाफिर, रैन रही थोरी।
जागु-जागु सुख-नींद त्यागि दै, होत बस्तु की चोरी॥
मंजिल दूरि भूरि भवसागर, मान क्रूर मति मोरी।
ललितकिसोरी हाकिमसों डरु, करै जोर बरजोरी॥

(३४७) पीलू

अब का सोवै सखि! जाग जाग।
रैन बिहात जातरस-बिरियाँ, चोलीके बँद ताग ताग॥
जोबन उमँग सकल कर बौरी आन-कान सब त्याग त्याग।
ललितकिसोरी लूट अनँदवा, पीतमके गर लाग लाग॥

(३४८)

लटक लटक मनमोहन आवनि।
झूमि झूमि पग धरत भूमिपर गति मातंग लजावनि॥
गोखुर-रेनुअंग अँग मंडित उपमा दृग सकुचावनि।
नव घनपै मनु झीन बदरिया, सोभा-रस बरसावनि॥
बिगसति मुखलौं कानि दामिनी दसनावलि दमकावनि।
बीच-बीच घनघोर माधुरी, मधुरी बेन बजावनि॥
मुकतमाल उर लसी छबीली, मनु बग-पाँति सुहावन।
बिंदु गुलाल गुपाल-कपोलन, इंद्रबधू छबि छावनि॥
रुनन झुनन किंकिनि धुनि मानों हंसनिकी चुहचावनि।
बिलुलित अलक धूरि धूसरतन, गमन लोटि भुव आवनि॥
जँघिया लसनि कनक कछनी पै, पटुका ऐंचि बँधावनि।
पीताम्बर फहरानि मुकुटछबि, नटवर बेस बनावनि॥
हलनि बुलाक अधर तिरछौंही बीरी सुरँग रचावनि।
ललितकिसोरी फूल-झरनियाँ मधुर-मधुर बतरावनि॥

(३४९) ईमन

साधो, ऐसिइ आयु सिरानी।
लगत न लाज लजावत संतन, करतहिं दंभ छदंभ बिहानी॥ १ ॥
माला हाथ ललित तुलसी गर, अँग-अँग भगवत छाप सुहानी।
बाहिर परम बिराग भजनरत, अंतस मति पर-जुबति नसानी॥ २ ॥
सुखसों ग्यान-ध्यान बरनत बहु, कानन रति नित बिषय कहानी।
ललितकिसोरी कृपा करौ हरि, हरि संताप सुहृद, सुखदानी॥ ३ ॥

(३५०) बिहाग

लाभ कहा कंचन तन पाये।
भजे न मृदुल कमल-दल-लोचन, दुख-मोचन हरि हरखि न ध्याये॥ १ ॥
तन-मन-धन अरपन ना कीन्हों, प्रान प्रानपति गुननि न गाये।
जोबन, धन कलधौत-धाम सब, मिथ्या आयु गँवाय गँवाये॥ २ ॥
गुरुजन गरब, बिमुख-रँग-राते डोलत सुख संपति बिसराये।
ललितकिसोरी मिटै ताप ना, बिनु दृढ़ चिंतामनि उर लाये॥ ३ ॥

(३५१)

मोहनके अति नैन नुकीले।
निकसे जात पार हियराके, निरखत निपट गँसीले॥
ना जानौं बेधन अनियतकी तीन लोकते न्यारी।
ज्यों-ज्यों छिदत मिठास हियेमें सुख लागत सुकुमारी॥
जबसों जमुना कूल बिलोक्यो, सब निसि-नींद न आवै।
उठत मरोर बंक चितवनियाँ, उर उत्पात मचावै॥
ललितकिसोरी आज मिलै, जहवाँ कुलकानि बिचारौं।
आग लगौं यह लाज निगोड़ी, दृग भरि स्याम निहारौं॥

(३५२) खेमटा

रे निरमोही, छबि दरसाय जा।
कान चातकी स्याम बिरह घन, मुरली मधुर सुनाय जा॥
ललितकिसोरी नैन चकोरन, दुति मुखचंद दिखाय जा।
भयौ चहत यह प्रान बटोही, रूसे पथिक मनाय जा॥

(३५३) ललित

लजीले, सकुचीले, सरसीले, सुरमीलेसे
कटीले औ कुटीले चटकीले मटकीले हैं।
रूपके लुभीले कजरीले उनमीले, बर-
छीले तिरछीलेसे फँसीले औ गँसीले हैं॥
ललितकिसोरी झमकीले, गरबीले मानों
अति ही रसीले, चमकीले और रँगीले हैं।
छबीले, छकीले, अरु नीलेसे, नसीले आली,
नैना नँदलालके नचीले औ नुकीले हैं॥

(३५४) झूलना

दुनियाके परपंचोंमें हम मजा नहीं कछु पाया जी।
भाई-बंधु, पिता-माता पति सबसों चित अकुलाया जी॥
छोड़-छाड़ घर, गाँव-नाँव कुल, यही पंथ मन भाया जी।
ललितकिसोरी आनँदघन सों अब हठि नेह लगाया जी॥
क्या करना है संपति-संतति, मिथ्या सब जग माया है।
शाल-दुशाले, हीरा-मोतीमें मन क्यों भरमाया है॥
माता-पिता पती-बंधु सब गोरखधंध बनाया है।
ललितकिसोरी आनँदघन हरि हिरदै कमल बसाया है॥
बन-बन फिरना बिहतर हमको रतन भवन नहिं भावै है।
लतातरे पड़ रहनेमें सुख नाहिन सेज सुहावै है॥
सोना कर धरि सीस भला अति तकिया ख्याल न आवै है।
ललितकिसोरी नाम हरीका जपि-जपि मन सचुपावै है॥
तजि दीनीं जब दुनिया-दौलत फिर कोईके घर जाना क्या।
कंद मूल-फल पाय रहैं अब खट्टा-मीठा खाना क्या॥
छिनमें साही बकसैं हमको मोतीमाल खजाना क्या।
ललितकिसोरी रूप हमारा जानै नाँ तहँ आना क्या॥
अष्टसिद्धि नवनिद्धि हमारी मुट्ठीमें हरदम रहतीं।
नहीं जवाहिर, सोना-चाँदी, त्रिभुवनकी संपति चहतीं॥

भावै ना दुनियाकी बातैं दिलबरकी चरचा सहती।
ललितकिसोरी पार लगावैं मायाकी सरिता बहती॥
गौर-स्याम बदनारबिंदपर जिसको बीर मचलते देखा।
नैन बान, मुसक्यान संग फँस फिर नहिं नेक सँभलते देखा॥
ललितकिसोरी जुगुल इश्कमें बहुतोंका घर घलते देखा।
डूबा प्रेमसिंधुका कोई हमने नहीं उछलते देखा॥
देखौ री, यह नंदका छोरा बरछी मारे जाता है।
बरछी-सी तिरछी चितवनकी पैनी छुरी चलाता है॥
हमको घायल देख बेदरदी मंद मंद मुसकाता है।
ललितकिसोरी जखम जिगरपर नौनपुरी बुरकाता है॥

(३५५) सारंग

मुरकि मुरकि चितवनि चित चोरै।
ठुमकि चलन हेरि दै बोलनि, पुलकनि नंदकिसोरै॥
सहरावनि गैयान चौंकनी, थपकन कर बनमाली।
गुहरावनि लै नाम सबनकौ धौरी धूमर आली॥
चुचकारनि चट झपटि बिचुकनी, हूँ हूँ रहौ रँगीली।
नियरावनि चोरवनि मगहीमें, झुकि बछियान छबीली॥
फिरकैयाँ लै निरत अलापन, बिच-बिच तान रसीली।
चितवनि ठिटुकि उढ़कि गैयासों, सीटी भरनि रसीली॥
चाँपन अधर सैन दै चंचल, नैनन मेलि कटारी।
जोरन कर हा हा करि मोहन, मुसकन ऐंड़ि बिहारी॥
बाँह उठाय उचकि पग टेरनि, इतै कितै हौ स्यामा।
निकसी नई आज तैं बनरिहु, मोरे ढिग अभिरामा॥
हरुवे खोर साँकरी जुवतिन, कहत गुलाम तिहारौ।
मिलियौ रैन मालती कुंजैं तहँ पिक अरुन निहारौ॥
काहू झटक चीर लकुटीतें, काहू पगैं दबावै।
काहू अंग परसि काहू तन, नैनन कोर नचावै॥

उरझत पट नूपुरसों पाछे झुकि झुकि कै सुरझावै।
ललितकिसोरी ललित लाड़िली, दृग संकेत बतावै॥

(३५६) खमाच

नैन चकोर, मुखचंदहूको बारि डारौं,
बारि डारौं चित्तहिं मनमोहन चितचोरपै।
प्रानहूकों बारि डारौं हँसन दसन लाल,
हेरन कटिलता और लोचनकी कोरपै॥
बारि डारौं मनहिं सुअंग अंग स्यामा स्याम,
महल मिलाप रस रासकी झकोरपै।
अतिहि सुघर बर सोहत त्रिभंगीलाल
सरबस बारौं वा ग्रीवाकी मरोरपै॥

(३५७)

अब तौ तेरिय हाथ बिकानी।
मृदु बोलन मुसक्यान माधुरी, तन मन नैन समानी॥
लोक-लाज, कुल कानि तजी सब, जामें तुव रुचि चीनी।
धरम करम ब्रत नेम सबै सो, तोई रँग रस भीनी॥
तुव कारन यह भेष बनायो प्रगट उघरि करि नाची।
नाउँ कुनाउँ धरौ किन कोऊ हौं नाहिन मति काँची॥
होनी होय सो होय भले ही, तनमन लगन लगी है।
ललितकिसोरी लाल तिहारे, मति अनुराग पगी है॥

(३५८) अल्हैया

मैं तुव पदतर रेनु रसीली।
तेरी सरवरि कौन करि सकै प्रेममई मूरति गरबीली॥
कोटिहु प्रान वारनें करिकै उरिनि न तोसों प्रीति रँगीली।
अपनी प्रेम छटा, करुना करि दीजै दान दयाल छबीली॥
का मुख करौं बड़ाई राई, ललितकिसोरी केलि हठीली।
प्रीति दसांस सतांस तिहारी, मोमें नाहिन नेह नसीली॥

(३५९) प्रभाती

कमलमुख खोलौ आजु पियारे।
बिगसित कमल कुमोदिनि मुकलित, अलिगन मत्त गुँजारे।
प्राची दिसि रबि थार आरती लिये ठनी निवछारे॥
ललितकिसोरी सुनि यह बानी कुरकुट बिसद पुकारे।
रजनी राज बिदा माँगै बलि निरखौ पलक उघारे॥

(३६०) अल्हैया

अब कुलकानि तजे ही बनैगी।
पलक ओट सत कोटि कलप सम, बिछुरत हिये कटारि हनैगी॥ १ ॥
ललितकिसोरी अंत एक दिन, तजिबेई जब तान तनैगी।
फिर का सोच देहु तिल अंजुलि, लेहु अंक रसकेलि छनैगी॥ २ ॥

❑ ❑

दादूदयाल

(३६१) गौरी

मेरे मन भैया राम कहौ रे॥ टेक॥
रामनाम मोहि सहजि सुनावै।
उनहिं चरन मन कीन रहौ रे॥ १ ॥
रामनाम ले संत सुहावै।
कोई कहै सब सीस सहौ रे॥ २ ॥
वाहीसों मन जोरे राखौ।
नीकै रासि लिये निबहौ रे॥ ३ ॥
कहत सुनत तेरौ कछू न जावै।
पाप निछेदन सोई लहौ रे॥ ४ ॥
दादू जन हरि-गुण गाओ।
कालहि जालहि फेरि दहौ रे॥ ५ ॥

(३६२)

बिरहणिकौं सिंगार न भावै।
है कोइ ऐसा राम मिलावै॥ टेक॥
बिसरे अंजन-मंजन, चीरा।
बिरह-बिथा यह ब्यापै पीरा॥ १॥
नौ-सत थाके सकल सिंगारा।
है कोइ पीड़ मिटावनहारा॥ २॥
देह-गेह नहिं सुद्धि सरीरा।
निसदिन चितवत चातक नीरा॥ ३॥
दादू ताहि न भावत आना।
राम बिना भई मृतक समाना॥ ४॥

(३६३)

तौलगि जिनि मारै तूँ मोहिं।
जौलगि मैं देखौं नहिं तोहिं॥ टेक॥
इबके बिछुरे मिलन कैसे होइ।
इहि बिधि बहुरि न चीन्है कोइ॥ १॥
दीनदयाल दया करि जोइ।
सब सुख-आनँद तुम सूँ होइ॥ २॥
जनम-जनमके बंधन खोइ।
देखण दादू अहि निशि रोइ॥ ३॥

(३६४)

संग न छाँडौं मेरा पावन पीव।
मैं बलि तेरे जीवन जीव॥ टेक॥
संगि तुम्हारे सब सुख होइ।
चरण-कँवलमुख देखौं तोहि॥ १॥
अनेक जतन करि पाया सोइ।
देखौं नैनौं तौ सुख होइ॥ २॥

सरण तुम्हारी अंतरि बास।
चरण-कँवल तहँ देहु निवास॥ ३॥
अब दादू मन अनत न जाइ।
अंतर बेधि रह्यो लौ लाइ॥ ४॥

(३६५)

ऐसा राम हमारे आवै।
बार पार कोइ अंत पावै॥ टेक॥
हलका भारी कह्या न जाइ। मोल-माप नाहिं रह्या समाइ॥ १॥
कीमत लेखा नहिं परिमाण। सब पचि हारे साध सुजाण॥ २॥
आगौ पीछौ परिमित नाहीं। केते पारिष आवहिं जाहीं॥ ३॥
आदि अंत-मधि लखै न कोइ। दादू देखे अचरज होइ॥ ४॥

(३६६)

राम रस मीठा रे, कोइ पीवै साधु सुजाण।
सदा रस पीवै प्रेमसूँ सो अबिनासी प्राण॥ टेक॥
इहि रस मुनि लागे सबै, ब्रह्मा-बिसुन-महेस।
सुर नर साधू संत जन, सो रस पीवै सेस॥ १॥
सिध साधक जोगी-जती, सती सबै सुखदेव।
पीवत अंत न आवई, ऐसा अलख अभेव॥ २॥
इहि रस राते नामदेव, पीपा अरु रैदास।
पिवत कबीरा ना थक्या अजहूँ प्रेम पियास॥ ३॥
यह रस मीठा जिन पिया, सो रस ही माहिं समाइ।
मीठे मीठा मिलि रह्या, दादू अनत न जाइ॥ ४॥

(३६७)

सोई सुहागनि साँच सिंगार। तन-मन लाइ भजै भरतार॥ टेक॥
भाव-भगत प्रेम-लौ लावै। नारी सोई सुख पावै॥ १॥
सहज सँतोष सील जब आया। तब नारी नाह अमोलिक पाया॥ २॥
तन मन जोबन सौंपि सब दीन्हा। तब कंत रिझाइ आप बस कीन्हा॥ ३॥
दादू बहुरि बियोग न होई। पिवसूँ प्रीति सुहागनि सोई॥ ४॥

(३६८)

तब हम एक भये रे भाई। मोहन मिल साँची मति आई॥ टेक॥
पारस परस भये सुखदाई। तब दुनिया दुरमत दूरि गमाई॥ १॥
मलयागिरि मरम मिल पाया। तब बंस बरण-कुल भरम गँवाया॥ २॥
हरिजल नीर निकट जब आया। तब बूँद-बूँद मिल सहज समाया॥ ३॥
नाना भेद भरम सब भागा। तब दादू एक रंगै रँग लागा॥ ४॥

(३६९)

इत है नीर नहावन जोग। अनतहि भरम भूला रे लोग॥ टेक॥
तिहि तटि न्हाये निर्मल होइ। बस्तु अगोचर लखै रे सोइ॥ १॥
सुघट घाट अरु तिरिबौ तीर। बैठे तहाँ जगत-गुर पीर॥ २॥
दादू न जाणै तिनका भेव। आप लखावै अंतर देव॥ ३॥

(३७०) माली गौड़ी

मेरा मेरा छोड़ गँवारा, सिरपर तेरे सिरजनहारा।
अपने जीव बिचारत नाहीं, क्या ले गइला बंस तुम्हारा॥ टेक॥
तब मेरा कत करता नाहीं, आवत है हंकारा।
काल-चक्रसूँ खरी परी रे, बिसर गया घर-बारा॥ १॥
जाइ तहाँका संयम कीजै, बिकट पंथ गिरधारा।
दादू रे तन अपना नाहीं, तौ कैसे भयो सँसारा॥ २॥

(३७१) कल्यान

जगसूँ कहा हमारा। जब देख्या नूर तुम्हारा॥ टेक॥
परम तेज घर मेरा। सुख-सागर माहिं बसेरा॥ १॥
झिलिमिलि अति आनंदा। पाया परमानंदा॥ २॥
जोति अपार अनंता। खेलैं फाग बसंता॥ ३॥
आदि अंत असथाना। दादू सो पहिचाना॥ ४॥

(३७२) कान्हड़ा

आव पियारे मीत हमारे। निस-दिन देखूँ पाँव तुम्हारे॥ टेक॥
सेज हमारी पीव सँवारी। दासी तुम्हारी सो धन वारी॥ १॥

जे तुझ पाऊँ अंग लगाऊँ । क्यूँ समझाऊँ बारण जाऊँ॥ २ ॥
पंथ निहारूँ बाट सँवारूँ । दादू तारूँ तन मन वारूँ॥ ३ ॥

(३७३) केदारा

अरे मेरा अमर उपावणहार रे । खालिक आशिक तेरा॥ टेक॥
तुमसूँ राता तुमसूँ माता । तुमसूँ लागा रंग रे खालिक॥ १ ॥
तुमसूँ खेला तुमसूँ मेला । तुमसूँ प्रेम–सनेह रे खालिक॥ २ ॥
तुमसूँ लैणा तुमसूँ दैणा । तुमहीसूँ रत होइ रे खालिक॥ ३ ॥
खालिक मेरा आशिक तेरा । दादू अनत न जाइ रे खालिक॥ ४ ॥

(३७४)

बटाऊ रे चलना आज कि काल।
समझ न देखै कहा सुख सोवै,
रे मन राम सँभाल॥ टेक॥
जैसैं तरवर बिरख बसेरा,
पंखी बैठे आइ।
ऐसैं यह सब हाट पसारा,
आप आप कूँ जाइ॥ १ ॥
कोइ नहिं तेरा सजन सँगाती,
जिनि खोवै मन मूल।
यह संसार देखि मत भूलै,
सबही सेंबल फूल॥ २ ॥
तन नहिं तेरा, धन नहिं तेरा,
कहा रह्यो इहि लागि।
दादू हरि बिन क्यूँ सुख सोवै,
काहे न देखैं जागि॥ ३ ॥

(३७५)

कोइ जान रे मरम माधइया केरौ।
कैसें रहै करै का सजनी प्राण मेरौ॥ टेक॥
कौण बिनोद करत री सजनी, कौणनि संग बसेरौ।
संत-साध गति आये उनके करत जु प्रेम घनेरौ॥ १॥
कहाँ निवास बास कहँ, सजनी गवन तेरौ।
घट-घट माहैं रहै निरंतर, ये दादू नेरौ॥ २॥

(३७६) मारू

क्यों बिसरै मेरा पीव पियारा।
जीवकी जीवन प्राण हमारा॥ टेक॥
क्यौंकर जीवै मीन जल बिछुरें,
तुम बिन प्राण सनेही।
चिंतामणि जब करतैं छूटै,
तब दुख पावै देही॥ १॥
माता बालक दूध न देवै,
सो कैसें करि पीवै।
निरधनका धन अनत भुलाना,
सो कैसे करि जीवै॥ २॥
बरखहु राम सदा सुख अमरित,
नीझर निरमल धारा।
प्रेम पियाला भर भर दीजै,
दादू दास तुम्हारा॥ ३॥

(३७७)

कबहूँ ऐसा बिरह उपावै रे।
पिव बिन देखैं जीव जावै रे॥ टेक॥
बिपत हमारी सुनौ सहेली।
पिव बिन चैन न आवै रे॥

ज्यों जल मीन भीन तन तलफै।
पिव बिन बज्र बिहावै रे॥ १॥
ऐसी प्रीति प्रेमको लागै।
ज्यों पंखी पीव सुनावै रे॥
त्यों मन मेरा रहै निसबासुर।
कोइ पीवकूँ आणि मिलावै रे॥ २॥
तौ मन मेरा धीरज धरई।
कोइ आगम आणि जणावै रे॥
तौ सुख जीव दादूका पावै।
पल पिवजी आप दिखावै रे॥ ३॥

(३७८)

जागि रे सब रैण बिहाणी।
जाइ जनम अँजुलीको पाणी॥ टेक॥
घड़ी घड़ी घड़ियाल बजावै।
जे दिन जाइ सो बहुरि न आवै॥ १॥
सूरज-चंद कहैं समुझाइ।
दिन-दिन आब घटती जाइ॥ २॥
सरवर-पाणी तरवर-छाया।
निसदिन काल गरासै काया॥ ३॥
हंस बटाऊ प्राण पयाना।
दादू आतम राम न जाना॥ ४॥

(३७९) **रामकली**

अहो नर नीका है हरिनाम।
दूजा नहीं नाँउ बिन नीका, कहिले केवल राम॥ टेक॥
निरमल सदा एक अबिनासी, अजर अकल रस ऐसा।
दृढ़ गहि राखि मूल मन माहीं, निरख देखि निज कैसा॥ १॥
यह रस मीठा महा अमीरस, अमर अनूपम पीवै।
राता रहै प्रेमसूँ माता, ऐसैं जुगि जुगि जीवै॥ २॥

दूजा नहीं और को ऐसा, गुर अंजन करि बूझै।
दादू मोटे भाग हमारे, दास बमेकी बूझै॥ ३॥

(३८०)

पंडित राम मिलै सो कीजै।
पढ़ि-पढ़ि बेद पुराण बखाने,
सोई तत कहि दीजै॥ टेक॥
आतम रोगी बिषय बियाधी,
सोइ करि औषध सारा।
परसत प्राणी होइ परम सुख,
छूटै सब संसारा॥ १॥
ये गुण इंद्री अगिनि अपारा,
तासन जले सरीरा।
तन मन सीतल होइ सदा सुख,
सो जल नावौ नीरा॥ २॥
सोई मारग हमहिं बतावौ,
जिहि पँथ पहुँचै पारा।
भूल न परै उलट नहिं आवै,
सो कुछ करहु बिचारा॥ ३॥
गुर उपदेस देहु कर दीपक,
तिमर मिटै सब सूझै।
दादू सोई पंडित ग्याता,
राम-मिलनकी बूझै॥ ४॥

(३८१) आसावरी

तूँ हीं मेरे रसना तूँ हीं मेरे बैना।
तूँ हीं मेरे स्रवना तूँ हीं मेरे नैना॥ टेक॥
तूँ हीं मेरे आतम कँवल मँझारी।
तूँ हीं मेरे मनसा तुम्ह परिवारी॥ १॥

तूँ हीं मेरे मनहीं तूँ हीं मेरे साँसा।
तूँ हीं मेरे सुरतैं प्राण निवासा॥ २॥
तूँ हीं मेरे नख-सिख सकल सरीरा।
तूँ हीं मेरे जिय रे ज्यूँ जलनीरा॥ ३॥
तुम्ह बिन मेरे और कोइ नाहीं।
तूँ हीं मेरी जीवनि दादू माँहीं॥ ४॥

(३८२)

बाबा नाहीं दूजा कोई।
एक अनेकन नाँव तुम्हारे, मो पैं और न होई॥ टेक॥
अलख इलाही एक तूँ तूँ हीं राम रहीम।
तूँ हीं मालिक मोहना, कैसो नाँउ करीम॥ १॥
साँई सिरजनहार तूँ, तूँ पावन तूँ पाक।
तूँ काइम करतार तूँ, तूँ हरि हाजिर आप॥ २॥
रमिता राजिक एक तूँ, तूँ साराँग सुबहान।
कादिर करता एक तूँ, तूँ साहिब सुलतान॥ ३॥
अविगत अल्लह एक तूँ, गनी गुसाईं एक।
अजब अनूपम आप है, दादू नाँव अनेक॥ ४॥

(३८३) देवगंधार

मन मुरिखा तैं योंहीं जनम गँवायौ।
साँईंकेरी सेवा न कीन्हीं, इहि कलि काहेकूँ आयौ॥ टेक॥
जिन बातन तेरौ छूटिक नाहीं, सोई मन तेरौ भायौ।
कामी ह्वै बिषयासँग लाग्यो रोम रोम लपटायौ॥ १॥
कुछ इक चेति बिचारी देखौ, कहा पाप जिय लायौ।
दादूदास भजन करि लीजै, सुपिने जग डहकायौ॥ २॥

(३८४) परज

नूर रह्या भरपूर, अमीरस पीजिये।
रस मोहैं रस होइ, लाहा लीजिये॥ टेक॥
परगट तेज अनंत, पार नहिं पाइये।
झिलिमिल-झिलिमिल होइ, तहाँ मन लाइये॥ १॥
सहजैं सदा प्रकास, ज्योति जल पूरिया।
तहाँ रहै निज दास, सेवग सूरिया॥ २॥
सुख-सागर वार न पार, हमारा बास है।
हंस रहैं ता माहिं, दादू दास है॥ ३॥

(३८५) टोड़ी

तू साँचा साहिब मेरा।
करम करीम कृपाल निहारौ, मैं जन बंदा तेरा॥ टेक॥
तुम दीवान सबहिनकी जानौं, दीनानाथ दयाला।
दिखाइ दीदार मौज बंदेकूँ, काइम करौ निहाला॥
मालिक सबै मुलिकके साँइ, समरथ सिरजनहारा।
खैर खुदाइ खलकमें खेलत, दे दीदार तुम्हारा॥
मैं सिकस्ता दरगह तेरी हरि हजूर तूँ कहिये।
दादू द्वारैं दीन पुकारै, काहे न दरसन लहिये॥

(३८६) बिलावल

सोई साध-सिरोमणि, गोबिंद गुण गावै।
राम भजै बिषिया तजै, आपा न जनावै॥ टेक॥
मिथ्या मुख बोलै नहीं पर-निंद्या नाहीं।
औगुण छोड़ै गुण गहै, मन हरिपद-माहीं॥ १॥
नरबैरी सब आतमा, पर आतम जानै।
सुखदाई समता गहै, आपा नहिं आनै॥ २॥
आपा पर अंतर नहीं, निरमल निज सारा।
सतबादी साचा कहै, लै लीन बिचारा॥ ३॥

राम राग, विराग रामहिं, राम स्नेहागार।
राम प्रेमद, राम प्रेमिक, प्रेम-पारावार॥
सब मिल कहो जय जय राम॥ राम०॥
राम बिधि, शिव राम, पालक विष्णु विश्वाधार।
राममय जग, राम जगमय, रामही विस्तार॥
सब मिल कहो जय जय राम॥ राम०॥

(११६) राग सोहनी

चाहता जो परम सुख तू, जाप कर हरिनामका।
परम पावन, परम सुन्दर, परम मंगलधामका॥
लिया जिसने है कभी हरि-नाम भय भ्रम-भूलसे।
तर गया, वह भी तुरत, बंधन कटे जड़-मूलसे॥
हैं सभी पातक पुराने घास सूखेके समान।
भस्म करनेको उन्हें हरिनाम है पावक महान॥
सूर्य उगते ही अँधेरा नाश होता है यथा।
सभी अघ हैं नष्ट होते नामकी स्मृतिसे तथा॥
जाप करते जो चतुर नर सावधानीसे सदा।
वे न बँधते भूलकर यमपास दारुणमें कदा॥
बात करते, काम करते, बैठते-उठते समय।
राह चलते नाम लेते विचरते हैं वे अभय॥
साथ मिलकर प्रेमसे हरिनाम करते गान जो।
मुक्त होते मोहसे कर प्रेम-अमृत पान सो॥

❑ ❑

भजन-महिमा

(११७) राग खमाच

रे मन हरि सुमिरन करि लीजै॥ टेक॥
हरिको नाम प्रेमसों जपिये, हरिरस रसना पीजै।
हरिगुन गाइय, सुनिय निरंतर, हरि-चरननि चित दीजै॥

(३८९)

ऐसो कछु अनुभव कहत न आवै।
साहिब मिलै तो को बिलगावै॥ टेक॥
सबमें हरि है हरिमें सब है, हरि अपनो जिन जाना।
साखी नहीं और कोइ दूसर, जाननहार सयाना॥ १॥
बाजीगरसों राचि रहा, बाजीका मरम न जाना।
बाजी झूठ साँच बाजीगर, जाना मन पतियाना॥ २॥
मन थिर होइ तो कोइ न सूझै, जानै जाननहारा।
कह रैदास बिमल बिबेक सुख, सहज सरूप सँभारा॥ ३॥

(३९०)

जब रामनाम कहि गावैगा, तब भेद अभेद समावैगा॥ टेक॥
जे सुख ह्वै या रसके परसे, सो सुखका कहि गावैगा॥ १॥
गुरु परसाद भई अनुभौ मति, बिस अमरित सम धावैगा॥ २॥
कह रैदास मेटि आपा-पर, तब वा ठौरहि पावैगा॥ ३॥

(३९१)

रामा हो जगजीवन मोरा।
तूँ न बिसारि राम मैं जन तोरा॥ टेक॥
संकट सोच पोच दिनराती।
करम कठिन मोरि जाति कुजाती॥ १॥
हरहु बिपति भावै करहु सो भाव।
चरण न छाड़ौं जाव सो जाव॥ २॥
कह रैदास कछु देहु अलंबन।
बेगि मिलौ जनि करो बिलंबन॥ ३॥

(३९२)

अब हम खूब वतन घर पाया।
ऊँचा खेड़ा सदा मेरे भाया॥ टेक॥
बेगमपूर सहरका नाम।
फिकर अँदेश नहीं तेहि ग्राम॥ १॥

(९२०) राग पूर्वी—ताल तीनताल

मैं नित भगतन हाथ बिकाऊँ।
आठों जाम हृदयमें राखूँ पलक नहीं बिसराऊँ॥
कल न परत बैकुंठ बसत मोहि, जोगिन मन न समाऊँ।
जहँ मम भगत प्रेमजुत गावहिं तहाँ बसत सुख पाऊँ॥
भगतनकी जैसी रुचि देखूँ तैसो बेष बनाऊँ।
टारूँ अपने बचन भगत लगि, तिनके बचन निभाऊँ॥
ऊँच-नीच सब काज भगतके, निज कर सकल बनाऊँ।
पग धोऊँ, रथ हाँकूँ, माजूँ बासन, छानि छवाऊँ॥
मागूँ नाहिं दाम कछु तिनतें, नहिं कछु तिनहि सताऊँ।
प्रेमसहित जल, पत्र, पुष्प, फल, जो देवै सो खाऊँ॥
निज 'सरबस' भगतनको सौंपूँ, अपनो स्वत्व भुलाऊँ।
भगत कहैं सोइ करूँ निरंतर बेचैं तो बिक जाऊँ॥

(९२१) राग मालकोश—ताल तीनताल

तूँ भाइ म्हारो रे म्हारो।
तू म्हारो, तेरो सब म्हारो, जग सारो ही म्हारो॥
मनमैं सदा दूसरो समझै ऊपरसैं कह थारो।
म्हारो होता साँता भी सो रहे म्हारैसैं न्यारो॥
एक बार जो कपट छोड़कर कहै 'नाथ मैं थारो'।
सो म्हारे सगळाँ पुतराँमें अधिक लाडलो म्हारो॥
सदा पातकी, सदा कुकरमी, विषयाँमैं मतवारो।
'मैं थारो' यूँ साचैं मनसैं कहताँ ही हो म्हारो॥
झटपट पुन्यवान सो होवै, पापाँसैं छुटकारो।
म्हारो म्हारी गोद विराजै, कदे न म्हाँसूँ न्यारो॥
तन-मन-वाणीसैं जो म्हारो सो निस्चै ही म्हारो।
कदे न लाज्यो, कदे न लाजै, नाँव बिडद-जस म्हारो॥

❑ ❑

सहज सुन्नमें भाठी सखे।
पावै रैदास गुरुमुख दखे॥ ४॥

(३९५)

पार गया चाहै सब कोई।
रहि उर वार पार नहिं होई॥ टेक॥
पार कहै उर वारसे पारा।
बिन पद-परचे भ्रमै गँवारा॥ १॥
पार परम पद मंझ मुरारी।
तामें आप रमै बनवारी॥ २॥
पूरन ब्रह्म बसै सब ठाई।
कह रैदास मिलै सुख साई॥ ३॥

(३९६)

यह अंदेस सोच जिय मेरे।
निसिबासर गुन गाऊँ तेरे॥ टेक॥
तुम चिंतित मेरी चिंतहु जाई।
तुम चिंतामनि हौ इक नाई॥ १॥
भगत-हेत का का नहिं कीन्हा।
हमरी बेर भए बलहीना॥ २॥
कह रैदास दास अपराधी।
जेहि तुम द्रवौ सो भगति न साधी॥ ३॥

(३९७)

जो तुम तोरौ राम मैं नाहिं तोरौं।
तुमसे तोरि कवनसे जोरौं॥ टेक॥
तीरथ बरत न करौं अंदेसा।
तुम्हरे चरन कमल क भरोसा॥ १॥
जहँ तहँ जाओं तुम्हरी पूजा।
तुमसा देव और नहिं दूजा॥ २॥

चेतावनी

(९२३) राग भैरवी—ताल रूपक

चेत कर नर, चेत कर, गफलतमें सोना छोड़ दे।
जाग उठ तत्काल, हरि-चरणोंमें चितको जोड़ दे॥
मनुज-तन संसारमें मिलता नहीं है बार-बार।
हो सजग, ले लाभ इसका, नाम प्रभुका मत बिसार॥
विषय-मदमें चूर होकर क्यों दिवाना हो रहा।
श्वास ये अनमोल तेरे, क्यों वृथा तू खो रहा॥
त्याग दे आशा विषयकी, काट ममता-पासको।
ध्यान कर हरिका सदा, कर सफल हर एक श्वासको॥
विषय-मदको छोड़ हरि-पद प्रेम-मद तू पान कर।
हो दिवाना प्रेममें श्रीरामका गुणगान कर॥
परम प्रियतम हृदय-धनके प्रेम-मदमें चूर हो।
छका रह दिन-रात तू आनंदमें भरपूर हो॥

(९२४) राग धुन लावनी—ताल कहरवा

पलभर पहले जो कहता था, यह धन मेरा यह घर मेरा।
प्राणोंके तनसे जाते ही उसको लाकर बाहर गेरा॥
जिस चटक-मटक औ फैसनपर तू है इतना भूला फिरता।
जिस पद-गौरवके रौरवमें दिन-रात शौकसे है गिरता॥
जिस तड़क-भड़क औ मौज मजोंमें फुरसत नहीं तुझे मिलती।
जिस गान तान औ गप्प-शप्पमें सदा जीभ तेरी हिलती॥
इन सभी साज-सामानोंसे छुट जायेगा रिश्ता तेरा।
प्राणोंके तनसे जाते ही उसको लाकर बाहर गेरा॥ १॥
जिस धन-दौलतके पानेको तू आठों पहर भटकता है।
जिस भोगोंका अभाव तेरे अंतरमें सदा खटकता है॥
जिस सबल देह सुंदर आकृति पर तू इतना अकड़ा जाता।
जिन विषयोंमें सुख देख रहा, पर कभी नहीं पकड़े पाता॥

कह रैदास मिलैं निज दासा।
जनम जनमकै काटैं पासा॥ ४॥

(४००)

कवन भगतिते रहै प्यारो पाहुनो रे।
घर घर देखों मैं अजब अभावनो रे॥ टेक॥
मैला मैला कपड़ा केता एक धोऊँ।
आवै आवै नींदहि कहाँलों सोऊँ॥ १॥
ज्यों ज्यों जोड़ै त्यों त्यों फाटै।
झूठै सबनि जरै उड़ि गये हाटै॥ २॥
कह रैदास परौ जब लेख्यौ।
जोई जोई, कियो रे सोई सोई देख्यौ॥ ३॥

(४०१)

अब कैसे छुटै नाम रट लागी॥ टेक॥
प्रभुजी, तुम चन्दन, हम पानी।
जाकी अँग अँग बास समानी॥ १॥
प्रभुजी, तुम घन बन, हम मोरा।
जैसे चितवत चंद चकोरा॥ २॥
प्रभुजी, तुम दीपक, हम बाती।
जाकी जोति बरै दिन राती॥ ३॥
प्रभुजी, तुम मोती, हम धागा।
जैसे सोनहि मिलत सुहागा॥ ४॥
प्रभुजी, तुम स्वामी, हम दासा।
ऐसी भगति करै रैदासा॥ ५॥

❑❑

मलूकदास

(४०२)

हरि समान दाता कोउ नाहीं। सदा बिराजैं संतनमाहीं॥ १॥
नाम बिसंभर बिस्व जिआवैं। साँझ बिहान रिजिक पहुँचावैं॥ २॥
देइ अनेकन मुखपर ऐने। औगुन करै सो गुन करि मानैं॥ ३॥
काहू भाँति अजार न देई। जाही को अपना कर लेई॥ ४॥
घरी घरी देता दीदार। जन अपनेका खिजमतगार॥ ५॥
तीन लोक जाके औसाफ। जनका गुनह करै सब माफ॥ ६॥
गरुवा ठाकुर है रघुराई। कहैं मलूक क्या करूँ बड़ाई॥ ७॥

(४०३)

सदा सोहागिन नारि सो, जाके राम भतारा।
मुख माँगे सुख देत हैं, जगजीवन प्यारा॥ १॥
कबहुँ न चढ़ै रँडपुरा, जाने सब कोई।
अजर अमर अबिनासिया, ताकौ नास न होई॥ २॥
नर-देही दिन दोयकी, सुन गुरुजन मेरी।
क्या ऐसोंका नेहरा, मुए बिपति घनेरी॥ ३॥
ना उपजै ना बीनसै, संतन सुखदाई।
कहैं मलूक यह जानिकै, मैं प्रीति लगाई॥ ४॥

(४०४)

अब तेरी सरन आयो राम॥ १॥
जबै सुनियो साधके मुख, पतित पावन नाम॥ २॥
यही जान पुकार कीन्ही अति सतायो काम॥ ३॥
बिषयसेती भयो आजिज कह मलूक गुलाम॥ ४॥

(४०५)

साँचा तू गोपाल, साँच तेरा नाम है।
जहवाँ सुमिरन होय, धन्य सो ठाम है॥ १॥
साँचा तेरा भगत, जो तुझको जानता।
तीन लोकको राज, मनै नहिं आनता॥ २॥

झूठा नाता छोड़ि, तुझै लव लाइया।
सुमिरि तिहारो नाम, परम पद पाइया॥ ३॥
जिन यह लाहा पायो, यह जग आय कै।
उतरि गयो भवपार, तेरो गुन गाइ कै॥ ४॥
तुही मातु तुही पिता, तुही हित बन्धु है।
कहत मलूका दास, बिना तुझ धुंध है॥ ५॥

(४०६)

कौन मिलावै जोगिया हो, जोगिया बिन रह्यो न जाय॥ टेक॥
मैं जो प्यासी पीवकी, रटत फिरौं पिउ पीव।
जो जोगिया नहिं मिलिहै हो, तो तुरत निकासूँ जीव॥ १॥
गुरुजी अहेरी मैं हिरनी, गुरु मारैं प्रेमका बान।
जेहि लागै सोई जानई हो, और दरद नहिं जान॥ २॥
कहैं मलूक सुनु जोगिनी रे, तनहिमें मनहिं समाय।
तेरे प्रेमके कारने जोगी सहज मिला मोहिं आय॥ ३॥

(४०७)

तेरा मैं दीदार-दीवाना।
घड़ी घड़ी तुझे देखा चाहूँ, सुन साहेब रहमाना॥
हुआ अलमस्त खबर नहिं तनकी, पीया प्रेम-पियाला।
ठाढ़ होऊँ तो गिरगिर परता, तेरे रँग मतवाला॥
खड़ा रहूँ दरबार तुम्हारे, ज्यों घरका बंदाजादा।
नेकीकी कुलाह सिर दिये, गले पैरहन साजा॥
तौजी और निमाज न जानूँ, ना जानूँ धरि रोजा।
बाँग जिकर तबहीसे बिसरी, जबसे यह दिल खोजा॥
कह मलूक अब कजा न करिहौं, दिलहीसों दिल लाया।
मक्का हज्ज हियेमें देखा, पूरा मुरसिद पाया॥

(४०८)

दरद-दिवाने बावरे, अलमस्त फकीरा।
एक अकीदा लै रहे, ऐसे मन धीरा॥ १॥

प्रेमी पियाला पीवते, बिसरे सब साथी।
आठ पहर यों झूमते, ज्यों माता हाथी॥ २॥
उनकी नजर न आवते, कोइ राजा रंक।
बंधन तोड़े मोहके, फिरते निहसंक॥ ३॥
साहेब मिल साहेब भये, कछु रही न तमाई।
कहैं मलूक किस घर गये, जहँ पवन न जाई॥ ४॥

(४०९)

हमसे जनि लागै तू माया।
थोरेसे फिर बहुत होयगी, सुनि पैहैं रघुराया॥ १॥
अपनेमें है साहेब हमारा, अजहूँ चेतु दिवानी।
काहू जनके बस परि जैहो, भरत मरहुगी पानी॥ २॥
तरह्वै चितै लाज करु जनकी, डारु हाथकी फाँसी।
जनतें तेरो जोर न लहिहै, रच्छपाल अबिनासी॥ ३॥
कहै मलूका चुप करु ठगनी, औगुन राखु दुराई।
जो जन उबरै रामनाम कहि, तातें कछु न बसाई॥ ४॥

(४१०)

नाम हमारा खाक है, हम खाकी बन्दे।
खाकही ते पैदा किये, अति गाफिल गन्दे॥ १॥
कबहुँ न करते बंदगी, दुनियामें भूले।
आसमानको ताकते, घोड़े चढ़ि फूले॥ २॥
जोरू-लड़के खुस किये, साहेब बिसराया।
राह नेकीकी छोड़िके, बुरा अमल कमाया॥ ३॥
हरदम तिसको यादकर, जिन वजूद सँवारा।
सबै खाक दर खाक हैं, कुछ समुझ गँवारा॥ ४॥
हाथी घोड़े खाकके, खाक खानखानी।
कहैं मलूक रहि जायगा, औसाफ निसानी॥ ५॥

(४११)

ऐ अजीज ईमान तू, काहेको खोवै।
हिय राखै दरगाहमें, तो प्यारा होवै॥ १॥
यह दुनिया नाचीजके, जो आसिक होवै।
भूलै जात खोदायको सिर, धुनि-धुनि रोवै॥ २॥
इस दुनिया नाचीजके, तालिब हैं कुत्ते।
लज्जतमें मोहित हुए, दुख सहे बहूते॥ ३॥
जबलगि अपने आपको, तहकीक न जानै।
दास मलूका रब्बको, क्योंकर पहिचानै॥ ४॥

(४१२)

गरब न कीजै बावरे, हरि गरब प्रहारी।
गरबहितें रावन गया, पाया दुख भारी॥ १॥
जरन खुदी रघुनाथके, मन नाहिं सुहाती।
जाके जिय अभिमान है, ताकी तोरत छाती॥ २॥
एक दया और दीनता, ले रहिये भाई।
चरन गहौ जाय साधके रीझै रघुराई॥ ३॥
यही बड़ा उपदेस है, पर द्रोह न करिये।
कह मलूक हरि सुमिरिके, भौसागर तरिये॥ ४॥

(४१३)

ना वह रीझै जप तप कीन्हे, ना आतमका जारे।
ना वह रीझै धोती टाँगे, ना कायाके पखाँरे॥
दाया करै धरम मन राखै, घरमें रहे उदासी।
अपना-सा दुख सबका जानै, ताहि मिलै अबिनासी॥
सहै कुसब्द बादहूँ त्यागै, छाँड़े गरब गुमाना।
यही रीझ मेरे निरंकारकी, कहत मलूक दिवाना॥

(४१४)

राम कहो राम कहो, राम कहो बावरे।
अवसर न चूक भोंदू, पायो भलो दाँवरे॥ १॥
जिन तोकों तन दीन्हों, ताकौ न भजन कीन्हों।
जनम सिरानो जात, लोहे कैसो ताव रे॥ २॥
रामजीको गाय, गाय रामजीको रिझाव रे।
रामजीके चरन-कमल, चित्तमाहिं लाव रे॥ ३॥
कहत मलूकदास, छोड़ दे तैं झूठी आस।
आनँद मगन होइके, हरिगुन गाव रे॥ ४॥

(४१५)

दीनबन्धु दीनानाथ, मेरी तन हेरिये॥ टेक॥
भाई नाहिं, बन्धु नाहिं, कुटुम-परिवार नाहिं।
ऐसा कोई मित्र नाहिं, जाके ढिंग जाइये॥ १॥
सोनेकी सलैया नाहिं, रूपेका रूपैया नाहिं,
कौड़ी-पैसा गाँठ नाहिं, जासे कछु लीजिये॥ २॥
खेती नाहिं, बारी नाहिं, बनिज-ब्योपार नाहिं,
ऐसा कोई साहु नाहिं, जासों कछू माँगिये॥ ३॥
कहत मलूकदास छोड़ि दे पराई आस,
रामधनी पाइकै अब काकी सरन जाइये॥ ४॥

❑ ❑

चरनदास

(४१६) सीठना

सुन सुरत रँगीली हो कि हरि-सा यार करौ॥ टेक॥
जब छूटै बिघन बिकार कि भौ जल तुरत तरौ॥ १॥
तुम त्रैगुन छैल बिसारि गगनमें ध्यान धरौ॥ २॥
रस अमरित पीवो हो कि बिषया सकल हरौ॥ ३॥
करि सील-संतोष सिंगार छिमाकी माँग भरौ॥ ४॥

अब पाँचों तजि लगवार अमर घर पुरुष बरौ॥ ५॥
कहैं चरनदास गुरु देखि पियाके पाँव परौ॥ ६॥

(४१७)

टुक रंगमहलमें आव कि निरगुन सेज बिछी।
जहँ पवन गवन नहिं होय जहाँ जा सुरति बसी॥ १॥
जहँ त्रैगुन बिन निरबान जहाँ नहिं सूर-ससी।
जहँ हिल-मिलकै सुख मान मुकतिकी होय हँसी॥ २॥
जहँ पिय-प्यारी मिलि एक कि आसा दुईनसी।
जहँ चरनदास गलतान कि सोभा अधिक लसी॥ ३॥

(४१८)

टुक निरगुन छैला सूँ, कि नेह लगाव री।
जाकौ अजर अमर है देश, महल बेगमपुर री॥ १॥
जहँ सदा सुहागिनि होय, पियासूँ मिलि रहु री।
जहँ आवागमन न होय, मुकति चेरी तेरी॥ २॥
कहैं चरनदास गुरु मिले, सोई ह्वाँ रहु बौरी।
तब सुख सागरके बीच, कलहरी ह्वै रहु री॥ ३॥

(४१९) हिंडोला हेली

तरसैं मेरे नैन हेली, राम मिलन कब होयगो॥ टेक॥
पिय दरसन बिन क्यों जिऊँ री हेली कैसे पाऊँ चैन।
तीर्थ बर्त बहुतै किये री चित दै सुने पुरान॥ १॥
बाट निहारत ही रहूँ री हेली, सुधि नहिं लीनी आय।
यह जोबन यों ही चलौ री चालौ जनम सिराय॥ २॥
बिरहा दल साजे रहे री हेली, छिन-छिनमें दुख देहि।
मन लालनके बस परौ, भई भाक-सी देहि॥ ३॥
गुरु सुकदेव कृपा करौ जी हेली, दीजै बिरह छुटाय।
चरनदास पियसू मिले सरन तुम्हारी धाय॥ ४॥

(४२०)

मो बिरहिनकी बात हेली, बिरहिन होइ जानिहैं।
नैन बिछोहा जानती री हेली, बिरहै कीन्हों घात॥ टेक॥
या तनकूँ बिरहा लगो री हेली, ज्यों घुन लागो काठ।
निसदिन खाये जातु है, देखूँ हरिकी बाट॥
हिरदेमें पावक जरै री हेली, तपि नैना भय लाल।
आसूँपर आसूँ गिरै, यही हमारो हाल॥
प्रीतम बिन कल ना परै री हेली, कलकल सब अकुलाहिं।
डिगी परूँ, सत ना रहौ कब पिय पकरैं बाँहिं॥
गुरु सुकदेव दया करैं री हेली, मोहि मिलावै लाल।
चरनदास दुख सब भजैं, सदा रहूँ पति नाल॥

(४२१) होली

प्रेमनगरके माहिं होरी होय रही।
जब सों खेली हमहूँ चित दैं, आपनहूँ को खोय रही॥
बहुतन कुल अरु लाज गँवाई, रहौ न कोई काम।
नाचि उठैं, कभी गावन लागैं, भूले तन-धन-धाम॥
बहुतनकी मति रंग रँगी है, जिनकौ लागौ प्रेम।
बहुतनकों अपनी सुधि नाहीं कौन करै अस नेम॥
बहुतनकी गदगद ही बानी, नैनन नीर ढराय।
बहुतनको बौरापन लागो, ह्वाँकी कही न जाय॥
प्रेमीकी गति प्रेमी जानै, जाके लागी होय।
चरनदास उस नेहनगरकी सुकदेवा कहि सोय॥

(४२२) मंगल

समझ रस कोइक पावै हो।
गुरु बिन तपन बुझै नहीं, प्यासा नर जावै हो॥ १॥
बहुत मनुष ढूँढ़त फिरैं अंधरे गुरु सेवैं हो।
उनहूँकों सूझै नहीं, औरनकों देवैं हो॥ २॥

अँधरेकों अँधरा मिलै नारीकों नारी हो।
ह्वाँ फल कैसे होयगा, समझैं न अनारी हो॥ ३॥
गुरु सिष दोऊ एक से एकै व्यवहारा हो।
गयो भरोसे डूबिकै वै, नरक मँझारा हो॥ ४॥
सुकदेव कहैं चरनदाससूँ, इनका मत कूरा हो।
ग्यान मुकति जब पाइये, मिलै सतगुरु पूरा हो॥ ५॥

(४२३) सोरठ

वह पुरुषोत्तम मेरा प्यार। नेह लगी टूटै नहिं तार॥ १॥
तीरथ जाऊँ न बर्त करूँ। चरनकमलको ध्यान धरूँ॥ २॥
प्रानपियारे मेरेहिं पास। बन-बन माहिं न फिरूँ उदास॥ ३॥
पढ़ूँ न गीता-बेद-पुरान। एकहिं सुमिरूँ श्रीभगवान॥ ४॥
औरनकों नहिं नाऊँ सीस। हरि ही हरि हैं बिस्वे बीस॥ ५॥
काहूकी नहिं राखूँ आस। तृस्ना काटि दई है फाँस॥ ६॥
उद्यम करूँ न राखूँ दाम। सहजहिं ह्वै रहैं पूरन काम॥ ७॥
सिद्धि मुकति फल चाहौं नाहिं। नित ही रहूँ हरि संतन माहिं॥ ८॥
गुरु सुकदेव यही मोहिं दीन। चरनदास आनँद लवलीन॥ ९॥

(४२४) हिंडोला

झूलत कोइ कोइ संत लगन हिंडोलने॥ टेक॥
पौन उमाह उछाह धरती सोच सावन मास।
लाजके जहँ उड़त बगुले मोर हैं जग हाँस॥ १॥
हरष-सोक दोउ खंभ रोपे सूरत डोरी लाय।
बिरह पटरी बैठि सजनी उमँग आवै जाय॥ २॥
सकल बिकल तहँ देत झोके बिपत गावनहार।
सखी बहुतक रंग राती रँगी पाँचौं नार॥ ३॥
नैन बादल उमँगि बरसै दामिनी दमकात।
बुद्धिकौ ठहराव नाहीं, नेह की नहिं जात॥ ४॥
सुकदेव कहैं, कोइ बली झूले, सीस देत अकोर।
चरनदास भये बौरे जाति-बरन-कुल छोर॥ ५॥

(४२५) बिहाग

साधो निंदक मित्र हमारा।
निंदककों निकटे ही राखो, होन न देउँ नियारा॥
पाछे निंदा करि अघ धोवै, सुनि मन मिटै बिकारा।
जैसे सोना तापि अगिनमें, निरमल करै सोनारा॥
घन अहरन कसि हीरा निबटै, कीमत लच्छ हजारा।
ऐसे जाँचत दुष्ट संतकूँ, करन जगत उँजियारा॥
जोग-जग्य-जप पाप कटन हितु करै सकल संसारा।
बिन करनी मम करम कठिन सब, मेटै निंदक प्यारा॥
सुखी रहो निंदक जग माहीं रोग न हो तन सारा।
हमरी निंदा करनेवाला, उतरै भवनिधि पारा॥
निंदकके चरनोंकी अस्तुति, भाखौं बारंबारा।
चरनदास कहैं सुनियो साधो, निंदक साधक भारा॥

(४२६) परज

जिन्हैं हरिभगति पियारी हो।
मात-पिता सहजै छुटै, छुटैं सुत अरु नारी हो॥ १॥
लोक-भोग फीके लगैं, सम अस्तुति गारी हो।
हानि-लाभ नहिं चाहिये, सब आसा हारी हो॥ २॥
जगसूँ मुख मोरे रहैं, करैं ध्यान मुरारी हो।
जित मनुवाँ लागो रहै, भइ घट उँजियारी हो॥ ३॥
गुरु सुकदेव बताइया, प्रेमी गति भारी हो।
चरनदास चारौं बेदसूँ, औरै कछु न्यारी हो॥ ४॥

(४२७)

गुरु हमरे प्रेम पियायौ हो।
ता दिन तें पलटौ भयौ, कुल गोत नसायौ हो॥ १॥
अलम चढ़ौ गगनै लगौ, अनहद मन छायौ हो।
तेजपुंजकी सेजपै, प्रीतम गल लायौ हो॥ २॥

गये दिवाने देसड़े, आनँद दरसायौ हो।
सब किरिया सहजैं छुटी तप नेम भुलायौ हो॥ ३॥
त्रैगुनतें ऊपर रहूँ, सुकदेव बसायौ हो।
चरनदास दिन रैन, नहिं तुरिया-पद पायौ हो॥ ४॥

(४२८) सोरठ

अब घर पाया हो मोहन प्यारा॥ टेक॥
लखो अचानक अज अबिनासी, उघरि गये दृगतारा॥ १ ॥
झूमि रह्यौ मेरे आँगनमें, टरत नहीं कहुँ टारा॥ २ ॥
रोम-रोम हिय माहीं देखो, होत नहीं छिन न्यारा॥ ३ ॥
भयो अचरज चरनदास न पैये खोज किये बहु बारा॥ ४ ॥

(४२९) काफी

कोइ दिन जीवै तौ कर गुजरान।
कहर गरूरी छाँड़ि दिवाने, तजौ अकसकी बान॥
चुगली-चोरी अरु निंदा लै, झूठ कपट अरु कान।
इनकूँ डारि गहै जत सत कूँ, सोई अधिक सयान॥
हरि हरि सुमिरौ, छिन नहिं बिसरौ, गुरुसेवा मन ठानि।
साधुनकी संगति कर निस-दिन, आवै ना कछु हानि॥
मुड़ौ कुमारग चलौ सुमारग, पावौ निज पुर बास।
गुरु सुकदेव चेतावैं तोकूँ, समुझ चरन हीं दास॥

❑ ❑

गुरु नानक

(४३०)

राम सुमिर, राम सुमिर, एही तेरो काज है॥ टेक॥
मायाकौ संग त्याग, हरिजूकी सरन लाग।
जगत सुख मान मिथ्या, झूठौ सब साज है॥ १॥
सुपने ज्यों धन पिछान, काहे पर करत मान।
बारूकी भीत तैसें, बसुधाकौ राज है॥ २॥

नानक जन कहत बात, बिनसि जैहै तेरो गात।
छिन छिन करि गयौ काल्ह तैसे जात आज है॥ ३॥

(४३१)

सब कछु जीवतकौ ब्यौहार।
मातु-पिता, भाई-सुत, बांधव, अरु पुनि गृहकी नारि॥
तनतें प्रान होत जब न्यारे, टेरत प्रेत पुकार।
आध घरी कोऊ नहिं राखै, घरतें देत निकार॥
मृग तृस्ना ज्यों जग रचना यह देखौ हृदै बिचार।
कह नानक, भजु रामनाम नित, जातें होत उधार॥

(४३२)

हौं कुरबाने जाउँ पियारे, हौं कुरबाने जाउँ॥ टेक॥
हौं कुरबाने जाउँ तिन्हाँ दे, लैन जो तेरा नाउँ।
लैन जो तेरा नाउँ तिन्हाँ दे, हौं सद कुरबाने जाउँ॥ १॥
काया रँगन जे थिये प्यारे, पाइये नाउँ मजीठ।
रंगनवाला जे रँगे साहिब, ऐसा रंग न डीठ॥ २॥
जिनके चोलड़े रत्तड़े प्यारे कंत तिन्हाँ दे पास।
धूड़ तिन्हाँ कोजे मिले जीको, नानकदी अरदास॥ ३॥

(४३३)

मुरसिद मेरा मरहमी, जिन मरम बताया।
दिल अंदर दीदार है, खोजा तिन पाया॥ १॥
तसबी एक अजूब है, जामें हरदम दाना।
कुंज किनारे बैठिके, फेरा तिन्ह जाना॥ २॥
क्या बकरी क्या गाय है, क्या अपनो जाया।
सबकौ लोहू एक है, साहिब फरमाया॥ ३॥
पीर पैगम्बर औलिया, सब मरने आया।
नाहक जीव न मारिये, पोषनको काया॥ ४॥

हिरिस हिये हैवान है, बस करिलै भाई।
दाद इलाही नानका, जिसे देवै खुदाई॥ ५॥

(४३४)

काहे रे बन खोजन जाई।
सरब निवासी सदा अलेपा, तोही संग समाई॥ १॥
पुष्प मध्य ज्यों बास बसत है, मुकर माहि जस छाई।
तैसे ही हरि बसै निरंतर, घट ही खोजौ भाई॥ २॥
बाहर भीतर एकै जानों, यह गुरु ग्यान बताई।
जन नानक बिन आपा चीन्हे, मिटै न भ्रमकी काई॥ ३॥

(४३५)

प्रभु मेरे प्रीतम प्रान पियारे।
प्रेम-भगति निज नाम दीजिये, द्याल अनुग्रह धारे॥
सुमिरौं चरन तिहारे प्रीतम, हृदै तिहारी आसा।
संत जनाँपै करौं बेनती, मन दरसनकौ प्यासा॥
बिछुरत मरन, जीवन हरि मिलते, जनको दरसन दीजै।
नाम अधार, जीवन-धन नानक प्रभु मेरे किरपा कीजै॥

(४३६)

अब मैं कौन उपाय करूँ॥
जेहि बिधि मनको संसय छूटै, भव-निधि पार करूँ।
जनम पाय कछु भलौ न कीन्हों, तातें अधिक डरूँ॥
गुरुमत सुन कछु ग्यान न उपजौ, पसुवत उदर भरूँ।
कह नानक, प्रभु बिरद पिछानौ, तब हौं पतित तरूँ॥

(४३७)

या जग मीत न देख्यो कोई।
सकल जगत अपने सुख लाग्यो, दुखमें संग न होई॥
दारा-मीत, पूत संबंधी सगरे धनसों लागे।
जबहीं निरधन देख्यौ नरकों संग छाड़ि सब भागे॥

कहा कहूँ या मन बौरेकौं, इनसों नेह लगाया।
दीनानाथ सकल भय भंजन, जस ताको बिसराया॥
स्वान-पूँछ ज्यों भयो न सूधो, बहुत जतन मैं कीन्हौ।
नानक लाज बिरदकी राखौ नाम तिहारो लीन्हौ॥

(४३८)

जो नर दुखमें दुख नहिं मानै।
सुख-सनेह अरु भय नहिं जाके, कंचन माटी जानै॥
नहिं निंदा, नहिं अस्तुति जाके, लोभ-मोह-अभिमाना।
हरष सोकतें रहै नियारो, नाहिं मान-अपमाना॥
आसा-मनसा सकल त्यागिकै, जगतें रहै निरासा।
काम-क्रोध जेहि परसै नाहिन, तेहि घट ब्रह्म निवासा॥
गुरु किरपा जेहिं नरपै कीन्ही, तिन्ह यह जुगति पिछानी।
नानक लीन भयो गोबिंदसों, ज्यों पानी सँग पानी॥

(४३९)

यह मन नेक न कह्यौ करै।
सीख सिखाय रह्यौ अपनी सी, दुरमतितें न टरै॥
मद-माया-बस भयौ बावरौ, हरिजस नहिं उचरै।
करि परपंच जगतके डहकै अपनौ उदर भरै॥
स्वान-पूँछ ज्यों होय न सूधौ कह्यो न कान धरै।
कह नानक, भजु राम नाम नित, जातें काज सरै॥

(४४०)

जगतमें झूठी देखी प्रीत।
अपने ही सुखसों सब लागे, क्या दारा क्या मीत॥
मेरो मेरो सभी कहत हैं, हित सों बाध्यौ चीत।
अंतकाल संगी नहिं कोऊ, यह अचरजकी रीत॥
मन मूरख अजहूँ नहिं समुझत, सिख दै हार्‌यो नीत।
नानक भव-जल-पार परै जो गावै प्रभुके गीत॥

□ □

दरिया साहब

(४४१)

जाके उर उपजी नहिं भाई।
सो क्या जाने पीर पराई॥ टेक॥
ब्यावर जाने पीरकी सार।
बाँझ नार क्या लखै बिकार॥ १॥
पतिब्रता पतिकौ ब्रत जानै।
बिभिचारिन मिल कहा बखानै॥ २॥
हीरा-पारख जौहरी पावै।
मूरख निरखकै कहा बतावै॥ ३॥
लागा घाव कराहे सोई।
कोगतहार के दरद न कोई॥ ४॥
रामनाम मेरा प्रान-अधार।
सोई रामरस पावनहार॥ ५॥
जन दरिया जानेगा सोई।
(जाके) प्रेमकी माल कलेजे पोई॥ ६॥

(४४२)

जो धुनियाँ तौ भी मैं राम तुम्हारा।
अधम कमीन जाति मतिहीना, तुम तौ हौ सिरताज हमारा॥ टेक॥
कायाका जंत्र सबद मन मुठिया, सुखमन ताँत चढ़ाई।
गगनमँडलमें धुनुआँ बैठा, मेरे सतगुर कला सिखाई॥ १॥
पाप पान हर कुबुध काँकड़ा, सहज सहज झड़ जाई।
घुंडी-गाँठ रहन नहिं पावै, इकरंगी होय आई॥ २॥
इकरँग हुआ भरा हरि चोला, हरि कहै कहा दिलाऊँ।
मैं नाहीं मेहनतका लोभी, बकसौ मौज भगति निज पाऊँ॥ ३॥
किरपा कर हरि बोले बानी, तुम तौ हौ मम दास।
दरिया कहै, मेरे आतम भीतर, मेलौ राम भगति बिस्वास॥ ४॥

(४४३)

बाबल कैसे बिसरो जाई।
यदि मैं पति सँग रल खेलूँगी, आपा धरम समाई॥ टेक॥
सतगुरु मेरे किरपा कीनी, उत्तम बर परणाई।
अब मेरे साईंको सरम पड़ैगी लेगा हृदय लगाई॥
थे जानराय, मैं बाली-भोली, थे निरमल, मैं मैली।
थे बतलाओ, मैं बोल न जानूँ, भेद न सकूँ सहेली॥
थे ब्रह्मभाव, मैं आतप कन्या, समझ न जानूँ बानी।
दरिया कहै पति पूरा पाया, यह निश्चै कर जानी॥

(४४४) भैरव

कहा कहूँ मेरे पिउकी बात।
जो रे कहूँ सोई अंग सुहात॥ टेक॥
जब मैं रही थी कन्या क्वाँरी।
तब मेरे कर्म हता सिर भारी॥ १॥
जब मेरी पिउसे मनसा दौड़ी।
सतगुरु आन सगाई जोड़ी॥ २॥
जब मैं पिउका मंगल गाया।
तब मेरा स्वामी ब्याहन आया॥ ३॥
हथलेवा कर बैठी संगा।
तउ मोहि लीनी बायें अंगा॥ ४॥
जनदरिया कहै मिट गई दूती।
आपौ अरप पीवसँग सूती॥ ५॥

(४४५)

रामनाम नहिं हिरदे धरा।
जैसा पसुवा तैसा नरा॥ १॥
पसुवा नर उद्यम कर खावै।
पसुवा तौ जंगल चर आवै॥ २॥

पसुवा आवै, पसुवा जाय।
पसुवा चरै औ पसुवा खाय॥ ३॥
रामनाम ध्याया नहिं माई।
जनम गया पसुवाकी नाईं॥ ४॥
रामनामसे नाहीं प्रीत।
यह ही सब पसुवोंकी रीत॥ ५॥
जीवत सुखदुखमें दिन भरै।
मुवा पछे चौरासी परै॥ ६॥
जनदरिया जिन राम न ध्याया।
पसुवा ही ज्यों जनम गँवाया॥ ७॥

मीराबाई

प्रार्थना

(४४६) राग श्याम कल्याण—ताल रूपक

हरी तुम हरो जनकी भीर।
द्रौपदीकी लाज राखी तुरत बढ़ायो चीर॥
भगत कारण रूप नरहरि धर्‌यो आप सरीर।
हिरण्याकुस मारि लीन्हों धर्‌यो नाहिन धीर॥
बूड़तो गजराज राख्यो कियौ बाहर नीर।
दासी मीरा लाल गिरधर चरणकँवलपर सीर॥

(४४७) राग दरबारी—ताल तिताला

तुम सुणौ दयाल म्हाँरी अरजी॥
भवसागरमें बही जात हूँ काढ़ो तो थाँरी मरजी।
इण संसार सगो नहिं कोई साँचा सगा रघुबरजी॥
मात-पिता औ कुटम कबीलो सब मतलबके गरजी।
मीराकी प्रभु अरजी सुण लो चरण लगावो थाँरी मरजी॥

(४४८) राग पीलू—ताल कहरवा

हमने सुणी छै हरी अधम उधारण।
अधम उधारण सब जग तारण॥ टेक॥
गजकी अरज गरज उठ ध्यायो,
संकट पड़्यो तब कष्ट निवारण॥ १॥
द्रुपदसुताको चीर बढ़ायो,
दूसासनको मान पद मारण।
प्रहलादकी परतिग्या राखी,
हरणाकुस नख उद्र बिदारण॥ २॥
रिखिपतनीपर किरपा कीन्हीं,
बिप्र सुदामाकी बिपति बिदारण।
मीराके प्रभु मो बंदीपर,
एति अबेरि भई किण कारण॥ ३॥

(४४९) राग बिहाग—ताल दीपचंदी

स्याम मोरी बाँहड़ली जी गहो।
या भवसागर मँझधारमें थे ही निभावण हो॥
म्हाँमें औगण घड़ा छै हो प्रभुजी थे ही सहो तो सहो।
मीराके प्रभु हरि अबिनासी लाज बिरदकी बहो॥

(४५०) राग सारंग—ताल कहरवा

मैं तो तेरी सरण परी रे, रामा ज्यूँ जाड़े ज्यूँ तार।
अड़सठ तीरथ भ्रम भ्रम आयो, मन नहिं मानी हार॥
या जगमें कोई नहिं अपणा सुणियौ श्रवण मुरार।
मीरा दासी राम भरोसे जमका फंदा निवार॥

(४५१) राग धुन पीलू—ताल कहरवा

हरि बिन कूण गती मेरी।
तुम मेरे प्रतिपाल कहिये मैं रावरी चेरी॥
आदि अंत निज नाँव तेरो हीयामें फेरी?
बेर बेर पुकार कहूँ प्रभु आरति है तेरी॥

यौ संसार बिकार सागर बीचमें घेरी।
नाव फाटी प्रभु पाळ बाँधो बूड़त है बेरी॥
बिरहणि पिवकी बाट जोवै राखल्यो नेरी।
दासि मीरा राम रटत है मैं सरण हूँ तेरी॥

(४५२) राग भैरवी—ताल कहरवा

अब मैं सरण तिहारी जी, मोहि राखौ कृपा निधान॥ टेक॥
अजामील अपराधी तारे, तारे नीच सदान।
जल डूबत गजराज उबारे गणिका चढ़ी बिमान॥ १॥
और अधम तारे बहुतेरे भाखत संत सुजान।
कुबजा नीच भीलणी तारी जाणे सकल जहान॥ २॥
कहँ लग कहूँ गिणत नहिं आवै थकि रहे बेद पुरान।
मीरा दासी शरण तिहारी, सुनिये दोनों कान॥ ३॥

(४५३) राग पहाड़ी—ताल कहरवा

प्रभुजी मैं अरज करूँ छूँ मेरो बेड़ों लगाज्यो पार॥
इण भवमें मैं दुख बहु पायो संसा-सोग निवार।
अष्ट करमकी तलब लगी है दूर करो दुख-भार॥
यों संसार सब बह्यो जात है लख चौरासी री धार।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, आवागमन निवार॥

(४५४) राग प्रभाती—ताल चर्चरी

थे तो पलक उघाड़ो दीनानाथ,
मैं हाजिर-नाजिर कदकी खड़ी॥ टेक॥
साजनियाँ दुसमण होय बैठ्या,
सबने लगूँ कड़ी।
तुम बिन साजन कोई नहिं है,
डिगी नाव मेरी समँद अड़ी॥ १॥
दिन नहिं चैन रैण नहिं निंदरा,
सूखूँ खड़ी खड़ी।

बाण बिरहका लग्या हियेमें,
भूलूँ न एक घड़ी॥ २॥
पत्थरकी तो अहिल्या तारी,
बनके बीच पड़ी।
कहा बोझ मीरामें कहिये,
सौ पर एक घड़ी॥ ३॥

(४५५) राग सहाना—ताल चर्चरी

मीराको प्रभु साँची दासी बनाओ।
झूठे धंधोंसे मेरा फंदा छुड़ाओ॥ १॥
लूटे ही लेत विवेकका डेरा।
बुधि बल यदपि करूँ बहुतेरा॥ २॥
हाय! हाय! नहिं कछु बस मेरा।
मरत हूँ बिबस प्रभु धाओ सबेरा॥ ३॥
धर्म-उपदेश नितप्रति सुनती हूँ।
मन कुचालसे भी डरती हूँ॥ ४॥
सदा साधु सेवा करती हूँ।
सुमिरण ध्यानमें चित धरती हूँ॥ ५॥
भक्ति मारग दासीको दिखलाओ।
मीराको प्रभु साँची दासी बनाओ॥ ६॥

(४५६) राग सारंग—ताल तिताला

सुण लीजो बिनती मोरी, मैं शरण गही प्रभु तेरी।
तुम (तो) पतित अनेक उधारे, भव सागरसे तारे॥
मैं सबका तो नाम न जानूँ कोइ कोई नाम उचारे।
अम्बरीष सुदामा नामा, तुम पहुँचाये निज धामा॥
ध्रुव जो पाँच वर्षके बालक, तुम दरस दिये घनस्यामा।
धना भक्तका खेत जमाया, कबिराका बैल चराया॥

सबरीका जूँठा फल खाया, तुम काज किये मन भाया।
सदना औं सेना नाईको तुम कीन्हा अपनाई॥
करमाकी खिचड़ी खाई, तुम गणिका पार लगाई।
मीरा प्रभु तुमरे रँग राती या जानत सब दुनियाई॥

(४५७) राग आसावरी—ताल तिताला

प्यारे दरसन दीज्यो आय,
तुम बिन रह्यो न जाय॥ टेक॥
जळ बिन कमल, चंद बिन रजनी,
ऐसे तुम देख्याँ बिन सजनी।
आकुळ व्याकुळ फिरूँ रैन दिन,
बिरह कलेजो खाय॥ १॥
दिवस न भूख, नींद नहिं रैना,
मुख सूँ कथत न आवे बैना।
कहा कहूँ कछु कहत न आवै,
मिलकर तपत बुझाय॥ २॥
क्यूँ तरसावो अंतरजामी,
आय मिलो किरपाकर स्वामी।
मीरा दासी जनम-जनम की,
पड़ी तुम्हारे पाय॥ ३॥

(४५८) राग रामकली—ताल तिताला

अब सो निभायाँ सरेगी, बाँह गहेकी लाज।
समरथ सरण तुम्हारी सइयाँ, सरब सुधारण काज॥ १॥
भवसागर संसार अपरबल, जामें तुम हो झयाज।
गिरधाराँ आधार जगत गुरु तुम बिन होय अकाज॥ २॥
जुग जुग भीर हरी भगतनकी, दीनी मोक्ष समाज।
मीरा सरण गही चरणनकी, लाज रखो महाराज॥ ३॥

(४५९) राग सूहा—ताल कहरवा

स्वामी सब संसारके हो साँचे श्रीभगवान॥
स्थावर जंगम पावक पाणी धरती बीज समान।
सबमें महिमा थाँरी देखी कुदरतके करबान॥
बिप्र सुदामाको दाळद खोंयो बालेकी पहचान।
दो मुट्ठी तंदुलकी चाबी दीन्हयों द्रव्य महान॥
भारतमें अर्जुनके आगे आप भया रथवान।
अर्जुन कुळका लोग निहार्‌या छुट गया तीर कमान॥
ना कोई मारे ना कोइ मरतो, तेरो यो अग्यान।
चेतन जीव तो अजर अमर है, यो गीतारो ग्यान॥
मेरेपर प्रभु किरपा कीजौ, बाँदी अपणी जान।
मीराके प्रभु गिरधर नागर चरण कँवलमें ध्यान॥

❑ ❑

बिरह

(४६०) राग प्रभाती—ताल चर्चरी

राम मिलण रो घणो उमावो नित उठ जोऊँ बाटड़ियाँ।
दरस बिना मोहि कछु न सुहावै जक न पड़त है आँखड़ियाँ॥ १॥
तडफत तडफत बहु दिन बीते पड़ी बिरहकी फाँसड़ियाँ।
अब तो बेग दया कर प्यारा मैं छूँ थारी दासड़ियाँ॥ २॥
नैण दुखी दरसणकूँ तरसैं नाभि न बैठे सासड़ियाँ।
रात दिवस हिय आरत मेरो कब हरि राखै पासड़ियाँ॥ ३॥
लगी लगन छूटणकी नाहीं अब क्यूँ कीजै आँटड़ियाँ।
मीराके प्रभु कब र मिलोगे पूरो मनकी आसड़ियाँ॥ ४॥

(४६१) राग जैजैवंती—ताल चर्चरी

गली तो चारों बंद हुई, मैं हरिसे मिलूँ कैसे जाय॥
ऊँची-नीची राह लपटीली, पाँव नहीं ठहराय।
सोच सोच पग धरूँ जतनसे, बार-बार डिग जाय॥

ऊँचा नीचाँ महल पियाका म्हाँसूँ चढ्यो न जाय।
पिया दूर पंथ म्हारो झीणो, सुरत झकोला खाय॥
कोस कोसपर पहरा बैठ्या, पैंड पैंड बटमार।
हे बिधना कैसी रच दीनी दूर बसायो म्हारो गाँव॥
मीराके प्रभु गिरधर नागर सतगुरु दई बताय।
जुगन-जुगनसे बिछड़ी मीरा घरमें लीनी लाय॥

(४६२) राग जोगिया—ताल दीपचंदी

हे री मैं तो दरद दिवानी मेरो दरद न जाणै कोय॥
घायलकी गति घायल जाणै जो कोइ घायल होय।
जौहरिकी गति जौहरी जाणै की जिन जौहर होय॥
सूली ऊपर सेज हमारी सोवण किस बिध होय।
गगन मँडलपर सेज पियाकी किस बिध मिलणा होय॥
दरदकी मारी बन-बन डोलूँ बैद मिल्या नहिं कोय।
मीराकी प्रभु पीर मिटेगी जद बैद साँवलियाँ होय॥

(४६३) राग माँड़—ताल कहरवा

नातो नामको जी म्हाँसूँ तनक न तोड़्यो जाय॥
पाना ज्यूँ पीली पड़ी रे, लोग कहें पिंड रोग।
छाने लाँधण म्हैं किया रे, राम मिलणके जोग॥
बाबळ बैद बुलाइया रे, पकड़ दिखाई म्हाँरी बाँह।
मूरख बैद मरम नहिं जाणे, कसक कलेजे माँह॥
जा बैदाँ घर आपणे रे, म्हाँरो नाँव न लेय।
मैं तो दाझी बिरहकी रे, तू काहेकूँ दारू देय॥
माँस गळ गळ छीजिया रे, करक रह्या गल आहि।
आँगळियाँ री मूदड़ी (म्हारे) आवण लागी बाँहि॥
रह रह पापी पपीहड़ा रे पिवको नाम न लेय।
जे कोइ बिरहण साम्हले तो, पिव कारण जिव देय॥

खिण मंदिर खिण आगणेरे, खिण खिण ठाढी होय।
घायल ज्यूँ घूमूँ खड़ी, (म्हारी) बिथा न बूझै कोय॥
काढ़ कलेजो मैं धरूँ रे कागा तू ले जाय।
ज्याँ देसाँ म्हारो पिव बसै रे, वे देखै तू खाय॥
म्हाँरे नातो नाँवको रे, और न नातो कोय।
मीरा ब्याकुल बिरहणी रे, (हरि) दरसण दीजो मोय॥

(४६४) राग कामोद—ताल तिताला

आली रे मेरे नैणा बाण पड़ी॥
चित्त चढ़ो मेरे माधुरी मूरत, उर बिच आन अड़ी।
कबक ठाढ़ी पंथ निहारूँ, अपने भवन खड़ी॥
कैसे प्राण पिया बिनु राखूँ, जीवन मूल जड़ी।
मीरा गिरधर हाथ बिकानी, लोग कहै बिगड़ी॥

(४६५) राग बिहाग—ताल चर्चरी

माई म्हारी हरिजी न बूझी बात।
पिंड माँसू प्राण पापी निकस क्यूँ नहीं जात॥
पट न खोल्या मुखाँ न बोल्या साँझ भई परभात।
अबोलणा जुग बीतण लागो तो काहेकी कुशलात॥
सावण आवण होय रह्यो रे नहिं आवणकी बात।
रैण अँधेरी बीज चमकै तारा गिणत निसि जात॥
सुपनमें हरि दरस दीन्हों मैं न जाण्यूँ हरि जात।
नैण म्हाराँ उधण आया रही मन पछतात॥
लेइ कटारी कंठ चीरूँ करूँगी अपघात।
मीरा ब्याकुल बिरहणी रे बाल ज्यूँ बिललात॥

(४६६) राग पहाड़ी—ताल कहरवा

घड़ी एक नहिं आवड़े, तुम दरसण बिन मोय।
तुम हो मेरे प्राणजी, कासूँ जीवण होय॥
धान न भावै नींद न आवै बिरह सतावै मोय।
घायल सी घूमत फिरूँ रे, मेरो दरद न जाणै कोय॥

दिवस तो खाय गमाइयो रे रैण गमाई सोय।
प्राण गमाया झूरताँ रे, नैण गमाया रोय॥
जो मैं ऐसी जाणती रे प्रीति कियाँ दुख होय।
नगर ढँढोरा फेरती रे प्रीति करो मत कोय॥
पंथ निहारूँ डगर बहारूँ, ऊभी मारग जोय।
मीराके प्रभु कब र मिलोगे, तुम मिलियाँ सुख होय॥

(४६७) राग देस बिलंपत—ताल तिताला

दरस बिनु दूखण लागे नैन।
जबसे तुम बिछुड़े प्रभु मोरे कबहुँ न पायो चैन॥
सबद सुणत मेरी छतियाँ काँपै मीठे लागैं बैन।
बिरह कथा काँसूँ कहूँ सजनी बह गई करवत ऐन॥
कल न परत पल हरि मग जोवत भई छमासी रैन।
मीराके प्रभु कब र मिलोगे दुख मेटण सुख दैन॥

(४६८) राग धनी—ताल तिताला

साँवरा म्हारी प्रीत निभाज्यो जी॥
थे छो म्हारा गुण रा सागर औगण म्हारूँ मति जाज्यो जी।
लोकन धीजै (म्हारो) मन न पसीजै, मुखड़ारा सबद सुणाज्यो जी॥ १॥
मैं तो दासी जनम-जनमकी म्हारे आँगणा रमता आज्यो जी।
मीराके प्रभु गिरधर नागर बेड़ो पार लगाज्यो जी॥ २॥

(४६९) राग पीलू—ताल कहरवा

स्याम सुंदरपर वार।
जीवड़ो मैं वार डारूँगी, हाँ॥ टेक॥
तेरे कारण जोग धारणा लोकलाज कुल डार।
तुम देख्याँ बिन कल न पड़त है नैन चलत दोउँ बार॥
कहा करूँ कित जाऊँ मोरी सजनी कठिन बिरहकी धार।
मीरा कहै प्रभु कब र मिलोगे तुम चरणा आधार॥

(४७०) राग पीलू—ताल कहरवा

रमइया बिनु रह्यो न जाय।
खान पान मोहि फीको-सो लागै नैणा रहे मुरझाय॥
बार-बार मैं अरज करूँ छूँ रैण गई दिन जाय।
मीरा कहै हरि तुम मिलियाँ बिन तरस तरस तन जाय॥

(४७१) राग दरबारी—ताल तिताला

प्रभुजी थे कहाँ गया नेहड़ो लगाय।
छोड़ गया बिस्वास सँगाती प्रेमकी बाती बळाय॥
बिरह समँदमें छोड़ गया छो नेहकी नाव चलाय।
मीराके प्रभु कब र मिलोगे तुम बिन रह्योइ न जाय॥

(४७२) राग सारंग—ताल दादरा

हे मेरो मनमोहना आयो नहीं सखी री॥ टेक॥
कैं कहुँ काज किया संतनका कैं कहुँ गैल भुलावना॥ १॥
कहा करूँ कित जाऊँ मेरी सजनी लाग्यो है बिरह सतावना॥ २॥
मीरा दासी दरसण प्यासी हरि-चरणाँ चित लावना॥ ३॥

(४७३) राग बागेश्री—ताल चर्चरी

मैं बिरहणि बैठी जागूँ जगत सब सोवै री आली॥
बिरहणि बैठी रंगमहलमें, मोतियनकी लड़ पोवै।
इक बिरहणि हम ऐसी देखी, अँसुवनकी माला पोवै॥
तारा गिण गिण रैण बिहानी, सुखकी घड़ी कब आवै।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, जब मोहि दरस दिखावै॥

(४७४) राग दरबारी कान्हरा—ताल तिताला

पिय बिन सूनो छै जी म्हारो देस॥
ऐसे हैं कोई पिवकूँ मिलावै तन मन करूँ सब पेस।
तेरे कारण बन बन डोलूँ कर जोगणको भेस॥
अवधि बदीती अजहुँ न आए पंडर हो गया केस।
मीराके प्रभु कब र मिलोगे तज दियो नगर नरेस॥

(४७५) राग कोसी कान्हरा—ताल तिताला
(मध्य लय)

कोई कहियौ रे प्रभु आवनकी। आवनकी मनभावनकी॥ टेक॥
आप न आवै लिख नहिं भेजै, बाण पड़ीं ललचावनकी।
ए दोउ नैण कह्यो नहिं मानै नदियाँ बहै जैसे सावनकी॥ १॥
कहा करूँ कछु नहिं बस मेरो पाँख नहीं उड़ जावनकी।
मीरा कहै प्रभु कब र मिलोगे चेरी भइ हूँ तेरे दाँवनकी॥ २॥

(४७६) राग सोहनी—ताल कहरवा

मैं जाण्यो नाहीं प्रभुको मिलण कैसे होय री।
आये मेरे सजना फिर गये अँगना मैं अभागण रही सोय री॥
फारूँगी चीर करूँ गळ कंथा रहूँगी बैरागण होय री।
चुड़ियाँ फोरूँ माँग बखेरूँ कजरा मैं डारूँ धोय री॥
निस बासर मोहि बिरह सतावै कल न परत पल मोय री।
मीराके प्रभु हरि अबिनासी मिल बिछड़ो मत कोय री॥

(४७७) राग पूरिया कल्याण—ताल दीपचंदी

साजन सुध ज्यूँ जाणो लीजै हो।
तुम बिन मोरे और न कोई क्रिया रावरी कीजै हो॥ १॥
दिन नहिं भूख रैण नहिं निंदरा यूँ तन पळ पळ छीजै हो।
मीराके प्रभु गिरधर नागर मिल बिछड़न मत कीजै हो॥ २॥

(४७८) राग गौंड मलार—ताल चर्चरी

बादळ देख डरी हो, स्याम! मैं बादळ देख डरी॥
काळी-पीळी घटा ऊमड़ी बरस्यो एक घरी।
जित जाऊँ तित पाणी पाणी हुई हुई भोम हरी॥
जाका पिय परदेस बसत है भीजूँ बहार खरी।
मीराके प्रभु हरि अबिनासी कीजो प्रीत खरी॥

(४७९) राग सूरदासी मलार—ताल तिताला
(मध्य लय)

बरसै बदरिया सावनकी, सावनकी मनभावनकी॥
सावनमें उमग्यो मेरो मनवा भनक सुनी हरि आवनकी।
उमड़ घुमड़ चहुँ दिसिसे आयो दामण दमके झर लावनकी॥ १॥
नान्हीं नान्हीं बूँदन मेहा बरसै सीतल पवन सोहावनकी।
मीराके प्रभु गिरधर नागर आनँद मंगळ गावनकी॥ २॥

(४८०) राग रामदासी मलार—ताल तिताला

डारि गयो मनमोहन पासी।
आँबाकी डाल कोयल इक बोलै मेरो मरण अरु जग केरी हाँसी॥ १॥
बिरहकी मारी मैं बन-बन डोलूँ प्रान तजूँ करवत ल्यूँ कासी।
मीराके प्रभु हरि अबिनासी तुम मेरे ठाकुर मैं तेरी दासी॥ २॥

(४८१) राग शुद्ध सारंग—ताल तिताला

हरि बिन ना सरै री माई।
मेरा प्राण निकस्या जात हरी बिन ना सरै माई॥
मीन दादुर बसत जळमें जळसे उपजाई।
तनक जलसे बाहर कीना तुरत मर जाई॥
कान लकरी बन परी काठ घुन खाई।
ले अगन प्रभु डार आये भसम हो जाई॥
बन बन ढूँढ़त मैं फिरी माई सुधि नहिं पाई।
एक बेर दरसण दीजे सब कसर मिटि जाई॥
पात ज्यों पीळी पड़ी अरु बिपत तन छाई।
दासि मीरा लाल गिरधर, मिल्या सुख छाई॥

(४८२) राग कालिंगड़ा—ताल तिताला

सुनी हो मैं हरि-आवनकी अवाज।
महल चढ़-चढ़ जोऊँ मेरी सजनी! कब आवै महाराज॥ १॥
दादर मोर पपइया बोलै, कोयल मधुरे साज।
उमँग्यो इंद्र चहूँ दिसि बरसै दामणि छोडी लाज॥ २॥

धरती रूप नवा नवा धरिया, इंद्र मिलणकै काज।
मीराके प्रभु हरि अबिनासी बेग मिलो सिरराज॥ ३॥

(४८३) राग टोड़ी—ताल तिताला

आओ मनमोहना जी जोऊँ थाँरी बाट।
खान-पान मोहि नेक न भावै नैणन लगे कपाट॥
तुम आयाँ बिन सुख नहिं मेरे दिलमें बहोत उचाट।
मीरा कहै मैं भई रावरी छाँडो नाहिं निराट॥

(४८४) राग सुकल बिलावल—ताल तिताला

आओ मनमोहन जी मीठा थाँरा बोल।
बाळपणाँकी प्रीत रमइयाजी, कदे गहिं आयो थाँरो तोल॥ १॥
दरसण बिन, मोहि जक न परत है चित मेरो डावाँडोल।
मीरा कहै मैं भई रावरी, कहो तो बजाऊँ ढोल॥ २॥

(४८५) राग पंचम—ताल तिताला

सोवत ही पलकामें मैं तो पलक लगी पलमें पिव आये।
मैं जु उठी प्रभु आदर देणकूँ, जाग पड़ी पिव ढूँढ़ न पाये॥ १॥
और सखी पिव सोइ गमाये मैं जू सखी पिव जागि गमाये।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, सब सुख होय स्याम घर आये॥ २॥

(४८६) राग पीलू—ताल कहरवा

राम मिलणके काज सखी मेरे आरति उरमें जागी री॥
तडफत-तडफत कळ न परत है, बिरहबाण उर लागी री।
निसदिन पंथ निहारूँ पिवको, पलक न पळ भरी लागी री॥ १॥
पीव-पीव मैं रटूँ रात-दिन, दूजी सुध-बुध भागी री।
बिरह भुजँग मेरो डस्यो है कलेजो लहर हळाहळ जागी री॥ २॥
मेरी आरति मेटि गोसाईं, आय मिलौ मोहि सागी री।
मीरा ब्याकुल अति उकळाणी, पियाकी उमँग अति लागी री॥ ३॥

(४८७) राग भीमपलासी—ताल तिताला

गोबिंद कबहुँ मिलै पिया मेरा ॥
चरण-कँवलको हँस-हँस देखूँ राखूँ नैणाँ नेरा।
निरखणकूँ मोहि चाव घणेरो कब देखूँ मुख तेरा ॥
ब्याकुल प्राण धरत नहिं धीरज मिल तूँ मीत सबेरा।
मीराके प्रभु गिरधर नागर ताप तपन बहुतेरा ॥

(४८८) राग भैरवी—ताल कहरवा

मैं हरि बिन क्यों जिऊँ री माइ ॥
पिव कारण बौरी भई ज्यूँ काठहि घुन खाइ।
ओखद मूळ न संचरै मोहि लाग्यो बौराइ ॥
कमठ दादुर बसत जलमें जलहि ते उपजाइ।
मीन जलके बीछुरै तन तळफि करि मरि जाइ ॥
पिव ढूँढण बन-बन गई कहुँ मुरली धुनि पाइ।
मीराके प्रभु लाल गिरधर मिलि गये सुखदाइ ॥

(४८९) धुन लावनी—ताल कहरवा

तुम्हरे कारण सब सुख छोड्या अब मोहि क्यूँ तरसावौ हौ।
बिरह-बिथा लागी उर अंतर सो तुम आय बुझावौ हौ ॥ १ ॥
अब छोड़त नहिं बणै प्रभूजी हँसकर तुरत बुलावौ हौ।
मीरा दासी जनम-जनमकी अंगसे अंग लगावौ हौ ॥ २ ॥

(४९०) राग पीलू—ताल कहरवा

करुणा सुणो स्याम मेरी।
मैं तो होय रही चेरी तेरी ॥
दरसण कारण भई बावरी बिरह बिथा तन घेरी।
तेरे कारण जोगण हूँगी दूँगी नग्र बिच फेरी ॥
कुंज बन हेरी-हेरी ॥
अंग भभूत गले मृगछाला यो तन भसम करूँ री।
अजहुँ न मिल्या राम अबिनासी बन-बन बीच फिरूँ री ॥
रोऊँ नित टेरी-टेरी ॥

जन मीराकूँ गिरिधर मिलिया दुख मेटण सुख भेरी।
रूम-रूम साता भइ उरमें मिट गई फेरा फेरी॥
रहूँ चरननि तर चेरी॥

(४९१) राग सोरठा—ताल चर्चरी

हो जी हरि कित गये नेह लगाय॥
नेह लगाय मेरो मन हर लियो रस भरि टेर सुनाय।
मेरे मनमें ऐसी आवै मरूँ जहर-बिस खाय॥
छाँड़ि गये बिसवासघात करि नेहकी नाव चढ़ाय।
मीराके प्रभु कब र मिलोगे रहे मधुपुरी छाय॥

(४९२) राग दुर्गा—ताल तिताला

हो गये स्याम दूजके चंदा॥
मधुबन जाइ रहे मधु बनिया, हमपर डारो प्रेमको फंदा।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, अब तो नेह परो कछु मंदा॥

(४९३) राग सावनी कल्याण—ताल तिताला

पपइया रे पिवकी बाणि न बोल।
सुणि पावेली बिरहणी रे थारी राळेली पाँख मरोड़॥
चाँच कटाऊँ पपइया रे ऊपर काळोर लूण।
पिव मेरा मैं पिवकी रे तू पिव कहै स कूण॥
थारा सबद सुहावणा रे जो पिव मेला आज।
चाँच मँढ़ाऊँ थारी सोवनी रे तू मेरे सिरताज॥
प्रीतमकूँ पतियाँ लिखूँ रे कागा तूँ ले जाय।
जाइ प्रीतम जासूँ यूँ कहै रे थाँरि बिरहण धान न खाय॥
मीरा दासी ब्याकुळी रे पिव-पिव करत बिहाय।
बेगि मिलो प्रभु अंतरजामी तुम बिनु रह्यौ न जाय॥

(४९४) राग देस—ताल तिताला

भवनपति तुम घर आज्यो हो।
बिथा लगी तन मँहिने (म्हारी) तपत बुझाज्यो हो॥
रोवत रोवत डोलता सब रैण बिहावै हो।
भूख गई निदरा गई पापी जीव न जावै हो॥
दुखियाकूँ सुखिया करो मोहि दरसण दीजै हो।
मीरा-ब्याकुल बिरहणी अब बिलम न कीजै हो॥

(४९५) राग देस—ताल तिताला

पिया मोहि दरसण दीजै हो।
बेर-बेर मैं टेरहूँ या किरपा कीजै हो॥
जेठ महीने जल बिना पंछी दुख होई हो।
मोर असाढ़ाँ कुरळहे घन चात्रग सोई हो॥
सावणमें झड़लागियो सखि तीजाँ खेलै हो।
भादरवै नदियाँ बहै दूरी जिन मेलै हो॥
सीप स्वाति ही झलती आसोजाँ सोई हो।
देव कातीमें पूजहे मेरे तुम होई हो॥
मंगसर ठंढ बहोती पड़ै मोहि बेगि सम्हालो हो।
पोस महीं पाला घणा, अबही तुम न्हालो हो॥
महा महीं बसंत पंचमी फागाँ सब गावै हो।
फागुण फागाँ खेलहैं बणराय जरावै हो॥
चैत चित्तमें ऊपजी दरसण तुम दीजै हो।
बैसाख बणराइ फूलवै कोमल कुरळीजै हो॥
काग उड़ावत दिन गया बूझूँ पंडित जोसी हो।
मीरा बिरहण ब्याकुली दरसण कद होसी हो॥

(४९६) राग बिहागरा—ताल तिताला

ऐसी लगन लगाय कहाँ (तूँ) जासी।
तुम देखे बिन कल न पड़त है तड़फ-तड़फ जिव जासी॥
तेरे खातिर जोगण हूँगी करवत लूँगी कासी।
मीराके प्रभु गिरधर नागर चरणकँवलकी दासी॥

(४९७) राग आनन्द भैरों—ताल तिताला

सखी मेरी नींद नसानी हो।
पिवको पंथ निहारत सिगरी रैण बिहानी हो॥
सखियन मिलकर सीख दई मन एक न मानी हो।
बिन देख्याँ कल नाहिं पड़त जिय ऐसी ठानी हो॥
अंग-अंग ब्याकुल भई मुख पिय पिय बानी हो।
अंतर बेदन बिरहकी कोई पीर न जानी हो॥
ज्यूँ चातक घनकूँ रटै मछली जिमि पानी हो।
मीरा ब्याकुल बिरहणी सुध बुध बिसरानी हो॥

(४९८) राग कोसी—ताल तिताला

म्हारी सुध ज्यूँ जानो ज्यूँ लीजो।
पल पल ऊभी पंथ निहारूँ, दरसण म्हाने दीजो।
मैं तो हूँ बहु ओगुणवाळी औगुण सब हर लीजो॥
मैं तो दासी थाँरे चरणकँवलकी, मिल बिछड़न मत कीजो।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, हरि चरणाँ चित दीजो॥

(४९९) राग सावेरी—ताल तिताला

हरि बिन क्यूँ जीऊँ री माय।
हरि कारण बौरी भई जस काठहि घुन खाय॥
औषध मूल न संचरै, मोहि लागौ बौराय।
कमठ दादुर बसत जलमहँ, जलहिं ते उपजाय॥
हरि ढूँढ़न गई बन-बन, कहुँ मुरली धुन पाय।
मीराके प्रभु लाल गिरधर, मिलि गये सुखदाय॥

(५००) राग काफी—ताल दीपचन्दी

घर आँगण न सुहावे, पिया बिन मोहि न भावे॥ टेक॥
दीपक जोय कहा करूँ सजनी! पिय परदेस रहावे।
सूनी सेज जहर ज्यूँ लागे, सिसक सिसक जिय जावे॥
नैण निदरा नहि आवे॥ १॥
कदकी ऊभी मैं मग जोऊँ, निस दिन बिरह सतावे।
कहा कहूँ कछु कहत न आवे हिवड़ो अति उकळावे॥
हरी कब दरस दिखावे॥ २॥
ऐसो है कोई परम सनेही, तुरत सनेसो लावे।
वा बिरियाँ कद होसी मुझको हरि हँस कंठ लगावे॥
मीरा मिलि होरी गावे॥ ३॥

(५०१) राग देवगिरि—ताल तिताला

पिया, तैं कहाँ गयौ नेहरा लगाय।
छाँड़ि गयौ अब कहाँ बिसासी, प्रेमकी बाती बराय॥
बिरह-समँदमें छाँड़ि गयो, पिव नेहकी नाव चलाय।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, तुम बिन रह्योय न जाय॥

(५०२) राग बरसाती—ताल चर्चरी

बंसीवारा आज्यो म्हारे देस थारी साँवरी सुरत व्हालो बेस॥
आऊँ-आऊँ कर गया साँवरा, कर गया कौल अनेक।
गिणता-गिणता घस गई म्हारी आँगळिया री रेख॥ १॥
मैं बैरागिण आदिकी जी थाँरे म्हारे कदको सनेस।
बिन पाणी बिन साबुण साँवरा, होय गई धोय सफेद॥ २॥
जोगण होय जंगल सब हेरूँ तेरा नाम न पाया भेस।
तेरी सुरतके कारणे म्हे धर लिया भगवाँ भेस॥ ३॥
मोर-मुगट पीताम्बर सोहै घूँघरवाला केस।
मीराके प्रभु गिरधर मिलियाँ दूनो बढ़ै सनेस॥ ४॥

(५०३) राग जोगिया—ताल कहरवा

बाला मैं बैरागण हूँगी।
जिन भेषाँ म्हारो साहिब रीझे, सोही भेष धरूँगी॥
सील संतोष धरूँ घट भीतर, समता पकड़ रहूँगी।
जाको नाम निरंजन कहिये, ताको ध्यान धरूँगी॥
गुरुके ग्यान रँगूँ तन कपड़ा, मन मुद्रा पैरूँगी।
प्रेम पीतसूँ हरिगुण गाऊँ, चरणन लिपट रहूँगी॥
या तनकी मैं करूँ कींगरी रसना नाम कहूँगी।
मीराके प्रभु गिरधर नागर साधाँ संग रहूँगी॥

(५०४) राग माखा—ताल कहरवा

इण सरवरियाँ री पाळ मीराबाई साँपड़े॥
साँपड़ किया असनान सूरज सामी जप करे।
होय बिरंगी नार, डगराँ बिच क्यूँ खड़ी॥ १॥
काँई थारो पीहर दूर घराँ सासू लड़ी।
चाल्यो जा रे असल गुँवार तनै मेरी॥ २॥
गुरु म्हारा दीनदयाल हीराँरा पारखी।
दियो म्हाने ग्यान बताय, संगत कर साधरी॥ ३॥
खोई कुळकी लाज मुकुंद थाँरे कारणे।
बेगही लीज्यो सम्हाल, मीरा पड़ी बारणे॥ ४॥

(५०५) राग छाया टोड़ी—ताल तिताला

म्हारे घर आओ प्रीतम प्यारा॥
तन मन धन सब भेंट धरूँगी भजन करूँगी तुम्हारा।
तुम गुणवंत सुसाहिब कहिये मोमें औगुण सारा॥
मैं निगुणी कछु गुण नहिं जानूँ तुम छो बगसणहारा।
मीरा कहै प्रभु कब रे मिलोगे तुम बिन नैण दुखारा॥

(५०६) राग पीलू—ताल कहरवा

साजन घर आओनी मीठा बोला॥ टेक॥
कदकी ऊभी मैं पंथ निहारूँ, थाँरो, आयाँ होसी भला॥ १॥
आओ निसंक, संक मत मानो, आयाँ ही सुक्ख रहेला॥ २॥
तन मन बार करूँ न्योछावर, दीज्यो स्याम मोय हेला॥ ३॥
आतुर बहुत बिलम मत कीज्यो, आयाँ ही रंग रहेला॥ ४॥
तुमरे कारण सब रंग त्याग्या, काजळ तिलक तमोला॥ ५॥
तुम देख्याँ बिन कल न पड़त है, कर धर रही कपोला॥ ६॥
मीरा दासी जनम जनमकी, दिलकी घुंडी खोला॥ ७॥

(५०७) राग प्रभावती—ताल तिताला

म्हारे जनम-मरण साथी थाने नहिं बिसरूँ दिन राती॥
थाँ देख्याँ बिन कल न पड़त है जाणत मेरी छाती।
ऊँची चढ़-चढ़ पंथ निहारूँ रोय-रोय अँखिया राती॥
यो संसार सकल जग झूठो, झूठा कुलरा न्याता।
दोउ कर जोड्याँ अरज करूँ छूँ सुण लीज्यो मेरी बाती॥
या मन मेरो बड़ो हरामी ज्यूँ मदमाती हाथी।
सतगुरु हाथ धर्यो सिर ऊपर आँकुस दै समझाती॥
पल-पल पिवकौ रूप निहारूँ निरख-निरख सुख पाती।
मीराके प्रभु गिरधर नागर हरिचरणाँ चित राती॥

❑ ❑

दर्शनानन्द

(५०८) राग मालकोस—ताल तिताला

मैं अपणे सैयाँ सँग साँची।
अब काहेकी लाज सजनी परगट ह्वै नाची॥
दिवस भूख न चैन कबहूँ नींद निसि नासी।
बेध बार पार ह्वैगो ग्यान गुह गाँसी॥
कुळ कुटुम्बी आन बैठे मनहु मधुमासी।
दासी मीरा लाल गिरधर मिटी सब हाँसी॥

(५०९) राग पटमंजरी—ताल तिताला

मैं तो साँवरेके रंग राची।
साजि सिंगार बाँधि पग घुँघरू, लोक-लाज तजि नाची॥
गई कुमति, लई साधुकी संगति, भगत, रूप भइ साँची।
गाय गाय हरिके गुण निस दिन, कालब्यालसूँ बाँची॥
उण बिन सब जग खारो लागत, और बात सब काँची।
मीरा श्रीगिरधरन लालसूँ, भगति रसीली जाँची॥

(५१०) राग ललित—ताल तिताला

हमरो प्रणाम बाँकेबिहारीको।
मोर मुकुट माथे तिलक बिराजै, कुंडळ अलका कारीको॥
अधर मधुरपर बंसी बजावै, रीझ रीझावै राधाप्यारीको।
यह छबि देख मगन भई मीरा, मोहन गिरवरधारीको॥

(५११) राग त्रिबेनी—ताल तिताला (द्रुत लय)

(मेरे) नैनाँ निपट बंकट छबि अटके।
देखत रूप मदन मोहनको पियत पियूख न मटके॥
बारिज भवाँ अलक, टेढ़ी मनौ अति सुगंधरस अटके॥
टेढ़ी कटि टेढ़ी कर मुरली टेढ़ी पाग लर लटके।
मीराँ प्रभुके रूप लुभानी गिरधर नागर-नटके॥

(५१२) राग मुल्तानी—ताल तिताला

ऐसा प्रभु जाण न दीजै हो।
तन मन धन करि बारणै हिरदै धर लीजै हो॥
आव सखी मुख देखिये नैणाँ रस पीजै हो।
जिण जिण बिध रीझै हरी सोई बिधि कीजै हो॥
सुंदर स्याम सुहावणा मुख देख्याँ जीजै हो।
मीराके प्रभु रामजी बड़भागण रीझै हो॥

(५१३) राग गूजरी—ताल झप

या मोहनके मैं रूप लुभानी।
सुंदर बदन कमलदल लोचन बाँकी चितवन मँद मुसकानी ॥ १ ॥
जमनाके नीरे-तीरे धेन चरावै, बंसीमें गावै मीठी बानी।
तन मन धन गिरधरपर वारूँ, चरणकँवल मीरा लपटानी ॥ २ ॥

(५१४) राग पीलू—ताल कहरवा

पग घुँघरू बाँध मीरा नाची रे॥
मैं तो मेरे नारायणकी आपहि हो गइ दासी रे।
लोग कहै मीरा भई बावरी न्यात कहै कुळनासी रे॥
बिषका प्याला राणाजी भेज्या पीवत मीरा हाँसी रे।
मीराके प्रभु गिरधर नागर सहज मिले अबिनासी रे॥

(५१५) राग माँड़—ताल तिताला

माई री मैं तो लियो गोबिंदो मोल।
कोई कहै छाने, कोई कहै छुपके, लियोरी बजंता ढोल ॥ १ ॥
कोई कहै मुँहघो, कोई कहै सुहँघो, लियो री तराजू तोल।
कोई कहै काळो, कोई कहै गोरो, लियो री अमोलक मोल ॥ २ ॥
कोई कहै घरमें, कोई कहै बनमें, राधाके संग किलोल।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, आवत प्रेमके मोल ॥ ३ ॥

(५१६) राग तिलंग—ताल तेवरा

मन रे परसि हरिके चरण।
सुभग सीतल कँवल कोमल, त्रिविध, ज्वाला हरण।
जिण चरण प्रह्लाद परसे, इंद्र पदवी धरण॥
जिण चरण ध्रुव अटल कीन्हें, राख अपनी सरण।
जिण चरण ब्रह्मांड भेट्यो, नखसिखाँ सिरी धरण॥
जिण चरण प्रभु परसि लीने, तरी गोतम-घरण।
जिण चरण काळीनाग नाथ्यो, गोप लीला-करण॥
जिण चरण गोबरधन धार्‌यो, गर्व मघवा हरण।
दासि मीरा लाल गिरधर, अगम तारण तरण॥

(५१७) राग पीलू बरवा—ताल कहरवा

बड़े घर ताली लागी रे, म्हाँरा मनरी उणारथ भागीरे।
छालरिये म्हाँरो चित नहीं रे, डाबरिये कुण जाव।
गंगा-जमनासूँ काम नहीं रे, मैं तो जाय मिलूँ दरियाव॥ १॥
हाळ्याँ मोळ्याँसूँ काम नहीं रे, सीख नहिं सिरदार।
कामदाराँसूँ काम नहिं रे, मैं तो जाब करूँ दरबार॥ २॥
काच कथीरसूँ काम नहीं रे, लोहा चढ़े सिर भार।
सोना रूपासूँ काम नहीं रे, म्हाँरे हीराँरो बौपार॥ ३॥
भाग हमारो जागियो रे, भयो समँद सूँ सीर।
अम्रित प्याला छाँड़िके, कुण पीवे कड़वो नीर॥ ४॥
पीपाकूँ प्रभु परचो दियो रे, दीन्हा खजाना पूर।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, धणी मिल्या छै हजूर॥ ५॥

(५१८) राग मधुमाध सारंग—ताल तिताला

नंदनँदन बिलमाई, बदराने घेरी माई॥
इत घन लरजे, उत घन गरजे, चमकत बिज्जु सवाई।
उमण घुमण चहुँ दिसिसे आया, पवन चलै पुरवाई॥
दादुर मोर पपीहा बोलै, कोयल सबद सुणाई।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, चरणकँवल चित लाई॥

(५१९) राग नीलाम्बरी—ताल कहरवा

नैणा लोभी रे, बहुरि सके नहिं आय।
रोम-रोम नखसिख सब निरखत ललकि रहे ललचाय॥
मैं ठाढ़ी ग्रिह आपणे री, मोहन निकसे आय।
बदन चंद परकासत हेली, मंद-मंद मुसकाय॥
लोक कुटुम्बी बरजि बरजहीं, बतियाँ कहत बनाय।
चंचळ निपट अटक नहिं मानत पर-हथ गये बिकाय॥
भलो कहौ कोई बुरी कहौ मैं, सब लई सीस चढ़ाय।
मीरा प्रभु गिरधरनलाल बिन पल छिन रह्यो न जाय॥

(५२०) राग होली झँझोटी—ताल चर्चरी

होरी खेलत हैं गिरधारी।
मुरली चंग बजत डफ न्यारो सँग जुबती ब्रजनारी॥
चंदन केसर छिड़कत मोहन अपने हाथ बिहारी।
भरि भरि मूठ गुलाल लाल चहुँ देत सबनपै डारी॥
छैल छबीले नवल कान्ह सँग स्यामा प्राण पियारी।
गावत चार धमार राग तहँ दै दै कल करतारी॥
फाग जु खेलत रसिक साँवरो बाढ़्यो रस ब्रज भारी।
मीराकूँ प्रभु गिरधर मिलिया मोहनलाल बिहारी॥

(५२१) राग झँझोटी—ताल दादरा

मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई॥
जाके सिर मोर मुगट मेरो पति सोई।
तात मात भ्रात बंधु आपनो न कोई॥
छाँड़ि दई कुळकि कानि कहा करिहै कोई।
संतन ढिग बैठि बैठि लोकलाज खोई॥
चुनरीके किये टूक ओढ़ लीन्हीं लोई।
मोती मूँगे उतार बनमाला पोई॥
अँसुवन जळ सींचि सींचि प्रेम बेलि बोई।
अब तो बेल फैल गई आणँद फल होई॥
दूधकी मथनियाँ बड़े प्रेमसे बिलोई।
माखन जब काढ़ि ळियो छाछ पिये कोई॥
भगति देखि राजी हुई जगत देखि रोई।
दासी मीरा लाल गिरधर तारो अब मोही॥

(५२२) राग अलैया—ताल कहरवा

तोसों लाग्यो नेह रे प्यारे नागर नंद-कुमार।
मुरली तेरी मन हर्‌यौ,
बिसर्‌यौ घर ब्यौहार॥ तोसों०॥
जबतैं श्रवननि धुनि परी,
घर अँगणा न सुहाय।
पारधि ज्यूँ चूके नहीं,
म्रिगी बेधि दइ आय॥ १॥
पानी पीर न जानई ज्यों,
मीन तड़फ मरि जाय।
रसिक मधुपके मरमको नहीं,
समुझत कमल सुभाय॥ २॥
दीपकको जो दया नहिं
उडि-उडि मरत पतंग।
मीरा प्रभु गिरधर मिले,
जैसे पाणी मिलि गयौ रंग॥ ३॥

(५२३) राग सोरठ—ताल कहरवा

जोसीड़ाने लाख बधाई रे अब घर आये स्याम॥
आज आनँद उमगि भयो है जीव लहै सुखधाम।
पाँच सखी मिलि पीव परसिकैं आनँद ठामूँ-ठाम॥
बिसरि गई दुख निरखि पियाकूँ, सुफल मनोरथ काम।
मीराके सुखसागर स्वामी भवन गवन कियो राम॥

(५२४) राग परज—ताल कहरवा

सहेलियाँ साजन घर आया हो।
बहोत दिनाँकी जोवती बिरहणि पिव पाया हो॥
रतन करूँ नेवछावरी ले आरति साजूँ हो।
पिवका दिया सनेसड़ा ताहि बहोत निवाजूँ हो॥

पाँच सखी इकठी भई मिलि मंगल गावै हो।
पियाका रळी बधावणा आणँद अंग न मावै हो॥
हरि सागर सूँ नेहरो नैणाँ बँध्या सनेह हो।
मीरा सखीके आगणै दूधाँ बूठा मेह हो॥

(५२५) राग कजरी—ताल कहरवा

म्हारा ओळगिया घर आया जी।
तनकी ताप मिटी सुख पाया,
हिल-मिल मंगल गाया जी॥ १॥
घनकी धुनि सुनि मोर मगन भया,
यूँ मेरे आणँद छाया जी।
मगन भई मिल प्रभु अपणा सूँ,
भौका दरद मिटाया जी॥ २॥
चंदकूँ निरखि कमोदणि फूलै,
हरखि भया मेरे काया जी।
रग रग सीतल भई मेरी सजनी,
हरि मेरे महल सिधाया जी॥ ३॥
सब भगतनका कारज कीन्हा,
सोई प्रभु मैं पाया जी।
मीरा बिरहणि सीतल होई,
दुख दुंद दूर नसाया जी॥ ४॥

(५२६) राग बिलावल—ताल कहरवा

पियाजी म्हारे नैणाँ आगे रहज्यो जी॥
नैणाँ आगे रहज्यो म्हाने
भूल मत जाज्यो जी।
भौ सागरमें बही जात हूँ,
बेग म्हारी सुध लीज्यो जी॥ १॥

देखि बिराणे निवाँणकूँ हे क्यूँ उपजावे खीज।
काळर अपणो ही भलो हे जामें निपजै चीज॥
छैल बिराणो लाखको हे अपणें काज न होय।
ताके सँग सीधारताँ हे भला न कहसी कोय॥
बर हीणो अपणो भलो हे कोढ़ी कुष्टी कोय।
जाके सँग सीधारताँ हे भला कहै सब लोय॥
अबिनासीसूँ बालबाहे जिनसूँ साँची प्रीत।
मीराँकूँ प्रभुजी मिल्या हे ए ही भगतिकी रीत॥

(५३०) राग नट बिलावल—ताल तिताला

रे साँवलिया म्हारै, आज रँगीली गणगोर छै जी।
काळी पीळी बदळी बिजळी चमके, मेघ घटा घनघोर छै जी॥ १॥
दादुर मोर पपीहा बोले, कोयल कर रही सोर छै जी।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, चरणाँमें म्हारो जोर छै जी॥ २॥

(५३१) राग कान्हरा—ताल तिताला

तनक हरि चितवौ जी मोरी ओर।
हम चितवत तुम चितवत नाहीं दिलके बड़े कठोर॥
मेरे आसा चितवनि तुमरी और न दूजी दोर।
तुमसे हमकूँ एक हो जी हम-सी लाख करोर॥
ऊभी ठाढ़ी अरज करत हूँ अरज करत भयो भोर।
मीराके प्रभु हरि अबिनासी देस्यूँ प्राण अकोर॥

(५३२) राग प्रभाती—ताल कहरवा

जागो म्हाँरा जगपतिरायक हँस बोलो क्यूँ नहीं।
हरि छो जी हिरदा माहिं पट खोलो क्यूँ नहीं॥
तन मन सुरति सँजोइ सीस चरणाँ धरूँ।
जहाँ जहाँ देखूँ म्हारो राम तहाँ सेवा करूँ॥
सदकै करूँ जी सरीर जुगै जुग वारणैं।
छोडी छोडी कुळकी लाज स्याम थाँरे कारणैं॥

थोड़ी थोड़ी लिखूँ सिलाम बहोत करि जाणज्यौ।
बंदी हूँ खानाजाद महरि करि मानज्यौ॥
हाँ हो म्हारा नाथ सुनाथ बिलम नहिं कीजियै।
मीरा चरणाँकी दासि दरस फिर दीजियै॥

(५३३) राग हमीर—ताल तिताला

हरी मेरे जीवन प्रान-अधार।
और आसरो नाँही तुम बिन तीनूँ लोक मँझार॥
आप बिना मोहि कछु न सुहावै निरख्यौ सब संसार।
मीरा कहै मैं दास रावरी दीज्यो मती बिसार॥

(५३४) राग छाया टोडी—ताल तिताला

सखी म्हारो कानूड़ो कळेजेकी कोर।
मोर मुगट पीतांबर सोहै कुंडळकी झकझोर॥
बिंद्राबनकी कुंजगळिनमें नाचत नंदकिसोर।
मीराके प्रभु गिरधर नागर चरण-कँवळ चितचोर॥

(५३५) राग हमीर—ताल तिताला

बसो मोरे नैननमें नँदलाल॥
मोहनी मूरति साँवरि सूरति नैणा बने बिसाल।
अधर सुधारस मुरली राजत उर बैजंती-माल॥
छुद्र घंटिका कटि तट सोभित नूपुर सबद रसाल।
मीरा प्रभु संतन सुखदाई भगतबछल गोपाल॥

(५३६) राग प्रभाती—ताल तिताला

जागो बंसीवारे ललना जागो मोरे प्यारे॥
रजनी बीती भोर भयो है घर घर खुले किंवारे।
गोपी दही मथत सुनियत है कँगनाके झनकारे॥
उठो लालजी भोर भयो है सुर नर ठाढ़े द्वारे।
ग्वालबाल सब करत कुलाहल जय जय सबद उचारे॥
माखन रोटी हाथमें लीनी गउवनके रखवारे।
मीराके प्रभु गिरधर नागर तरण आयाकूँ तारे॥

(५३७) राग माँड़—ताल तिताला

स्याम! मने चाकर राखो जी।
गिरधारीलाल! चाकर राखो जी॥
चाकर रहसूँ बाग लगासूँ नित उठ दरसण पासूँ।
बिंद्राबनकी कुंजगलिनमें तेरी लीला गासूँ॥
चाकरीमें दरसण पाऊँ सुमिरण पाऊँ खरची।
भाव भगति जागीरी पाऊँ, तीनूँ बाता सरसी॥
मोर मुगट पीतांबर सोहै, गल बैजंती माळा।
बिंद्राबनमें धेनु चरावे मोहन मुरलीवाळा॥
हरे हरे नित बाग लगाऊँ, बिच बिच राखूँ क्यारी।
साँवरियाके दरसण पाऊँ, पहर कुसुम्मी सारी॥
जोगी आया जोग करणकूँ, तप करणे संन्यासी।
हरी भजनकूँ साधू आया बिंद्राबनके बासी॥
मीराके प्रभु गहिर गँभीरा सदा रहो जी धीरा।
आधी रात प्रभु दरसन दीन्हें, प्रेमनदीके तीरा॥

(५३८) राग हंस नारायण—ताल तिताला

आली! साँवरेकी दृष्टि मानो, प्रेमकी कटारी है॥ टेक॥
लागत बेहाल भई, तनकी सुध बुध गई।
तन मन सब ब्यापो प्रेम, मानो मतवारी है॥ १॥
सखियाँ मिल दोय चारी, बावरी-सी भई न्यारी।
हौं तो वाको नीके जानौं, कुंजको बिहारी है॥ २॥
चंदको चकोर चाहै, दीपक पतंग दाहै।
जल बिना मीन जैसे, तैसे प्रीत प्यारी है॥ ३॥
बिनती करूँ हे स्याम, लागूँ मैं तुम्हारे पाँव।
मीरा प्रभु ऐसी जानो, दासी तुम्हारी है॥ ४॥

(५३९) राग मालकोस—ताल तिताला (मध्य लय)

ऐसे पियै जान न दीजै हो॥
चलो, री सखी! मिलि राखिये नैनन रस पीजै, हो।
स्याम सलोनो साँवरो मुख देखत जीजै, हो॥
जोइ जोइ भेषसों हरि मिलें, सोइ सोइ कीजै, हो।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, बड़भागन रीजै, हो॥

❑ ❑

मिलनोत्तर प्रार्थना

(५४०) राग तिलक कामोद—ताल तिताला

छोड़ मत जाज्यो जी महाराज॥ टेक॥
मैं अबळा बल नायँ गुसाईं, तुमहीं मेरे सिरताज।
मैं गुणहीन गुण नाँय गुसाईं, तुम समरथ महराज॥ १॥
थाँरी होयके किणरे जाऊँ, तुमही हिबड़ारो साज।
मीराके प्रभु और न कोई राखो अबके लाज॥ २॥

❑ ❑

निश्चय

(५४१) राग खम्माच—ताल तिताला

नहिं भावै थाँरो देसड़ लोजी रँगरूड़ो॥
थाँरा देसामें राणा साध नहीं छै, लोग बसे सब कूड़ो।
गहणा गाँठी राणा हम सब त्यागा त्याग्यो कररो चूड़ो॥
काजल टीकी हम सब त्यागया त्याग्यो है बाँधन जूड़ो।
मीराके प्रभु गिरधर नागर बर पायो छै रूड़ो॥

(५४२) राग पहाड़ी—ताल कहरवा

सीसोद्यो रूठ्यो तो म्हाँरो काँई कर लेसी,
म्हे तो गुण गोबिंदका गास्याँ हो माई॥ १॥
राणोजी रूठ्यो बाँरो देस रखासी,
हरि रूठ्याँ किठे जास्याँ हो माई॥ २॥

लोक लाजकी काण न मानाँ,
निरभै निसाण घुरास्याँ हो माई॥ ३॥
राम नामकी झाझ चलास्याँ,
भौ सागर तर जास्याँ हो माई॥ ४॥
मीरा सरण साँवल गिरधरकी,
चरण-कँवल लपटास्याँ हो माई॥ ५॥

(५४३) राग गुनकली—ताल तिताला

मैं गिरधरके घर जाऊँ॥
गिरधर म्हाँरो साँचो प्रीतम देखत रूप लुभाऊँ॥
रैण पड़ै तबही उठ जाऊँ भोर भये उठि आऊँ।
रैन दिना वाके सँग खेलूँ ज्यूँ त्यूँ ताहि रिझाऊँ॥
जो पहिरावै सोई पहिरूँ जो दे सोई खाऊँ।
मेरी उणकी प्रीति पुराणी उण बिन पल न रहाऊँ॥
जहाँ बैठावें तितही बैठूँ बेचै तो बिक जाऊँ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर बार बार बलि जाऊँ॥

(५४४) राग पीलू—ताल कहरवा

तेरो कोई नहिं रोकणहार मगन होइ मीरा चली॥
लाज सरम कुलकी मरजादा सिरसैं दूर करी।
मान-अपमान दोऊ धर पटके निकसी ग्यान गळी॥
ऊँची अटरिया लाल किंवड़िया निरगुण-सेज बिछी।
पँचरंगी झालर सुभ सोहै फलन फूल कळी॥
बाजूबंद कडूला सोहै सिंदूर माँग भरी।
सुमिरण थाल हाथमें लीन्हों सोभा अधिक खरी॥
सेज सुखमणा मीरा सोहै सुभ है आज घरी।
तुम जाओ राणा घर अपणे मेरी थाँरी नाँहिं सरी॥

(५४५) राग मालकोस—ताल तिताला

श्रीगिरधर आगे नाचूँगी॥
नाच-नाच पिव रसिक रिझाऊँ प्रेमी जनकूँ जाचूँगी।
प्रेम प्रीतिका बाँधि घूँघरू सुरतकी कछनी काछूँगी॥
लोक लाज कुळकी मरजादा यामें एक न राखूँगी।
पिवके पलँगा जा पौढ़ूँगी मीरा हरि रँग राचूँगी॥

(५४६) राग पूरिया कल्यान—ताल तिताला

राणाजी म्हे तो गोविंदका गुण गास्याँ।
चरणामृतको नेम हमारे, नित उठ दरसण जास्याँ॥
हरिमंदिरमें निरत करास्याँ घूघरिया धमकास्याँ।
राम-नामका झाझ चलास्याँ भवसागर तर जास्याँ॥
यह संसार बाड़का काँटा ज्या संगत नहिं जास्याँ।
मीरा कहै प्रभु गिरधर नागर निरख परख गुण गास्याँ॥

(५४७) राग अगना—ताल तिताला

राणाजी थे क्याँने राखो म्हाँसू बैर॥
थे तो राणाजी म्हाने इसणा लागो ज्यूँ बृच्छनमें कैर।
महल अटारी हम सब ताग्या, ताग्यो थाँरो बसनो सहर॥
काजळ टीकी राणा हम सब ताग्या भगवीं चादर पहर।
मीराके प्रभु गिरधर नागर इमरित कर दियो जहर॥

(५४८) राग जौनपुरी—ताल तिताला

मैं गोबिंद गुण गाणा॥
राजा रूठै नगरी राखै हरि रूठ्याँ कहँ जाणा।
राणा भेज्या जहर पियाला इमरित करि पी जाणा॥
डबियामें भेज्या ज भुजंगम साळिगराम कर जाणा।
मीरा तो अब प्रेम-दिवानी साँवळिया बर पाणा॥

(५४९) राग कामोद—ताल तिताला

बरजी मैं काहूकी नाँहि रहूँ।
सुणो री सखी तुम चेतन होयकै मनकी बात कहूँ॥
साध-सँगति कर हरि-सुख लेऊँ जगसूँ दूर रहूँ।
तन धन मेरो सबही जावो भल मेरो सीस लहूँ॥
मन मेरो लागो सुमरण सेती सबका मैं बोल सहूँ।
मीराके प्रभु हरि अबिनासी सतगुर सरण गहूँ॥

(५५०) राग पीलू—ताल कहरवा

राणाजी म्हाँरी प्रीति पुरबली मैं काँई करूँ॥
राम नाम बिन नहीं आवड़े, हिवड़ो झोला खाय।
भोजनिया नहिं भावे म्हाँने, नींदड़ली नहिं आय॥
बिषको प्यालो भेजियो जी, जाओ मीरा पास।
कर चरणामृत पी गई, म्हाँरे गोबिंद रे बिसवास॥
बिषको प्यालो पी गई जी, भजन करो राठौर।
थाँरी मारी ना मरूँ, म्हारो राखणवालो और॥
छापा तिलक लगाइया जी, मनमें निश्चै धार।
रामजी काज सँवारिया जी, म्हाँने भावै गरदन मार॥
पेट्याँ बासक भेजियो जी, यो छै मोतीडाँरो हार।
नाग गलेमें पहिरियो, म्हाँरे महलाँ भजो उजियार॥
राठोडाँरी धीवड़ी दी, सीसोद्याँरे साथ।
ले जाती बैकुंठकूँ म्हाँरा नेक न मानी बात॥
मीरा दासी स्यामकी जी, स्याम गरीबनिवाज।
जन मीराकी राखज्यो कोइ बाँह गहेकी लाज॥

(५५१) राग खंभावती—ताल तिताला

राम-नाम मेरे मन बसियो, रसियो राम रिझाऊँ ए माय।
मैं मँद-भागण करम-अभागण, कीरत कैसे गाऊँ ए माय॥ १॥
बिरह-पिंजरकी बाड़ सखी री, उठकर जी हुलसाऊँ ए माय।
मनकूँ मार सजूँ सतगुरसूँ, दुरमत दूर गमाऊँ ए माय॥ २॥

डंको नाम सुरतकी डोरी, कड़ियाँ प्रेम चढ़ाऊँ ए माय।
प्रेमको ढोल बण्यो अति भारी, मगन होय गुण गाऊँ ए माय॥ ३॥
तन करूँ ताल मन करूँ ढफली, सोती सुरति जगाऊँ ए माय।
निरत करूँ मैं प्रीतम आगे, तो प्रीतम-पद पाऊँ ए माय॥ ४॥
मो अबळापर किरपा कीज्यो, गुण गोबिंदका गाऊँ ए माय।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, रज चरणनकी पाऊँ ए माय॥ ५॥

❑ ❑

प्रेम

(५५२) राग मधुमाध सारंग—ताल तिताला

या ब्रजमें कछु देख्यो री टोना॥
ले मटकी सिर चली गुजरिया आगे मिले बाबा नंदजीके छोना।
दधिको नाम बिसरि गयो प्यारी 'ले लेहु री कोउ स्याम सलोना'॥ १॥
बिंद्राबनकी कुंजगळिनमें आँख लगाय गयो मनमोहना।
मीराके प्रभु गिरधर नागर सुंदर स्याम सुघर रस लोना॥ २॥

(५५३) राग वृंदाबनी सारंग—ताल तिताला

आली! म्हाँने लागे बृंदाबन नीको।
घर-घर तुलसी ठाकुर पूजा दरसण गोबिंदजीको॥
निरमल नीर बहत जमनामें भोजन दूध दहीको।
रतन सिंघासण आप बिराजै मुगट धर्‌यो तुलसीको॥
कुंजन-कुंजन फिरत राधिका सबद सुणत मुरलीको।
मीराके प्रभु गिरधर नागर भजन बिना नर फीको॥

(५५४) राग सूहा—ताल तिताला

चलो मन गंगा जमुना तीर॥
गंगा-जमुना निरमल पाणी सीतल होत सरीर।
बंसी बजावत गावत कान्हों संग लियाँ बल बीर॥
मोर मुगट पीतांबर सोहै कुंडल झलकत हीर।
मीराके प्रभु गिरधर नागर चरणकँवलपर सीर॥

(५५५) राग धानी—ताल तिताला

मैं गिरधर रँग राती, सैयाँ मैं ॥
पचरँग चोला पहर सखी री मैं झिरमिट रमवा जाती।
झिरमिटमाँ मोहि मोहन मिलियो खोल मिली तन गाती ॥ १ ॥
कोईके पिया परदेस बसत हैं लिख लिख भेजैं पाती।
मेरा पिया मेरे हीय बसत हैं ना कहुँ आती जाती ॥ २ ॥
चंदा जायगा सूरज जायगा जायगी धरण अकासी।
पवन पाणी दोनूँ ही जायँगे अटल रहै अबिनासी ॥ ३ ॥
और सखी मद पी-पी माती मैं बिन पियाँ ही माती।
प्रेमभठीको मैं मद पीयो छकी फिरूँ दिन-राती ॥ ४ ॥
सुरत निरतको दिवलो जोयो मनसाकी कर ली बाती।
अगम घाणिको तेल सिंचायो बाळ रही दिन-राती ॥ ५ ॥
जाऊँनी पीहरिये जाऊँनी सासरिये हरिसूँ सैन लगाती।
मीराके प्रभु गिरधर नागर हरिचरणाँ चित लाती ॥ ६ ॥

(५५६) होरी सिंदूरा—ताल धमार

फागुनके दिन चार होली खेल मना रे ॥
बिन करताल पखावज बाजै अणहदकी झणकार रे।
बिन सुर राग छतीसूँ गावै रोम-रोम रणकार रे ॥
सील सँतोखकी केसर घोळी प्रेम प्रीत पिचकार रे।
उड़त गुलाल लाल भयो अंबर बरसत रंग अपार रे ॥
घटके सब पट खोल दिये हैं लोकलाज सब डार रे।
मीराके प्रभु गिरधर नागर चरणकँवळ बलिहार रे ॥

(५५७) राग पटमंजरी—ताल कहरवा

मीरा रंग लागो राम हरी, औरन रंग अटक परी ॥
चूड़ो म्हाँरे तिलक अरु माला, सीळ बरत सिणगारो।
और सिंगार म्हाँरे दाय न आवे, यो गुरु ग्यान हमारो ॥ १ ॥
कोइ निंदो कोइ बिंदो म्हे तो, गुण गोबिंदका गास्याँ।
जिण मारग म्हारा साध पधारै, उण मारग म्हे जास्याँ ॥ २ ॥

चोरी न करस्याँ जिव न सतास्याँ, काँई करसी म्हारो कोई।
गजसे उतर कर खर नहिं चढ़स्याँ, या तो बात न होई॥ ३॥

(५५८) राग जौनपुरी—ताल तिताला

सखी री लाज बैरण भई।
श्रीलाल गोपालके संग काहें नाहिं गई॥ १॥
कठिन क्रूर अक्रूर आयो साज रथ कहँ नई।
रथ चढ़ाय गोपाल लै गयो हाथ मीजत रही॥ २॥
कठिन छाती स्याम बिछुड़त बिरहतें तन तई।
दासि मीरा लाल गिरधर बिखर क्यूँ ना गई॥ ३॥

(५५९) राग गूजरी—ताल कहरवा

कुण बाँचै पाती, बिना प्रभु कुण बाँचै पाती॥
कागद ले ऊधोजी आयो, कहाँ रह्या साथी।
आवत जावत पाँव घिस्या रे (बाला) अँखियाँ भई राती॥
कागद ले राधा बाँचण बैठी, (बाला) भर आई छाती।
नैण नीरजमें अंब बहे रे (बाला), गंगा बहि जाती॥
पाना ज्यूँ पीळी पड़ी रे (बाला) धान नहीं खाती।
हरि बिन जिवणो यूँ जळै रे (बाला), ज्यूँ दीपक संग बाती॥
मने भरोसो रामको रे (बाला) डूब तिर्‌यो हाथी।
दासि मीरा लाल गिरधर, साँकड़ारो साथी॥

(५६०) राग पूरिया धनाश्री—ताल तिताला

परम सनेही रामकी नित ओलूँ रे आवै।
राम हमारे हम हैं रामके हरि बिन कछू न सुहावै॥
आवण कह गये अजहूँ न आये जिबड़ो अति उकळावै।
तुम दरसणकी आस रमैया कब हरि दरस दिखावै॥
चरणकँवलकी लगनि लगी नित बिन दरसण दुख पावै।
मीराकूँ प्रभु दरसण दीज्यौ आणँद बरण्यूँ न जावै॥

(५६१) राग पहाड़ी—ताल तिताला

हेली म्हास्यूँ हरि बिना रह्यो न जाय॥
सासू लड़े, नणद म्हारो खीजै, देवर रह्या रिसाय।
चौकी मेलो म्हारे सजनी ताला द्यो न जड़ाय॥
पूर्व जनमकी प्रीति म्हारी कैसे रहै लुकाय।
मीराके प्रभु गिरधरके बिन दूजौ न आवे दाय॥

(५६२) राग खम्माच—ताल कहरवा

मीरा मगन भई हरिके गुण गाय॥
साँप पिटारा राणा भेज्या मीरा हाथ दिया जाय।
न्हाय धोय जब देखन लागी, सालिगराम गई पाय॥
जहरका प्याला राणा भेज्या, इम्रत दिया बनाय।
न्हाय धोय जब पीवन ळागी, हो गई अमर अचाय॥
सूली सेज राणाने भेजी, दीज्यो मीरा सुवाय।
साँझ भई मीरा सोवण लागी, मानो फूल बिछाय॥
मीराके प्रभु सदा सहाई, राखे बिघन हटाय।
भजन-भावमें मस्त डोलती, गिरधर पर बलि जाय॥

❑ ❑

सिखावन

(५६३) राग झँझोटी—ताल कहरवा

भज ले रे मन गोपाल गुना॥
अधम तरे अधिकार भजनसूँ जोइ आये हरि सरना।
अबिसवास तो साखि बताऊँ, अजामील गणिका सदना॥ १॥
जो कृपाल तन मन धन दीन्हों, नैन नासिका मुख रसना।
जाको रचत मास दस लागै, ताहि न सुमिरो एक छिना॥ २॥
बालापन सब खेल गमायो, तरुण भयो जब रूप घना।
बृद्ध भयो जब आळस उपज्यो, माया मोह भयो मगना॥ ३॥

गज अरु गीधहु तरे भजनसूँ, कोउ तर्‌यो नहीं भजन बिना।
घना भगत पीपामुनि सिवरी मीराकीहू करो गणना॥ ४॥

(५६४) राग रागश्री—ताल तिताला

राम-नाम रस पीजै, मनुआँ राम नाम रस पीजै।
तज कुसंग सत्संग बैठ नित हरि चर्चा सुनि लीजै॥
काम क्रोध मद लोभ मोहकूँ बहा चित्तसे दीजै।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, ताहिके रंगमें भीजै॥

(५६५) राग शुद्ध सारंग—ताल कहरवा

चालो अगमके देस काल देखत डरै।
वहाँ भरा प्रेमका हौज हँस केळयाँ करै॥
ओढण लज्जा चीर धीरजकों घाघरो।
छिमता काँकण हाथ सुमतको मूँदरो॥
दिन दुलड़ी दरियाव साँचको दोवड़ो।
उबटन गुरुको ग्यान ध्यान को धोवणो॥
कान अखोटा ग्यान जुगतको झूटणो।
बेसर हरिको नाम चूड़ो चित ऊजळो॥
पूँची है बिसवास काजळ है धरमको।
दाँताँ इम्रत रेख दयाको बोलणो॥
जौहर सील सँतोष निरतको घूँघरो।
बिदली गज और हार तिलक हरि प्रेमको॥
सज सोला सिणगार पहरि सोने राखड़ी।
साँवलियाँसूँ प्रीति औरासूँ आखड़ी॥
पतिबरताकी सेज प्रभूजी पधारिया।
गावै मीराबाई दासि कर राखिया॥

(५६६) राग हमीर—ताल रूपक

नहिं ऐसो जनम बारंबार॥
का जानूँ कछु पुन्य प्रगटे मानुसा अवतार।
बढ़त छिन छिन घटत पल पल जात न लागे बार॥
बिरछके ज्यूँ पात टूटे लगे नहिं पुनि डार।
भौसागर अति जोर कहिये अनँत ऊँडी धार॥
रामनामका बाँध बेड़ा उतर परले पार।
ग्यान चोसर मँडा चोहटे तुरत पासा सार॥
साधु संत महंत ग्यानी करत चलत पुकार।
दासि मीरा लाल गिरधर जीवणा दिन च्यार॥

(५६७) राग छायानट—ताल तिताला

भज मन चरणकँवल अबिनासी॥
जेताइ दीसे धरण गगन बिच, तेताइ सब उठ जासी।
कहा भयो तीरथ ब्रत कीन्हें, कहा लिये करवत कासी॥
इण देहीका गरब न करणा, माटीमें मिल जासी।
यो संसार चहरकी बाजी, साँझ पड्याँ उठ जासी॥
कहा भयो है भगवा पहर्याँ घर तज, भये संन्यासी।
जोगी होय जुगत नहिं जाणी, उलट जनम फिर आसी॥
अरज करूँ अबला कर जोड़े, स्याम तुम्हारी दासी।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, काटो जमकी फाँसी॥

(५६८) राग बिलावल—ताल कहरवा

लेताँ लेताँ रामनाम रे, लोकड़ियाँ तो लाजाँ मरे छै॥ १॥
हरिमंदिर जाता पाँवड़िया रे दूखे, फिर आवे आखो गाम रे।
झगड़ो थाय त्याँ दौड़ी ने जाय रे, मूकी ने घरना काम रे॥ २॥
भाँड़ भवैया गणिकात्रित करताँ, बेसी रहे चारे जाम रे।
मीराना प्रभु गिरधर नागर, चरणकँवळ चित हाम रे॥ ३॥

(५६९) राग बिहागरा—ताल चर्चरी

रमइया बिन यो जिवड़ो दुख पावै। कहो कुण धीर बँधावै॥ १ ॥
यो संसार कुबधको भाँडो, साध-सँगत नहीं भावै।
राम-नामकी निंद्या ठाणै, करम-ही-करम कुभावै॥ २ ॥
राम-नाम बिन मुकति न पावै, फिर चौरासी जावै।
साध-संगतमें कबहूँ न जावै, मूरख जनम गुमावै॥ ३ ॥
मीरा प्रभु गिरधरके सरणै जीव परम पद पावै॥ ४ ॥

❑ ❑

प्रकीर्ण

(५७०) राग नीलाम्बरी—ताल कहरवा

सूरत दीनानाथसे लगी, तूँ तो समझ सुहागण सुरता नार॥
लगनी लहँगो पहर सुहागण, बीती जाय बहार।
धन जोबन हैं पावणा री, मिलै न दूजी बार॥ १ ॥
राम-नामको चुड़लो पहिरो, प्रेमको सुरमो सार।
नकबेसर हरि नामकी री, उतर चलोनी परले पार॥ २ ॥
ऐसे बरको क्या बरूँ, जो जनमै और मर जाय।
बर बरिये एक साँवरो री, (मेरे) चुड़लो अमर हो जाय॥ ३ ॥
मैं जान्यो हरि मैं ठग्यो री, हरि ठग ले गयो मोय।
लख चौरासी मौरचा री, छिनमें गेर्‌या छै बिगोय॥ ४ ॥
सुरत चली जहाँ मैं चली री, कृष्णनाम झणकार।
अबिनासीकी पोलपर जी, मीरा करै छै पुकार॥ ५ ॥

(५७१) राग बिहाग—ताल तिताला

करम गति टारे नाहिं टरे॥
सतबादी हरिचँद-से राजा, (सो तो) नीच घर नीर भरे।
पाँच पांडु अरु कुंती द्रोपदी, हाड हिमाळै गरे॥
जग्य कियो बळी लेण इंद्रासण, सो पाताळ धरे।
मीराके प्रभु गिरधर नागर बिखसे अमृत करे॥

(५७२) राग पीलू—ताल कहरवा

देखत राम हँसे सुदामाकूँ देखत राम हँसे॥
फाटी तो फुलड़ियाँ पाँव उभाणे चलतै चरण घसे।
बालपणेका मित सुदामाँ अब क्यूँ दूर बसे॥
कहा भावजने भेंट पठाई ताँदुळ तीन पसे।
कित गईं प्रभु मोरी टूटी टपरिया हीरा मोती लाल कसे॥
कित गईं प्रभु मोरी गउअन बछिया द्वारा बिच हसती फसे।
मीराके प्रभु हरि अबिनासी सरणे तोरे बसे॥

❑ ❑

नाम

(५७३) राग धनाश्री—ताल तिताला

मेरो मन रामहि राम रटै रे।
राम-नाम जप लीजे प्राणी, कोटिक पाप कटै रे।
जनम जनमके खत जु पुराने, नामहि लेत फटै रे॥
कनक कटोरे इम्रत भरियो, पीवत कौन नटै रे।
मीरा कहे प्रभु हरि अबिनासी, तन-मन ताहि पटै रे॥

(५७४) राग श्रीरंजनी—ताल तिताला

पायो जी म्हे तो राम रतन धन पायो।
बस्तु अमोलक दी म्हारे सतगुरु, किरपा कर अपनायो॥
जनम जनमकी पूँजी पाई, जगमें सभी खोवायो।
खरचै नहिं कोइ चोर न लेवै, दिन-दिन बढ़त सवायो॥
सतकी नाव खेवटिया सतगुरु, भवसागर तर आयो।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, हरख हरख जस गायो॥

❑ ❑

गुरु-महिमा

(५७५) राग धानी—ताल तिताला

मोहि लागी लगन गुरु-चरणनकी।
चरण बिना कछुवै नहिं भावै जगमाया सब सपननकी॥

भौसागर सब सूख गयो है फिकर नहीं मोहि तरननकी।
मीराके प्रभु गिरधर नागर आस वही गुरु-सरननकी॥

(५७६) राग मलार—ताल कहरवा

लागी मोहिं राम खुमारी हो॥
रमझम बरसै मेहड़ा भीजै तन सारी हो।
चहुँदिस दमकै दामणी गरजै घन भारी हो॥

सतगुर भेद बताया खोली भरम किवारी हो।
सब घट दीसै आतमा सबहीसूँ न्यारी हो॥

दीपक जोऊँ ग्यानका चढ़ अगम अटारी हो।
मीरा दासी रामकी इमरत बलिहारी हो॥

(५७७) राग धानी—ताल कहरवा

री मेरे पार निकस गया सतगुर मार्‌या तीर।
बिरह भाल लगी उर अंदर ब्याकुल भया सरीर॥

इत उत चित्त चलै नहिं कबहूँ डारी प्रेम-जँजीर।
कै जाणै मेरो प्रीतम प्यारो और न जाणै पीर॥

कहा करूँ मेरो बस नहिं सजनी नैन झरत दोउ नीर।
मीरा कहै प्रभु तुम मिलियाँ बिन प्राण धरत नहिं धीर॥

□ □

महाप्रभु चैतन्य

(५७८) राग मिश्र काफी—ताल तिताला

अब तौ हरि नाम लौ लागी।
सब जगको यह माखन चोरा, नाम धर्‌यो बैरागी॥ १॥
कित छोड़ी वह मोहन मुरली, कित छोड़ी सब गोपी।
मूड़ मुड़ाइ डोरी कटि बाँधी माथे मोहन टोपी॥ २॥
मात जसोमति माखन कारन, बाँधै जाके पाँव।
स्यामकिसोर भयो नव गौरा, चैतन्य जाको नाँव॥ ३॥
पीतांबरको भाव दिखावै, कटि कोपीन कसै।
गौर कृष्णकी दासी मीरा, रसना कृष्ण बसै॥ ४॥

सहजोबाई

गुरु-महिमा

(५७९) राग मलार—ताल तिताला

हमारे गुरु पूरन दातार।
अभय दान दीनन को दीन्हें, कीन्हें भव जल पार॥
जन्म-जन्मके बंधन काटे यमको बंध निवार।
रंकहुते सो राजा कीन्हें, हरि-धन दियो अपार॥
देवैं ज्ञान भक्ति पुनि देवैं, योग बतावनहार।
तन मन बचन सकल सुखदाई, हिरदे बुधि उँजियार॥
सब दुख गंजन पातक भंजन रंजन ध्यान बिचार।
साजन दुर्जन जो चलि आवै, एकहि दृष्टि निहार॥
आनंदरूप स्वरूपमई है, लिप्त नहीं संसार।
चरनदास गुरु सहजो केरे, नमो-नमो बारंबार॥

(५८०) राग कामोद—ताल चर्चरी

सखी री आज आनँद देव बधाई।
सतगुरुने अवतार लियो है, मिलि मिलि मंगल गाई॥
अद्‌भुत लीला कहा बखानौं, मोपै कही न जाई।
बहु बिधि बाजे बाजन लागे, सुनत हिया हुलसाई॥
धन भादौं धन तीज सुदी है, जा दिन प्रगटे आई।
धन-धन कुंजो भाग तिहारे, चरनदास सुत पाई॥
कलिजुगमें हरिभक्ति चलाई, जनकी करैं सहाई।
श्रीसुकदेव करी जब किरपा, गावै सहजो बाई॥

(५८१) राग सोरठ—ताल तिताला

हमारे गुरु बचननकी टेक।
आन धरमकूँ नाहीं जानूँ, जपूँ हरि हरि एक॥ १॥
गुरु बिना नहिं पार उतरै, करो नाना भेख।
रमौ तीरथ बर्त राखौ, होहु पंडित सेख॥ २॥

गुरु बिना नहीं ज्ञान दीपक, जाय ना अँधियार।
काम क्रोध मद, लोभ माहीं, उलझिया संसार॥ ३॥
चरनदास गुरु दया करकै, दियौ मंतर कान।
सहजो घट परगास हूबा, गयौ सब अज्ञान॥ ४॥

(५८२) राग काफी—ताल तिताला

नैनों लख लैनी साईं तैंडे हजूर।
आगे पीछे दहिने बायें सकल रहा भरपूर॥ १॥
जिनको ज्ञान गुरूको नाहीं सो जानत हैं दूर।
जोग जज्ञ तीरथ ब्रत साधैं, पावत नाहीं कूर॥ २॥
स्वर्ग मृत्यु पाताल जिमीमें, सोई हरिका नूर।
चरनदास गुरु, मोहिं बतायो, सहजो सबका मूर॥ ३॥

❑ ❑

वेदान्त

(५८३) राग आसावरी—ताल तिताला

बाबा काया नगर बसावौ।
ज्ञान दृष्टिसूँ घटमें देखौ, सुरति निरति लौ लावौ॥
पाँच गारि मन बसकर अपने, तीनों ताप नसावौ।
सत संतोष गहे दृढ़ सेती, दुर्जन मारि भजावौ॥
सील छिमा धीरजकूँ धारौ, अनहद बंब बजावौ।
पाप बानिया रहन न दीजै, धरम बजार लगावौ॥
सुबस बास जब होवै नगरी, बैरी रहै न कोई।
चरनदास गुरु अमल बतायौ, सहजो सँभलो सोई॥

(५८४) राग बसन्त—ताल तिताला

आतम पूजा अधिक जान। सकल सिरोमन याहि मान॥
बिस्तारो हित भवन माहिं। भरम दृष्टि जहँ आवै नाहिं॥
हिरदा कोमल ठौर लिया। कर बिचार जहँ धूप दिया॥
या सेवाका दया मूल। समता चंदन छिमा फूल॥

मीठे बचन सोइ बालभोग। निंदा झूठ तजो अजोग॥
घंटा अनहद सुरत लाव। घट घट देखै एक भाव॥
करौ सुखी सुख आप लेव। इस पूजा सों सुखी देव॥
चरनदास गुरु दई मोहिं। हंस हंस जहँ जाप होहिं॥
इंद्री मन बुध तहँ लगाव। कर सहजोबाई याको चाव॥

❑ ❑

नाम

(५८५) राग सारंग—ताल तिताला

हमरे औषध नाँव धनीका।
आध-ब्याध तन मनकी खौवै, सुद्ध करै वह नीका॥
अमर भये जिन जिन यह खाई, भव नगरी नहिं आये।
जो पछ करैं सँभल दृढ़ राखै, सतगुरु बैद बताये॥
सतसंगतको भवन बनावै, पड़दा लाज लगावै।
जगत बासना पवन चलत है, सो आवन नहिं पावै॥
शुभ करम लै टेक टहलुआ, दीपक ज्ञान जलावै।
नित्य अनित्य बिचार सार गहु, हो आसार बगावै॥
जीव रूपके रोग भगै यों ब्रह्मरूप ह्वै जावै।
सहजोबाई सुन हुलसावै, चरनदास बतलावै॥

(५८६) राग ईमन—ताल तिताला

ज्यों त्यों राम-नाम ही तारै।
जान अजान अग्नि जो छूवै, वह जोरै पै जारै॥ १॥
उलटा सुलटा बीज गिरैं ज्यों, धरती माहीं कैसे।
उपजि रहै निहचै करि जानौ, हरि सुमिरन है ऐसे॥ २॥
बेद पुराननमें मथि काढ़ा, राम नाम तत सारा।
तीन कांडमें अधिकी जानौ, पाप जलावन हारा॥ ३॥
हिरदा सुद्ध करै बुधि निरमल, ऊँची पदवी देवै।
चरनदास कहैं सहजोबाई, ब्याधा सब हरि लेवै॥ ४॥

(५८७) राग कान्हरा—ताल तिताला

सठ तजि नाँव-जगत सँग राचो।
जेहि कारन बहु स्वाँग कछे हैं, चौरासी तन धरि धरि नाचो ॥ १ ॥
गर्भ माहिं जे बचन किये थे, एकहु बार भयो नहिं साँचो।
स्वारथहीको उठि उठि धावै, राम भजन परमारथ काचो ॥ २ ॥
संतनकी टकसाल चढ़ो ना, गुरुकी हाट कबहुँ नहिं जाँचो।
पंच बिषैके मदमें मातो, अभिमानी ह्वै बहुतक नाचो ॥ ३ ॥
जमद्वारेकी लाज न मानी, नरक अगिनकी सहि सहि आँचो।
चरनदास कहै सहजो बाई, हरिकी सरन बिना नहिं बाचो ॥ ४ ॥

(५८८) राग भैरवी—ताल तिताला

भया हरि रस पी मतवारा।
आठ पहर झूमत ही बीतै, डार दिया सब भारा ॥ १ ॥
इडा पिंगला ऊपर पहुँचे, सुखमन पाट उघारा।
पीवन लगे सुधारस जबहीं, दुर्जन पड़ी बिडारा ॥ २ ॥
गंग-जमन बिच आसन मार्‍यो, चमक चमक चमकारा।
भँवर गुफामें दृढ़ ह्वै बैठे, देख्यो अधिक उजारा ॥ ३ ॥
चितइ स्थिर चंचल मन थाका, पाँचौंका बल हारा।
चरनदास किरपासूँ सहजो, भरम करम हुए छारा ॥ ४ ॥

(५८९) राग बसन्त—ताल तिताला

मिलि गावो रे साधो यह बसंत । जाकी अबिगत लीला अगम पंथ ॥
जहँ नाव पदारथ है इकंग । नहिं पैये दूजा और अंग ॥
जहँ दरसै साधो एक एक । नहिं पैये दूजा कोई भेष ॥
जहँ ग्यान ध्यानको लागो तार । जहँ आप बिराजै ओंकार ॥
देखो सब घट ब्यापक निराकार । कोई न पावै वह बिचार ॥
जहँ ब्रह्म अखंडित अति अनूप । जाको सुर-मुनि-योगी ध्यावै भूप ॥
जहँ छाय रहो है सर्ब माहिं । कोइ नहिं संतो खाली ठाहिं ॥
गुरु चरनदास पूरन औतार । जिन दान दियो जग ब्याध टार ॥
सहजोबाई नावै सीस । मेरे भ्रम मेटे बिस्वा बीस ॥

(५९०) राग ललित—ताल तिताला

जाग जाग जो सुमिरन करै। आप तरै औरन लै तरै॥ टेक॥
हरिकी भक्ति माहि चित्त देवै। पदपंकज बिनु और न सेवै।
आन धरमकूँ संग न लेवै। फलन कामना सब परिहरै॥ १॥
काल ज्वाल सब ही छुट जावै। आवागमनकी डोरि नसावै।
जोनी संकट फिर नहिं आवै। बार बार जनमै नहिं मरै॥ २॥
ऊँची पदवी जगमें पावै। राजा राना सीस नवावै।
तन छूटै जा मुक्ति समावै। जो पै ध्यान धनीका धरै॥ ३॥
ह्याँपै सुख जो जानै कूरा। गुर चरननमें लागै पूरा।
बेग सम्हारै जो जन सूरा। चरनदास सहजो हो अरै॥ ४॥

❑ ❑

लीला

(५९१) राग बिलावल—ताल तिताला

मुकुट लटक अटकी मनमाहीं।
नृत्यत नटवर मदन मनोहर, कुंडल झलक पलक बिथुराई॥ १॥
नाक बुलाक हलक मुक्ताहल, होठ मटक गति भौंह चलाई।
ठुमक ठुमक पग धरत धरनिपर, बाँह उठाय करत चतुराई॥ २॥
झुनक झुनक नूपुर झनकारत, ताता थेई थेई रीझ रिझाई।
चरनदास सहजो हिय अंतर, भवन करौ जित रहौ सदाई॥ ३॥

❑ ❑

महिमा

(५९२) राग परज—ताल कहरवा

तेरी गति किनहुँ न जानी हो।
ब्रह्मा सेस महेसुर थाके, चारो बानी हो॥
बाद करंते सब मत थाके, बुद्धि थकानी हो।
बिद्या पढ़ि पढ़ि पंडित थाके, ब्रह्मगियानी हो॥

सबके परे जुअन मम हारी, थाह न आनी हो।
छान बीनकर बहुतक थाको, भई खिसानी हो॥
सुर-नर-मुनी गनपती थाके बड़े बिनानी हो।
चरनदास थकी सहजो बाई, भई सिरानी हो॥

❑ ❑

प्रार्थना

(५९३) राग भैरो—ताल चर्चरी

हम बालक तुम माय हमारी। पल पल माहिं करौ रखवारी॥ १॥
निस दिन गोदीहीमें राखो। इत उत बचन चितावन भाखो॥ २॥
बिषै ओर जान नहिं देवो। दुर दुर जाउँ तो गहि गहि लेवो॥ ३॥
मैं अनजान कछू नहिं जानूँ। बुरी भलीको नहिं पहिचानूँ॥ ४॥
जैसी तैसी तुमहीं चीन्हेव। गुरु ह्वै ध्यान खिलौना दीन्हेव॥ ५॥
तुम्हरी रक्षाहीसे जीऊँ। नाम तुम्हारो इमृत पीऊँ॥ ६॥
दिष्टि तिहारी उपर मेरे। सदा रहूँ मैं सरनै तेरे॥ ७॥
मारौ झिड़कौ तौ नहिं जाऊँ। सरक-सरक तुमहीं पै आऊँ॥ ८॥
चरनदास है सहजो दासी। हो रक्षक पूरन अबिनासी॥ ९॥

(५९४) राग रामकली—ताल कहरवा

अब तुम अपनी ओर निहारो।
हमरे अवगुन पै नहिं जाओ, तुमहीं अपना बिरद सम्हारो॥
जुग जुग साख तुम्हारी ऐसी, बेद पूरानन गाई।
पतित उधारन नाम तुम्हारो, यह सुनके मन दृढ़ता आई॥
मैं अजान तुम सब कछु जानो, घट-घट अंतरजामी।
मैं तो चरन तुम्हारे लागी, हो किरपाल दयालहि स्वामी॥
हाथ जोरिकै अरज करत हौं, अपनाओ गहि बाहीं।
द्वार तिहारे आय परी हौं, पौरुष गुन मोमें कछु नाहीं॥

❑ ❑

चेतावनी

(५९५) राग सारंग—ताल कहरवा

सुमिर-सुमिर नर उतरो पार, भौसागरकी तीछन धार॥ टेक॥
धर्म जहाज माहिं चढ़ि लीजै, सँभल सँभल तामें पग दीजै।
स्रम करि मनको संगी कीजै, हरि मारगको लागो बार॥ १॥
बादवान पुनि ताहि चलावै, पाप भरै तौ हलन न पावै।
काम क्रोध लूटनको आवै, सावधान ह्वै करो सँभार॥ २॥
मान पहाड़ी तहाँ अड़त है, आसा तृस्ना भँवर पड़त है।
पाँच मच्छ जहँ चोट करत हैं, ज्ञान आँखि बल चलौ निहार॥ ३॥
ध्यान धनीका हिरदै धारे, गुरु किरपासूँ लगै किनारे।
जब तेरी बोहित उतरै पारे, जन्म-मरन दुख बिपता टार॥ ४॥
चौथे पदमें आनँद पावै, या जगमें तू बहुरि न आवै।
चरनदास गुरुदेव चितावें, सहजोबाई यही बिचार॥ ५॥

(५९६) राग होरी सिंदूरा—ताल धमार

साधो भौसागरके माहिं काल होरी खेलाई॥ टेक॥
भाँति-भाँतिके रंग लिये हैं, करत जीवनकी घात।
बूढ़ा बाला कछू न देखै, देखै ना दिन रात॥
निहचै मौत लिये सँग रानी, नाना रंग सम्हार।
बड़े-बड़े अभिमानी नामी, सो भी लीन्हें मार॥
सुरज चंद वा भयतें काँपैं, स्वर्ग माहि सब देव।
तनधारी सब ही थर्रावैं, ज्ञानी जानत भेव॥
आपनकूँ देही नहिं जानै, जानत आतम साँच।
चरनदास कह सहजोबाई ताहि न आवै आँच॥

(५९७) राग होरी, धनाश्री—ताल चर्चरी

साधो मन मायाके संग, सब जग रंग रह्यो॥ टेक॥
मूरख पचे खेलके अँधरे, नाना स्वाँग बनाय।
आसा धरि-धरि नाचन लागे, चोवा चाह लगाय॥ १॥

जोग करे सिधि आठौं चाहै, मान बड़ाई हेत।
राज बासना भोग लोकके, कासी-करवत लेत॥ २॥
पंच अगिन बहु तापन लागे, बहुत अर्धमुख झूल।
बहुतक दौड़ें अड़सठ तीरथ, ग्यान गली गये भूल॥ ३॥
चरनदास गुरु तत्त्व लखायो, दीन्हें खेल छुटाय।
सहजोबाई सीस नवावत बार-बार बलि जाय॥ ४॥

(५९८) राग काफी—ताल कहरवा

हरि हर जप लेनी, औसर बीतो जाय।
जो दिन गये सो फिर नहिं आवै, कर बिचार मन लाय॥
या जग बाजी साच न जानो, तामें मत भरमाय।
कोई किसीका है नहिं बौरे, नाहक लियौ लगाय॥
अंत समय कोइ काम न आवै, जब जम लेहि बोलाय।
चरनदास कहैं सहजोबाई सत-संगत सरनाय॥

(५९९) राग बिलावल—ताल दादरा

हरि बिनु तेरो ना हितू, कोऊ या जग माहीं।
अंत समय तू देखि ले, कोई गहै न बाहीं॥
जमसूँ कहा छुटा सकै कोई संग न होई।
नारी हूँ फटि रहि गई, स्वारथ कूँ रोई॥
पुत्र कलत्तर कौनके, भाई अरु बंधा।
सब ही ठोंक जलाइ हैं, समझै नहिं अंधा॥
महल दरब ह्याँ ही रहै, पचि-पचि करि जोड़ा।
करहा गज ठाढ़े रहैं, चाकर अरु घोड़ा॥
पर काजै बहु दुख सहै, हरि-सुमिरन खोया।
सहजोबाई जम घिरैं, सिर धुनि-धुनि रोया॥

(६००) राग बसंत—ताल तिताला

ऐसो बसंत नहिं बार-बार। तैं पाई मानुष-देह सार॥
यह औसर बिरथा न खोय। भक्ति बीज हिये धरती बोय॥

हियकी तीव्र भावना थिर करु पड़ै दूधमें जावन।
'केशी' सुरति न टूटन पावै दिब्य छटा दरसावन॥

(६३३) राग झँझौटी—ताल तिताला

बिषयरस पान-पीक-सम त्याग॥
बेद कहैं मुनि साधु सिखावैं बिषय समुद्री आग।
को न पान करि भो मतवाला यह ताड़ीको झाग॥
बीतराग-पद मिलन कठिन अति काल कर्मके लाग।
'केशी' एकमात्र तोहि चाहिय रामचरण-अनुराग॥

(६३४) राग कल्याण—ताल तिताला

धाय धरो हरि चरण सबेरे॥
को जाने कै बार फिरे हम चौरासी के फेरे।
जन्मत-मरत दुसह दुख सहियत करियत पाप घनेरे॥
भूलि आपनो भूप रूप भये काम कोह के चेरे।
'केशी' नेक लही नहिं थिरता काल कर्मके पेरे॥

(६३५) राग सोहनी—ताल झप

भावत रामहिं संयम इकरस॥
भक्त भावना दृढ़ होवै तब, जब अर्पिय रघुपतिपर सरबस।
शील निधान सुजान शिरोमणि परम स्वतंत्र दास-सेवा बस॥
जो नहिं प्रेमवारि मन धोवै, सो सोवै सुख सहित कहहु कस।
'केशी' पाँच तत्त्व तीनों गुन, जो नाशै सोई पावै जस॥

(६३६) राग सोरठ—ताल रूपक

भावुक, भावमय भगवान।
तात बिनु भव चोप टूटे नाहिं तव कल्यान॥
चारु चितमें चोप चिखुरत चपल चरु चुचुहान।
बिरह चिनगी चमकि चटकै करहु अनुसंधान॥
आत्महित साधन सकल इमि कहत बेद-पुरान।
नाम नेह तुरीय तावै धरति 'केशी' ध्यान॥

मंजुकेशी

योगज्ञान

(६०२) राग सोरठ—ताल तिताला

आपन रूप परखिये आपै॥
निज नयनन ही निज मुख दीखत अपनो सुख-दुख आपुई ब्यापै।
अपनी गति बनै आपु बनाये जाड़ जात निज तन तप तापै॥
निज करसों निज आसुँ पोंछिये का सुझाय सुइ करसों छापै।
तटपै बसि प्रशांत जल निरखहु का क्षति-लाभ सिंधु तल मापै॥
गहत न लहत बृथा दिन खोवत कथत-मथत ही शास्त्र कलापै।
'केशी' आत्म-प्रतीति फुरति है रामनाम अब्याहत जापै॥

(६०३) राग ललित—ताल तिताला

जो चौदह रसको पहिचानै।
सो चेतिहि बिधिबस कौनीहू योनि जनमि बौरानै॥
बिश्वास हरि परखत-भरखत को समीप नियरानै?
'केशी' दया धरम ना छोड़िये जो बिरहिनि दुख जानै॥

(६०४) राग सोरठ—ताल रूपक

निर्मल मानसिक आवास॥
मलिन भाव बुहारि फेंकहु स्वच्छ करहु देवास।
खींचि नभतैं मदहि गारो मदन उलटो रास॥
छरस नवरस पंचरस महँ बहै एक बतास।
कहति 'केशी' मठ सँवारहु करहि जिहि हरि बास॥

(६०५) राग सारंग—ताल तिताला

चंचल मनको बस करिय कसस॥
योगी-मुनि ऐसै बरबरात परमार्थ पथिक जिहि लखि डरात।
अभ्यास-बिरत जुग बिधि लखात, गीतामों श्रीमुख बचनहु अस॥
हनुमत-मत मनहिं कहिय हरि यस, जिहि भावै वाको रामैरस।
'केशी' बढ़ै उर प्रेम जसस, थिर हो मन प्यारे तसस-तसस॥

सतसंगतको सींच नीर। सतगुरजीसों करौ सीर॥
नीकी बार बिचार देव। परन राख याकूँ जू सेव॥
रखवारी कर हेत खेत। जब तेरी हौवै जैत जैत॥
खोट-कपट-पंछी उड़ाव। मोह-प्यास सब ही जलाय॥
समझ बाड़ी नऊ रंग। प्रेम फूल फूलै रंग रंग॥
पुहुप गूँथ माला बनाव। आदि पुरुषकूँ जा चढ़ाव॥
तौ सहजोबाई चरनदास। तेरे मनकी पूरै सकल आस॥

(६०१) राग सोरठ—ताल रूपक

जगमें कहा कियो तुम आय।
स्वान जैसो पेट भरिकै, सोयो जन्म गँवाय॥
पहर पछिले नाहिं जागो, कियो ना सुभ कर्म।
आन मारग जाय लागो, लियो ना गुरु धर्म॥
जप न कीयो तप न साधो, दियो ना तैं दान।
बहुत उरझे मोह मदमें, आपु काया मान॥
देह घर है मौतका रे, आन काढ़ै तोहि।
एक छिन नहिं रहन पावै, कहा कैसो होय॥
रैन दिन आराम ना, काटै जो तेरी आव।
चरनदास कहैं सुन सहजिया, करौ भजन उपाव॥

❑ ❑

करि प्रवेश सुद्वार चारिहु गई जहँ प्रिय सूर।
लव निरखि पाँखी-सरिस सब भई चकनाचूर॥

(६११) राग सोरठ—ताल रूपक

शांति एक आधार, सन्मुख॥
राम सहज स्वरूप झलकत भावयुत सृंगार।
कहत याको सिद्ध योगी तिलकी ओट पहार॥
छाड़ि यह दुर्लभ नहीं कछु करत संत बिचार।
सुखसिंधु सुखमाकंद 'केशी' परम पुरुष उदार॥

(६१२) राग सारंग—ताल रूपक

खेलत रामपूतरि माहिं।
छाड़ि परमारथ रसिक कोउ भेद जानत नाहिं॥
यही जग है यही सग है शत्रु-मित्र कहाहिं।
ज्ञान बिनु सब लोग 'केशी' चारि आठ भ्रमाहिं॥

(६१३) राग सिंदूरा—ताल तिताला

बारे जोगिया, कवन बिपिन महँ डोलै ?
नेती-धोती साजि सलोने मूल कमलदल खोलै।
चर्म दृष्टिकी सृष्टि निधन करि कस न बदल दे चोलै॥
माहुर अँचै चाटि मधु पिपली काढ़त जीके फफोलै।
'केशी' कस डोलत लटकाये कोह मोहके झोलै॥

(६१४) राग श्यामकल्याण—ताल तिताला

आश्रम सुखद सुसंयम पाये॥
वटु विश्राम शब्द-बट छाया शुक्र बीज तिहि गाये।
गृही सुखी सुरसाल-छाँहतर काल-सुकाल सुभाये॥
पाकर तरुतर बैखानस वसु पीपर यति मन भाये।
'केशी' चारि बृक्ष सिखवत हैं आश्रम हेतु सुहाये॥

(६०६) राग बिहाग—ताल तिताला

राम-रहसके ते अधिकारी।
जिनको मन मरि गयउ और मिटि गई कल्पना सारी॥
चौदह भुवन एक रस दीखै एक पुरुष इक नारी।
'केशी' बीजमंत्र सोइ जानै ध्यावै अवधबिहारी॥

(६०७) राग हमीर—ताल तिताला

अनुभवकी बात कोउ कोउ जानै॥
कोउ नयनहीन, कोउ मन मलीन, कोउ-कोउ मेधामें रति मानै।
जंजाल वर्णफल पाँचकेर द्विजको अस जो चीरै तानै॥ १॥
सतरहो साधि चतुराग्नि तापि पंचम कृशानु महँ प्रण ठानै।
लागै जब महाप्रलयकी लपट 'केशी' तब हर बूटी छानै॥ २॥

(६०८) राग भैरवी—ताल तिताला

संयम साँचो वाको कहिये॥
जामें राम-मिलनकी मुक्ता गजराजन प्रति लहिये।
मोहनिशा महँ नींद उचाटै चरण शिवा शिव गहिये॥
भूर्भुवः स्वःके झोंकनतैं बार-बार बचि रहिये।
नवल नेह नित बाढ़ै 'केशी' कहहु और का चहिये॥

(६०९) राग काफी—ताल तिताला

चेतहु चेतन बीर सबेरे।
इष्ट-स्वरूप बिठारहु मनमें करकमलन धनुतीर॥
एक छटा करुणाबारिधिकी अनुछन धारहु धीर।
भक्त-बिपति-भंजन रघुनायक मंत्र बिशद हर-पीर॥
'केशी' प्रीतम पाँव पखारिय ढारि सुनयनन-नीर।

(६१०) राग सोरठ—ताल तेवरा

दर्शक दीप-दर्शन दूर॥
शून्य विपिन बिचित्र मंदिर ज्योति रह भरपूर।
झुंड-झुंड चलीं नवेली मग उड़ावति धूर॥

(६१९) राग चन्द्रकान्त—ताल तिताला

चार जुगनू झलाझल झमकै॥
आशुतोषनै दियो जुगुनुवा चंद्रकिरन सम दमकै।
या जुगुनूपर बिके बिधाता दिव्य गगनमहँ चमकै॥
साधु सुजान सराहत छबिको नीलकलेवर छमकै।
'केशी' कौतुक कामधनीको भक्तनके उर रमकै॥

(६२०) राग बिहाग—ताल तिताला

बामन बलिको छलिगे मीत।
कहत सबै समुझत कोउ-कोऊ, कोऊ करै परतीत॥
मोहि अचंभा लागत भैया, गावत भगवत-गीत।
'केशी' रामधर्मकी महिमा जानैका जन क्रीत॥

(६२१) राग सोरठ—ताल तिताला

धरतीमें पानी बास करै।
छ्मा करो तो प्रेम प्रकट हो मरनीसे करनी सुफल फरै॥
कोह-खोहमें पामर पचते अरनी बिनु आपै आप जरै।
'केशी' नीति सिखाइये वाको तरनीमें जो कोउ पाँव धरै॥

(६२२) राग लहरा—ताल तिताला

चौरासी मठके मठधारी।
भोग त्यागि किन अलख जगावहु आपन रूप सम्हारी॥
चढ़ी गोमती चलि आई ढिग बलिहारी-बलिहारी।
'केशी' मैयाकी धारामें बही हमारी सारी॥

(६२३) राग मालश्री—ताल तिताला

मधुमाखी जरै नहिं दीपकपै।
वह तो बटोरति सुमननको रस सेवति वाको तन-मन दै॥
भोग-समय नर छीनत छत्ता खीझति छीजति सरबस ख्वै।
'केशी' केवल शलभ सयानो उमँगि जात तहँ आहुत ह्वै॥

(६१५) राग भैरवी—ताल तिताला

कामदगिरि ढिग डेरा कीजै॥
अर्द्धरात्रि महँ बैठि शिलापर सुखद शांतिरस पीजै।
वाद्य अनेक भाँति श्रवनन करि आप्त अनाहत लीजै॥
सुरदुर्लभ यह रहस सनातन लहब पुरारि पसीजै।
'केशी' की यह रुचिर पहुनई प्रिय स्वीकार करीजै॥

(६१६) राग चन्द्रकान्त—ताल तिताला

गजरिपु ब्रत सराहनयोग।
है सदा एकांतवासी तिहि न योग-वियोग॥
जनक जननी जो सिखायउ सोइ परम उद्योग।
भक्ष मिलु निज बाहुबलसे तिहिं लगावत भोग॥
सकत आँख मिलाय नहिं थकि जकि बहादुर लोग।
अभय डोलत 'केशि' मृगपति उर न धारत सोग॥

(६१७) राग गौरी—ताल तिताला

भुवन-बिच एकै दीप जरै।
कितने सलभ गिरे दीपकपर कहि-कहि हरे-हरे॥
वेदशिरा मुनि शिखा जोहते जो इकतार बरै।
'केशी' अलख ज्योतिपर हुत हो सो भव अगम तरै॥

(६१८) राग चैता—ताल कहरवा

देखेउ जो नीचे, हो रामा, कि ऊँचे चढ़िके री॥
तारा एक सबुज रँग चमकै मानो अतिहि न नीचे।
यान हमार गगन महँ बिचरत पवन पखेरू खींचे॥
घर-घर एकै लेखा, लखियत गुनियत कं खं बीचे।
'केशी' दाग न मिटिहै कबहूँ बिना कमलदल फींचे॥

एकरस बरसत नेक न जानत, कौन रंक को राउ।
'केशी' काम कलाधर चीन्हत, चपल चंद्रिका चाउ॥

(६२९) राग परज—ताल तिताला

जो मानै मेरी हित सिखवन॥
तो सत्य कहूँ निज मनकी बात, सहिये हिम-तप-वर्षा-रु-वात।
कसिये मनको सब भाँति तात, जासों छूटै यह आवागमन॥
पहिले पक्षी पृथ्वी पगुरत, फिर पंख जमे नभमें बिचरत।
अवसर आये जलमें पैरत, पै भूलत नहिं निज मीत पवन॥
करुनानिधानकी बानि हेरि, पुनि महामंत्र गज ध्वनिसों टेरि।
'केशी' सिय-स्वामिनि केरि चेरि, समुझावति ध्यायिय सीतारवन॥

(६३०) राग पूरबी—ताल तिताला

भजन करिय निष्काम, हमारे प्यारे।
नयन आँजि मन माँजि चेतिये सगुन ब्रह्म श्रीराम।
अश्व ह्रस्व-दीर्घ मत होवै ऐसो कसिये लगाम॥
क्षुब्ध बासना दुग्धधार सम मन्मथको बिश्राम।
'केशी' रामहिं द्वैत न भावै सब बिध पूरण काम॥

(६३१) राग सोहनी—ताल तिताला

जागहु पंथी भयउ बिहाना॥
सोवत बीती सारी रैनिया अब उठि करहु पयाना।
मेरु शृंगपर बैठि मुदित मन करिय रामको ध्याना॥
चखनि-झखनिको तिरबेनी महँ तारिय बोरिय प्राना।
'केशी' राम-नामकी धूनी सबहिं चिताय जगाना॥

(६३२) राग भैरवी—ताल तिताला

मानहु प्यारे, मोर सिखावन।
बूँदेबूँद तलाब भरत है का भादों का सावन॥
तैसहिं नाद-बिंदुको धारण अन्त:सुख सरसावन।
ध्वनि गूँजै जब जुगल रंध्रसे परसे त्रिकुटी पावन॥

(६२४) राग झँझौटी—ताल झप

सदय हृदयकी सरस कहानी।
योगी कहो सदा सुख भोगी ध्रुव समान सो ध्यानी॥
पार्वतीपति कृपापात्र सो अरु बिदेह-सम ज्ञानी।
'केशी' रघुबरको सोइ भावै निश्छल भक्त अमानी॥

(६२५) राग पीलू—ताल कहरवा

भाव-भोगी हमारे नैना॥
आपसरी, ताप भरी, नेह झरी, छेमकरी पूतरि सरोतरि सजग नैना।
भूपरक, भ्रूभरक, भवझरक, द्यूतरक, 'केशी' पुकारै दिन-रैना॥

❑ ❑

उपदेश

(६२६) राग रागश्री—ताल झप

रामधनीसे हेत नहीं जो।
उदय-अस्तको राज्य व्यर्थ है, जो न प्रेम रघुबंस मनीसे।
फरद खाय बहुत दिन जीवै, पार लहै ना निज करनीसे॥
तीनों लोक शोक सम तिनको, जो ब्याकुल हैं भवरजनीसे।
'केशी' जाते हाथ पसारे, लोन उठावत हैं पपनीसे॥

(६२७) राग मलार—ताल रूपक

छिन-सुख लागि मानुष मरै॥
बिषय-रसमें मिल्यो माहुर तिहि उतारत गरै।
नाभिचक्र उलटि परै अरु तखन फुस-फुस जरै॥
हरिकृपा बिनु कहहु कैसे कवन यह दुख हरै।
कैसे 'केशी' अमल सुख-पथ जीव जंगम चरै॥

(६२८) राग झँझौटी—ताल तिताला

निर्मल मनको एक स्वभाव॥
परिहर सीयराम-पद-पंकज, चिंतत और न काउ।
जस जस सखि बुंदियात बदरवा, तस-तस कोमल भाउ॥

(६३७) राग सोरठ—ताल रूपक

कलि-प्रपंच-प्रसार, देखहु॥
जहाँ सूइहुकी नहीं गति तहाँ मुसल प्रचार।
रसवती युवती बसन गहि चहत करन उधार॥
नटी जलमहँ पैठि बोले करहु लोक-सुधार।
कामधेनु बिसुकिहि 'केशी' बाँझ गाय दुधार॥

(६३८) राग सोरठ—ताल रूपक

रे मन, देश आपन कौन?
जहँ बसै प्रियतम प्रकृतिपति सुमुख सीता रौन॥
बिना समझे बिना बूझे करै इत-उत गौन।
सुख मिलत नहिं तोहिं सपने सदा खोजत जौन॥
अजहुँ सूझत नाहिं तोहिं कछु करत आयुहि हौन।
कहति 'केशी' तहाँ चलु झट जहाँ अबिचल भौन॥

(६३९) राग तिलंग—ताल झप

मारे रहो, मन॥
राम-भजन बिनु सुगति नहीं है, गाँठ आठ दृढ़ पारे रहो।
अबिस्वास करि दूरि सर्वथा, एक भरोसा धारे रहो॥
सदा खिन्नप्रिय सिय-रघुनन्दन, जानि दर्प सब डारे रहो।
'केशी' राम-नामकी ध्वनि प्रिय एक तार गुंजारे रहो॥

(६४०) राग कामोद—ताल तिताला

चतुर कहात सुंदर॥
करिबो भजन असल स्वारथ हैं, जिहि बिधि सधै सधात।
परहित निरत उचित रहिबो है पुष्ट होत है गात॥
जनकराज रहनी गहिबे ते, किल कल्यान जनात।
'केशी' नीति-निपुनता अपनी, या छिन परखी जात॥

(६४१) राग रामकली—ताल रूपक

जन हित राम धरत शरीर॥
भक्तवर प्रह्लादहित नरहरि भये रघुबीर।
द्रौपदी पत राखिबेको बनि गये प्रभु चीर॥
सकल भ्रम तजि भजिय रघुबर शांत-दांत-गभीर।
भक्तके हित धरे 'केशी' करकमल धनु-तीर॥

(६४२) राग जैजैवंती—ताल तिताला

कब हरि सुमिरनमें रस पैये॥
चिंतनकी चौघड़िया जानै, विज्ञान बिरति-बल सब त्यागै।
अरु बिमल भाव मति-गति पागै, 'केशी' हरि पै बलि-बलि जैये॥

(६४३) राग झँझौटी—ताल तिताला

रामलगन माते जे रहते॥
तिनकी चरन-धूरि ब्रह्मादिक, सिर धारन को चहते।
याही ते मानव-शरीरकी, महिमा बुधजन कहते॥
सो बपु पाय भजे राम नहिं ते सठ डहडह डहते।
'केशी' तोहिं उचित मारग सोइ जिहि मुनिनायक गहते॥

(६४४) राग पीलू—ताल तिताला

हम न जाबैं कनक-गिरि-खोहा॥
जे जे गये नहीं लौटे पुनि उन्हें बहुत हम जोहा।
तहाँ बिकट धन पूत बसत हैं को ले उनसे लोहा॥
आदि अंत कोउ बूझत नाहीं कौन माल यह पोहा।
'केशी' खोह नबेली अजहूँ कितने जन-मन मोहा॥

(६४५) राग भैरों—ताल तिताला

सुख सजनी मिलै नहिं अग जगमें॥
धर्मराज नल आदि नृपतिगण, झूलि रहे सखि, या मगमें।
केते मुनि-ऋषि खोजत हारे काँटे चुभा लिये पग-पगमें॥
बहुबिधि सबिधि कर्मधर्महुँ करि, कीन्हें श्रम जप-तप जगमें।
'केशी' बिनु हरि-भक्ति न थिर भये, आये-गये नर-नग-खगमें॥

(६४६) राग पूरबी—ताल तिताला

गोसाईं मत, सुजन सगा सोइ आली॥
प्रेम-अटापै राम छटा लखि जो जूझै दै ताली।
नश्वर देह-गेह मँगनीको ठाढ़ि भुलावनवाली॥
मोह-रूपिणी धर्म-धूतिनी काल-कूटनी काली।
'केशी' भलो सजन घर रहना सहना मीठी गाली॥

❑ ❑

लीला

(६४७) राग चैता—ताल कहरवा

धावत राम बकैयाँ, हो रामा, धूरि भरे तन।
कौर लिये कर पाछे डोलति श्री कौसल्या मैया॥
लै कनियाँ झारत आँचरसों धूसर धूर-धुरैया।
'केशी' योगी ठाढ़ असीसत कुँवर जियाव गुसैंया॥

(६४८) राग बहार—ताल तिताला

बन बिहरैं हमारे धनुषवारे॥
श्याम-गौर मुनिवेष सँवारे, कसिकै तूण कमर डारे।
संग सीय सोभाकी मूरति, बनबासिन मन मोहिया रे॥
सखि चलु जन्म सफल करु या छिन, बड़े भाग बन पगु धारे।
'केशी' महूँ किरातिन बनिहौं, कहति शची गगनारे॥

(६४९) राग पूरबी—ताल कहरवा

'राम गरीब-निवाज' गुसाईं-बानी॥
हियको हेत सदा जो हेरत, क्षमाशील सिरताज।
कहाँ निषाद-गीध अरु शबरी, कहँ रघुकुल महराज॥
प्रिय सौमित्रि-मान भंजन किये, बिरुदावलिके काज।
'केशी' कीटभृंगकी संगति, लोक काजके ब्याज॥

(६५०) राग हिंडोल—ताल तिताला

आँगनमें खेलत रघुराई।
धूरि बटोरि लिंग शिव थापत अक्षत छींटत हरषाई॥
लै गड़ुआ सौमित्रि खड़े हैं सचिव-सुवन हर-हर गाई।
बैठे भूप बसिष्ठ निहारत 'केशी' लाहु नयन पाई॥

(६५१) राग चैता—ताल कहरवा

बाजी बँसुरिया हो रामा कि दियरा बारत री।
बाती बरी री तरजनिया काँपति चार अँगुरिया॥
कृष्ण कहैं अब राम भजहु सब रोम-रोम प्रति तुरिया।
'केशी' तम फाटे मग झलकै कहिगे माधवपुरिया॥

❑ ❑

बनीठनी

(रसिकबिहारी)

लीला

(६५२) राग कल्याण—ताल तिताला

रतनारी हो थारी आँखड़ियाँ।
प्रेम छकी रसबस अलसाड़ी, जाणे कमलकी पाँखड़ियाँ॥
सुंदर रूप लुभाई गति मति, हो गईं ज्यूँ मधु माँखड़ियाँ।
रसिक बिहारी वारी प्यारी, कौन बसी निस काँखड़ियाँ॥

(६५३) राग आसावरी—ताल कहरवा

हो झालौ दे छे रसिया नागर पनाँ।
साराँ देखे लाज मराँ छाँ आवाँ किण जतनाँ॥
छैल अनोखो कह्यो न मानै लोभी रूप सनाँ।
रसिक बिहारी नणद बुरी छै हो लाग्यो म्हारो मनाँ॥

(६५४) राग खम्माच—ताल कहरवा

पावस रितु बृन्दावनकी दुति दिन-दिन दूनी दरसै है।
छबि सरसै है लूमझूम यो सावन घन घन बरसै है॥ १॥
हरिया तरवर सरवर भरिया जमुना नीर कलोलै है।
मन मोलै है, बागोंमें मोर सुहावणो बोलै है॥ २॥
आभा माहीं बिजली चमकै जलधर गहरो गाजै है।
रितु राजै है, स्यामकी सुंदर मुरली बाजै है॥ ३॥
(रसिक) बिहारीजी रो भीज्यो पीतांबर प्यारीजी री चूनर सारी है।
सुखकारी है, कुंजाँ कुंजाँ झूल रह्या पिय प्यारी है॥ ४॥

(६५५) राग छाया—ताल चर्चरी

उड़ि गुलाल घूँघर भई तनि रह्यो लाल बितान।
चौरी चारु निकुंजनमें ब्याह फाग सुखदान॥
फूलनके सिर सेहरा, फाग रंग रँगे बेस।
भाँवरहीमें दौड़ते, लै गति सुलभ सुदेस॥
भीण्यो केसर रंगसूँ लगे अरुन पट पीत।
डालै चाँचा चौकमें गहि बहियाँ दोउ मीत॥
रच्यौ रँगीली रैनमें, होरीके बिच ब्याह।
बनी बिहारन रसमयी रसिक बिहारी नाह॥

❑ ❑

सौदा

(६५६) राग केदारा—ताल तिताला

मैं अपनौ मनभावन लीनों॥
इन लोगनको कहा कीनों मन दै मोल लियो री सजनी।
रत्न अमोलक नंददुलारो नवल लाल रंग भीनों॥
कहा भयो सबके मुख मोरे मैं पायो पीव प्रवीनों।
रसिक बिहारी प्यारो प्रीतम सिर बिधना लिख दीनों॥

❑ ❑

प्रतापबाला

रूप

(६५७) राग पीलू—ताल कहरवा

वारी थारा मुखड़ा री श्याम सुजान॥
मंद मंद मुख हास बिराजै, कोटिक काम लजान।
अनियारी अँखियाँ रस भीनी, बाँकी भौंह कमान॥
दाड़िम दसन अधर अरुणारे, बचन सुधा सुखखान।
जामसुता प्रभुसों कर जोरे मेरे जीवन-प्रान॥

(६५८) राग कल्याण—ताल रूपक

मो मन परी है यह बान॥
चतुरभुजको चरण परिहरि, ना चहूँ कछु आन।
कमल नैन बिसाल सुंदर, मंद मुख मुसकान॥
सुभग मुकुट सुहावनों सिर, लसै कुंडल कान।
प्रगट भाल बिसाल राजत, भौंह मनहुँ कमान॥
अंग अंग अनंगकी छबि पीत पट पहिरान।
कृष्णरूप अनूपको मैं, धरूँ निसिदिन ध्यान॥
सदा सुमिरूँ रूप पल पल, कला कोटि निदान।
जामसुता परतापके भुज, चार जीवन-प्रान॥

❑ ❑

लीला

(६५९) राग मल्हार—ताल तिताला

चतुरभुज झूलत श्याम हिंडोरें।
कंचन खंभ लगे मणिमानिक, रेसमकी रँग डोरें॥
उमड़ि घुमड़ि घन बरसत चहुँ दिसि, नदियाँ लेत हिलोरें।
हरि हरि भूमि लता लपटाई बोलत कोकिल मोरें॥
बाजत बीन पखावज बंसी, गान होत चहुँ ओरें।
जामसुता छबि निरखि अनोखी, बारूँ काम किरोरें॥

❑ ❑

सिखावन

(६६०) राग बिलावल—ताल तिताला

भजु मन नंद नंदन गिरधारी॥
सुख-सागर करुणाको आगर, भक्तबछल बनवारी।
मीरा करमा कुबरी, सबरी, तारी गौतम नारी॥
बेद पुराननमें जस गायो, ध्याये होवत प्यारी।
जामसुताको श्याम चतुरभुज, ले जा खबर हमारी॥

❑ ❑

प्रेम

(६६१) राग पीलू—ताल कहरवा

लगन म्हारी लागी चतुरभुज राम॥
श्याम सनेही जीवन येही, औरनसे क्या काम।
नैन निहारूँ पल न बिसारूँ, सुमिरूँ निस दिन श्याम॥
हरि सुमिरन ते सब दुख जावे, मन पावै बिसराम।
तन मन धन न्योछावर कीजै, कहत दुलारी जाम॥

(६६२) राग बागेश्री—ताल कहरवा

प्रीतम हमारो प्यारो श्याम गिरधारी है॥
मोहन अनाथ-नाथ, संतनके डोले साथ,
बेद गुण गावे गाथ, गोकुल बिहारी है॥
कमल बिसाल नैन, निपट रसीले बैन,
दीननको सुख दैन, चार भुजा धारी है॥
केशव कृपा निधान, वाही सो हमारो ध्यान,
तन मन वारूँ प्रान जीवन मुरारी है॥
सुमिरूँ मैं साँझ-भोर, बार-बार हाथ जोर,
कहत प्रताप कौर जामकी दुलारी है॥

❑ ❑

युगलप्रिया

गुरु-महिमा

(६६३) राग ऐमन कल्याण—ताल तिताला

श्रीगुरुदेव भरोसो साँचौ।
अष्ट जाम गुरु-ध्यान हिये धरु, मारो काम क्रोध रिपु पाँचौ॥
तन मन धन सर्बस लै अरपौ श्रीगुरु-कृपा भक्ति रँग राँचौ।
जुगल प्रिया श्रीगुरु गोबिंदको, निमिष न भूल लखे सब काँचौ॥

❑ ❑

साधु-महिमा

(६६४) राग देसी—ताल तिताला

साधुनकी जूँठन नित लहिये, सुमिरत नाम हियेमें रहिये।
प्रेम करो अब हरिजन ही सों, औरनको संग भूलि न चहिये॥
इनके दरस परस सुख पैयत, भगवत रहस सार त्यों गहिये।
जुगलप्रिया चरनोदक लै मुख, जनम जनमके कलमष दहिये॥

❑ ❑

नाम

(६६५) राग रामकली—ताल तिताला

माई मोकों जुगलनाम निधि भाई।
सुख-संपदा जगतकी झूठी, आई संग न जाई॥
लोभी को धन काम न आवै अंतकाल दुखदाई।
जो जोरै धन अधम करम तें, सर्बस चलै नसाई॥
कुलके धरम कहा लै कीजै, भक्ति न मनमें आई।
जुगलप्रिया सब तजौ भजौ हरि, चरन-कमल मन लाई॥

❑ ❑

रूप

(६६६) राग बहार—ताल चर्चरी

सुभग सिंहासन रघुराज राम।
सिर पै सुख पाग लसत हरित मनि सुझलमलत,
मुक्ता जुत कुंडल कपोलनि ललाम॥
रही है प्रभा फैलि गैलि गैलि अंबर महल,
प्रेम भरी साजैं ताल गति बाद्य बाम॥
चकित होय निरखत जब वारति हों सरबस तब,
भयो कंप स्वेद सखी बाढ़्यो तन काम॥
जुगलप्रिया द्रगनि लसी, मूरत मन माहिं बसी,
मूँदरी पै देख्यो जब लिखो राम नाम॥

(६६७) राग नट मल्हार—ताल तिताला

नैन सलोने खंजन मीन।
चंचल तारे अति अनियारे, मतवारे, रसलीन॥
सेत श्याम रतनारे बाँके, कजरारे रँग भीन।
रेसम डोरे ललित लजीले, ढ़ीले प्रेम अधीन॥
अलसौहैं तिरसौहैं, मोहैं नागरि नारि नवीन।
जुगलप्रिया चितवनिमें घायल, होवै छिन-छिन छीन॥

(६६८) राग अडाना—ताल तिताला

मिलन अनूठी प्यारे तिहारी॥
कहनि अनूठी, करनि अनूठी, रहनि अनूठी पै बलिहारी।
चलनि अनूठी मुरनि अनूठी, झुकनि अनूठी लागत प्यारी॥
जौ समुझौ सो सबहिं अनूठी, चितवनि हँसनि मधुर बसकारी।
जुगलप्रिया पिय परम अनूठे तुम सम हौ तुम कुंजबिहारी॥

❑ ❑

लीला

(६६९) राग भूपाली—ताल तिताला

बाँकी तेरी चाल सुचितवनि बाँकी।
जबहीं आवत जिहि मारग हो, झुमक झुमक झुकि झाँकी॥
छिपछिप जात न आवत सन्मुख, लखि लीनी छबि छाकी।
जुगलप्रिया तेरे छल-बल तें हौं सब ही बिधि थाकी॥

(६७०) राग हिंडोल—ताल दीपचंदी

बीर अबीर न डारौ।
अँखियाँ रूप रंग रस छाकीं, इनकी ओर निहारौ॥
अंतर होत जो अवलोकनकों, हितकी बात बिचारौ।
जुगलप्रिया मन जीवन जीको, जा पट ओट उचारौ॥

(६७१) राग गोंड मल्हार—ताल तिताला

माई उमड़ि घुमड़ि घन आये।
निसि अँधियारी झुकी सावनकी न्यारी,
चली री जाति दोउ चरन दबाये॥
चपला चमकाई चख रहे चकराई,
बूँदन झर लाई पिउ भीजत पाये।
जुगलपियारी प्रीति रीति कछु न्यारी,
रोकि रहीं सब नारी पिया कंठ लगाये॥

(६७२) राग सावनी कल्याण—ताल तिताला

ब्रजमंडल अमरत बरसै री।
जसुदा नंद गोप गोपिनको, सुख सुहाग उमगै सरसै री॥
बाढ़ी लहर अंग-अंगनमें, जमुना तीर नीर उछरै री।
बरसत कुसुम देव अंबर तें सुरतिय दरसन हित तरसै री॥
कदली बंदनवार बँधावें, तोरन धुज साँथिया दरसै री।
हरद दूब दधि रोचन साजें, मंगल कलस देखि हरसै री॥

नाचैं गावैं रंग बढ़ावैं जो जाके मनमें भावै री।
सुभ सहनाई बजत रात दिन, चहुँ दिसि आनँदघन छावै री॥
ढाढ़ी ढाढ़िन नाचि रिझावै, जो चाहैगो सो पावै री।
पलना ललना झूल रहे हैं, जसुदा मंगल गुन गावै री॥
करै निछावर तन मन सरबस, जो नँदनंदनको जोवै री।
जुगलप्रिया यह नंद महोत्सव, दिन प्रति वा ब्रजमें होवै री॥

❑ ❑

श्रीराधा-रूप

(६७३) राग तिलंग—ताल रूपक

राधा-चरनकी हूँ सरन।
छत्र चक्र सुपद्म राजत, सुफल मनसा करन॥
ऊर्ध्वरेखा जव धुजा दुति, सकल सोभा धरन।
बामपद गद शक्ति, कुंडल, मीन सुबरन बरन॥
अष्टकोण सुबेदिका, रथ प्रेम आनँद भरन।
कमलपदके आसरे नित, रहत राधारमन॥
काम दु:ख संताप भंजन, बिरह-सागर तरन।
कलित कोमल सुभग सीतल, हरत जियकी जरन॥
जयति जय नव-नागरी-पद सकल भव भय हरन।
जुगलप्यारी नैन निरमल, होत लख नख किरन॥

❑ ❑

श्रीराधा-प्रार्थना

(६७४) राग धनाश्री—ताल चौताला

जय राधे, श्रीकुंज बिहारिनि, बेगहि श्रीब्रजबास दीजिये।
बेली बिटप जमुनजल औ रज, संत संग रँग भीजिये॥
बहु दुख सह्यौ, सहों अब कबलौं, अभय सबनि सों कीजिये।
सरनागतकी लाज आपको, कृपा करो तो जीजिये॥
जो कछु चूक परी है अबलौं, सो सब छमा करीजिये।
जुगलप्रिया अनुचरी आपकी बिनय स्रवन सुनि लीजिये॥

❑ ❑

प्रार्थना

(६७५) राग हमीर—ताल तिताला

नाथ अनाथकी सब जानै॥
ठाढ़ी द्वार पुकार करति हौं, स्त्रवन सुनत नहिं कहा रिसानै।
की बहु खोट जानि जिय मेरी, की कछु स्वारथ हित अरगानै॥
दीन बंधु मनसाके दाता, गुन औगुन कैधों मन आनै।
आप एक हम पतित अनेकन, यही देखि का मन सकुचानै॥
झूठौं अपनो नाम धरायो, समझ रहे हैं हमहि सयानै।
तजो टेक मनमोहन मेरे, जुगलप्रिया दीजै रस दानै॥

❑ ❑

प्रेम

(६७६) राग हंसकंकनी—ताल तिताला

प्रीतम रूप दिखाय लुभावै । यातें जियरा अति अकुलावै॥
जो कीजत सो तौ भल कीजत, अब काहे तरसावै।
सीखी कहाँ निठुरता एती, दीपक पीर न लावै॥
गिरि गिरि मरत पतंग जोतिमें, ऐसेहु खेल सुहावै।
सुन लीजै बेदरद मोहना, जिन अब मोहि सतावै॥
हमरी हाय बुरी या जगमें, जिन बिरहाग जरावै।
जुगलप्रिया मिलिबो अनमिलिबो, एकहि भाँति लखावै॥

(६७७) राग टंकरा—ताल तिताला

रूप किरिकिरी परी नैनमें, जियरा अति घबराय हो।
कौन उपाय करूँ हौं आली, जानति जो तौ बताय हो॥
मनकी तौ कोई समुझत नाहीं, कहे कौन पतयाय हो।
जुगलप्रिया देखे नहिं सूझे, परी बिपतिमें हाय हो॥

(६७८) राग मेघरंजनी—ताल झप

स्याम स्वरूप बसो हियमें, फिर और नहीं जग भावै री।
कहा कहूँ को मानै मेरी, सिर बीती सो जानै री॥
रसना रस ना सब रस फीके, द्रगनि न और रंग लागै री।
स्रवननि दूजी कथा न भावे, सुरत सदा पियकी जागै री॥
बढ़्यौ बिरह अनुराग अनोखों, लगन लगी मन नहिं लागै री।
जुगलप्रियाके रोम रोम तें, स्याम ध्यान नहिं पल त्यागै री॥

❑ ❑

बिरह

(६७९) राग जोगिया—ताल चर्चरी

कोई दुख जानै नहिं अपनो, निज सुख होय गयो सपनौ।
मन हरि लीन्हों नैन-सैनसों, बिरह-ताप तन तपनौ॥
मिलि बिछुरी जोगिनि बनि डोलूँ, रूप ध्यान गुन जपनौ।
जुगलप्रिया जग जीवन धिक अस, काल ब्याल भय कँपनौ॥

(६८०) राग सावेरी—ताल इकताला

नयननि नींद हिरानी, बोली कोयल बागमें।
श्रवन सुनत बरछी-सी लागी, कहा बताऊँ जागमें॥
ब्याकुल ह्वै सुध बुध सब भूली, हरी बिरहकी आगमें।
जुगलप्रिया हरि सुधहू न लीन्ही, कहा लिखी या भागमें॥

(६८१) राग गुनकली—ताल चर्चरी

होरी-सी हिय झार बढ़ै री। यह बिछुरन मेरे प्रान हरै री॥
नेह नगरमें धूम मचाई, फेर फिरावत दै दै फेरी।
तन मन प्रान छार भये, मेरे धीरज जियरा नाहिं धरै री॥
यह ऊधम अब कबलौं सहिये, मनमानी मो सँग जु करै री।
जुगलप्रिया सरसाय दरस दे, सीतलता प्रिय आय भरै री॥

❑ ❑

टेक

(६८२) राग दुर्गा—ताल झप

साँवलियाकी चेरी कहौं री॥
चाहे मारौ चहै जिवावौ, जनम जनम नहिं टेक तजौं री।
कर गहि लियौ कहत हौं साँची, नहिं मानै तो तेरी सौं री॥
जो त्रिभुवन ऐश्वर्य लुभावै, तिनका लौं हौं सो समुझौं री।
जुगलप्रिया सुन मेरी सजनी, प्रगट भई अब नाहिन चोरी॥

❑ ❑

सिखावन

(६८३) राग नट बिलावल—ताल तेवरा

मन तुम मलिनता तजि देहु।
सरन गहु गोबिंदकी अब करत कासों नेहु॥
कौन अपने आप काके, परे माया सेहु।
आज दिन लौं कहा पायो, कहा पैहो खेहु॥
बिपिन-बृंदा बास करु जो, सब सुखनिको गेहु।
नाम मुखमें ध्यान हियमें, नैन दरसन लेहु॥
छाँड़ि कपट कलंक जगमें, सार साँचौ एहु।
जुगलप्रिया बन चित्त चातक, स्याम स्वाती येहु॥

(६८४) राग हंसधुन—ताल रूपक

दृग, तुम चपलता तजि देहु।
गुंजरहु चरनारबिन्दनि, होय मधुप सनेहु॥
दसहुँ दिसि जित तित फिरहु किन सकल जगरस लेहु।
पै न मिलिहै अमित सुख कहुँ, जो मिलै या गेहु॥
गहौ प्रीति प्रतीत दृढ़ ज्यों, रटत चातक मेहु।
बनो चारु चकोर पियमुख, चंद्र छबि रस एहु॥

(६८५) राग पीलू—ताल कहरवा

पापिनको सँग छाँड़ि जतन कर।
जिनके बचन बान सम लागत,
सहज मिलन दरसन परसन डर॥
सुखको लेस कहाँ परमारथ,
बिषय-लीन नित रहत अधम नर।
जुगलप्रिया जिनि बिमुख मिलै अब,
रहूँ नर्कमें चहै कल्प भर॥

❑ ❑

चेतावनी

(६८६) राग पहाड़ी—ताल कहरवा

यह तन इक दिन होय जु छारा॥
नाम निशान न रहिहैं रंचहु, भूल जायगो सब संसारा।
काल घरी पूरी जब ह्वै हैं, लगै न छिन छाँड़त भ्रम जारा॥
या माया नटनीके बसमें, भूलि गयौ सुख सिंधु अपारा।
जुगलप्रिया अजहूँ किन चेतत, मिलिहै प्रीतम प्यारा॥

(६८७) राग माँड़—ताल तिताला

बगुला भक्तन सौं डरिये री॥
इक पग ठाढ़े ध्यान धरत हैं, दीन मीन लौं किम बचिये री।
ऊपर तें उज्जल रँग दीखत, हिये कपट हिंसक लखिये री॥
इनतें दूरहिं रहे भलाई, निकट गये फंदनि फँसिये री।
जुगलप्रिया मायावी पूरे, भूलि न इन सँग पल बसिये री॥

❑ ❑

दीनता

(६८८) राग झँझौटी—ताल चर्चरी

सुनिये नाथ गरीब निवाज। आई सरन तुम्हें सब लाज॥
अधम-उधारन बिरद सम्हारन, त्रिभुवनके सिरताज।
कुंजद्वार हौं खड़ी कबैकी, त्राहि त्राहि महराज॥
करुनाकर अब बोलि लीजिये, करिये बिलम न आज।
जुगलप्रियाको अभय कीजिये, यह नहिं कछु बड़ काज॥

(६८९) राग सोरठ—ताल दादरा

मेरे गति एक आप, दूजो कोऊ और ना।
स्त्रीको तन मलीन, कर्म अधिकार ना॥
चपल बुद्धि बरनी कबि होत हिये ज्ञान ना।
मंद-भाग्य मंदकर्म बनत नाहिं साधना॥
बिद्या गुन हीन दीन, नैक भक्ति भाव ना।
नेम ध्यान धर्म कछू होत ना उपासना॥
गेह फँसी ग्रसी रोग, एकहू उपाय ना।
करूँ कहाँ जाऊँ कहाँ काहू पै बसाय ना॥
इतने पै द्रोह करत, तातभ्रात साजना।
जुगलप्रिया तऊँ तुम्हें प्यारे प्रिय लाज ना॥

❑ ❑

चाह

(६९०) राग बृन्दाबनी सारंग—ताल तिताला

बृंदाबन अब जाय रहूँगी, बिपति न सपनेहु जहाँ लहूँगी।
जो भावै सो करौ सबै मिलि, मैं तो दृढ़ हरि चरन गहूँगी॥
प्राननाथ प्रियतमके ढिग रहि, मनमाने बहुसुखनि पगूँगी।
भली भई बन गई बात यह, अब जगदारुन दुख न सहूँगी॥
करिहैं सुरति कबहुँ तो स्वामी, बिषयानलमें अब न दहूँगी।
जुगलप्रिया सतसंग मधुकरी, बिमल जमुन जल सदा चहूँगी॥

(६९१) राग हीम—ताल तिताला

चरन चलौ श्रीवृंदावन मग, जहँ सुनि अलि पिक कीर॥
कर तुम करौ करम कृष्णार्पण अहंकार तजि धीर।
मस्तक नवियौ हरिभक्तनको छाँड़ि कपटको चीर॥
स्रवन सदा सुनियौ हरि-जस-रस, कथा भागवत हीर।
नैना तरसि तरसि जल ढरियौ, पिय मग जाय अधीर॥
नासा तबलौं स्वाँसा भँरियौ, सुरता रखि पिय तीर।
रसना चखियो महा प्रसादै, तजि बिषया-बिष नीर॥
सुधि बुधि बढ़े प्रेम चरनन, ज्यों तृष्णा बढ़े शरीर।
चित्त चितेरे, लिखियो पियकी, मूरति हृदय कुटीर॥
इंद्रिय मन तन भजौ श्यामकों, बढ़े बिरहकी पीर।
जुगलप्रिया आसा जिय धरियो, मिलिहैं श्रीबलबीर॥

(६९२) राग पीलू—ताल कहरवा

ब्रजलीला रस भावै अब तौ, श्रीगिरिराज अंकमें रहिये।
करिये बिनय निहोरि भाँति बहु, स्यामरूप मृदु माधुरि लहिये॥
चलिये संग रसिक भक्तनके, प्रेम प्रवाह मगन ह्वै बहिये।
गाय गुबिंद नाम गुन कीर्तन, जनम जनमके तहँ दुख दहिये॥
करिये कालिंदी जल मज्जन, नित मधूकरी लै निरबहिये।
जुगलप्रिया प्रीतम भुज भरिकै, पाइय जो कछु चहिये॥

(६९३) राग पीलू—ताल कहरवा

आओ प्यारे हृदय-सदनमें, पल कपाट दै राखूँगी।
जान लिये छल-छंद-फंद सब, अब न चलै सत्य भाखूँगी॥
करिहै जो कोई बिघन मिलनमें ताके सब कल-बल नाखूँगी।
जुगलप्रिया मनमोहन तुम्हरौ, द्रगभरि रूपसुधा चाखूँगी॥

(६९४) राग जैजैवंती—ताल तिताला

मैं पाऊँ कृपाकरि मोहिनी, श्रीकुंज भवनकी सोहिनी।
मन मानिक मुक्ता लर टूटैं, बिखरि परै सो खोजिनी॥

होत प्रभात सुहात न अब कछु, करूँ, टहल हिय सोधिनी।
जुगलप्रिया बड़ भाग मनाऊँ, चरन चिन्ह रज लोभिनी॥

❑ ❑

ब्रज-महिमा

(६९५) राग बहार—ताल तिताला

बृंदाबन रस काहि न भावै।
बिटप बल्लरी हरी हरी त्यों, गिरिवर जमुना क्यों न सुहावै॥
खग-मृग-पुंज कुंज-कुंजनिमें, श्रीराधाबल्लभ गुन गावै।
पै हिंसक बंचक रंचक यह, सुख सपनेहू लेस न पावै॥
धनि ब्रज रज धनि बृंदाबन धनि, रसिक अनन्य जुगल बपु ध्यावै।
जुगलप्रिया जीवन ब्रज साँचौ, नतरु बादि मृगजल कों धावै॥

❑ ❑

श्रीयमुना-प्रार्थना

(६९६) राग देस—ताल कहरवा

जय श्रीजमुने कलि-मल-हारिनि!
करु करुना प्रीतमकी प्यारी, भँवर तरंग मनोहर धारिनि॥
पुलिन बेलि कुसुमित सोभित अति, कंजन चंचरीक गुंजारिनि।
बिहरत जीव जंतु पसु पंछी, स्याम रूप रस-रंग बिहारिनि॥
जे जन मज्जन करत बिमल जल, तिनको सब सुख मंगलकारिनि।
जुगलप्रिया हूजै कृपालु अब, दीजै कृष्ण-भक्ति अनपायिनि॥

❑ ❑

मिथिला-धाम

(६९७) राग काफी—ताल तिताला

ज्ञान शुभ कर्मको सुथल मिथिला धाम॥
जनक जोगींद्र राजेंद्र राजत बिदेह ब्रह्म,
सुख अनुभवत निसि दिवस आठौ जाम।
भोग रोग मानत हैं, सहज ही बिराग भाग,
शान्ति रूप कर्म करैं पूरे निहकाम॥

श्रीमती सुनैना भली सुकृत बेलि फूली-फली,
जनमि श्रीसीय पाये लौने बर राम।
जुगलप्रिया सरिता बन बाग तरु तड़ाग राग,
नारी नर सोहै सब अति ललाम॥

❑ ❑

आरती

(६९८) राग जलंधर—ताल तिताला

मंगल आरति प्रिया प्रीतमकी। मंगल प्रीति रीति दोउनकी॥
मंगलकान्ति हँसनि दसननकी। मंगल मुरली बीनाधुनकी॥
मंगल बनिक त्रिभंगी हरिकी। मंगल सेवा सब सहचरकी॥
मंगल सिर चंद्रिका मुकुटकी। मंगल छबि नैननिमें अटकी॥
मंगल छटा फबी अँग अँगकी। मंगल गौर स्याम रसरँगकी॥
मंगल अति कटि पियरे पटकी। मंगल चितवनि नागरनटकी॥
मंगल शोभा कमलनैनकी। मंगल माधुरि मृदुल बैनकी॥
मंगल बृंदाबन मग अटकी। मंगल क्रीड़न जमुना तटकी॥
मंगल चरन अरुन तरुवनकी। मंगल करनि भक्तिहरि जनकी॥
मंगल जुगलप्रिया भावनकी। मंगल श्रीराधा-जीवनकी॥

❑ ❑

रामप्रिया

सिखावन

(६९९) राग प्रभाती—ताल तिताला

तू न तजत सब तोहि तजेंगे।
जा हित जग जंजाल उठावत तोकहँ छाँड़ि भजेंगे॥
जाकहँ करत पियार प्राणसम जो तोहि प्राण कहेंगे।
सोऊ तोकहँ मर्‌यो जानिकै देखत देह डरेंगे॥
देह गेह अरु नेह नाहते नातो नहिं निबहेंगे।
जा बस है निज जन्म गँवावत कोउ न संग रहेंगे॥
कोऊ सुख जग दुःख-बिहीन नहिं कोउ संग करेंगे।
रामप्रिया बिनु रामललाके भव भय कोउ न हरेंगे॥

❑ ❑

किंकिणी-ध्वनि

(७००) राग तिलक कामोद—ताल तिताला

जब किंकिनी धुनि कान परी री॥
लख ललचाय लखनसों लालन हँसि यह बात कही री।
मानहु मान महान महादल कै दुंदुभिकी सान चली री॥
बिश्वबिजय अब कीन्हें चाहत मम दृढ़ता लखि भाजि चली री।
रामप्रियाके रामललाको आजु लली मन छीनि चली री॥

❑ ❑

प्रार्थना

(७०१) राग गौरी—ताल चर्चरी

जय जयति जय रघुबंशभूषण राम राजिवलोचनम्।
त्रैतापखंडन जगत-मंडन ध्यानगम्य अगोचरम्॥
अद्वैत अविनाशी अनिन्दित मोक्षप्रद अरिगंजनम्।
तव शरण भवनिधि-पारगायक अन्यजगतविडम्बनम्॥

दुख-दीन-दारिदके विदारक दयासिन्धु कृपाकरम्।
त्वं रामप्रियके राम जीवनमूरि मंगलमंगलम्॥

❑ ❑

बाल्य-भय

(७०२) राग कोसी—ताल कहरवा

जोई जल व्यापक जहानको जननहार,
जाको ध्यान केते नग-जालसों निपटिगो।
जोई दल्यो दानव दिखायो नरसिंहरूप,
उदित दिगंतसों दुहाई हेत हटिगो॥
रामप्रिया सोई औध-महलको चित्र देखि,
धाय घबराय मणिखंभ सों लपटिगो।
जू जू कहिबेको तुतराय आय दू दू कहि,
अतिहिं सकाय माय-अंकसों छपटिगो॥

❑ ❑

रानी रूपकुँवरि

महिमा

(७०३) राग श्रीरंजनी—ताल तिताला

श्याम छबिपर मैं वारी वारी॥
देवन माहीं इंद्र तुमहीं, हौ उडुगण बीच चंद्र उजियारी।
सामवेद वेदनमें तुमहीं, हौ सुमेरु पर्वतन मझारी॥
सरितन गंगा, वृक्षन पीपर, जल आशयमें सागर पारी।
देव-ऋषिनमें नारद-स्वामी, कपिल मुनी सिद्धन सुखकारी॥
उच्चैश्रवा हयनमें तुमहीं, गज ऐरावत तुमहिं मुरारी।
गौवन कामधेनु, सर्पनमें बासुकि, बज्र आप हथियारी॥
मृगन मृगेन्द्र, गरुड़ पक्षिनमें, तुमहीं मीन सदा जलचारी।
रूपकुँवरि प्रभु छबिके ऊपर, तन मन धन सब है बलिहारी॥

(७०४) राग टोडी—ताल तिताला

राखत आये लाज शरणकी।
राखी मीरा नारि अहिल्या लाज बिभीषण चरन गिरनकी।
ध्रुव प्रहलाद विदुर सुधि राखी, द्रुपदसुताके चीरहरणकी॥
गोपीग्वालबालबृज-बनितन, राखी सुधि गिरिनखन धरनकी।
सोइ लाज प्रभु रखने अइहैं, रूपकुँवरिके सब गृह जनकी।

❑ ❑

रूप

(७०५) राग ललित—ताल तिताला

देखो री छबि नन्दसुवनकी।
मोर मुकुट मकराकृत कुंडल, मुक्त माल गर मनु किरननकी
देखो री छबि० ॥
कर कंकन कंचनके शोभित, उर भ्रगुलता नाथ त्रिभुवनकी
देखो री छबि० ॥

तन पहिरे केसरिया बागो अजब लपेटन पीत बसनकी
देखो री छबि० ॥
रूपकुँवरि धुनि सुनि नूपुरकी, छबि निरखति श्यामपगनकी
देखो री छबि० ॥

(७०६) राग हमीर—ताल तिताला

बस गये नैनन माँहि बिहारी ॥
देखी जबसे श्यामलि मूरति टरत न छबि दृग टारी।
मोर मुकुट मकराकृत कुंडल बाम अंग श्री प्यारी॥
प्रेम भक्ति दीजै मुहि स्वामी अपनी ओर निहारी।
रूपकुँवरि रानीके साधहु कारज सकल मुरारी॥

❑ ❑

श्रीराधा-रूप

(७०७) राग श्री—ताल तिताला

मूरति मुहनियाँ राधिकाजूकी।
सुंदर बसन अंग सब राजति बिहँसति बदन मृदुल मुसकनियाँ॥
सीस चंद्रिका बीज धूल युत कर्णफूल बेसर लटकनियाँ।
कंठ कंठ श्रीमुक्तन माला हार जटित नव लाख रतनियाँ॥
बाजू बाजू बटा अजूबा लटकन पहुँची रतन धकनियाँ।
छुद्रघंटिका राजत मणिमय कर किंकण बाजत झनकनियाँ॥
अनवट बिछिया आदि दसाँगुर पट युग पायजेब पैजनियाँ।
रूपकुँवरि महरानी चेरी मातु भक्ति दे अचल अपनियाँ॥

❑ ❑

सिखावन

(७०८) राग देसी—ताल कहरवा

भज मन राधा गोपाल छोड़ो सब झगरौ॥
सुत पति लखि तात मात सँगमें न कोऊ जात
झूठौ संसार जाल मायाको बगरौ।

मिथ्या धन धाम ग्राम झूठौ है जग तमाम
नाहक ममतामें फँसो चरणनमैं लगरौ॥
यमपुर जब मार परे कोउ न सहाय करे
तन मन धन गेह नेह भूल जात सगरौ।
चोला यह चामको निकाम रामनाम हीन
हंसा उड़ि जात जबै यमके संग झगरौ॥
गर्भमें कबूल करी भक्ति हेतु देह धरी
भूल गये कौल फिरत भटकत जग सगरौ।
दीनबंधु हे मुरारि! सुनिये मेरी पुकार
रूपकुँवरि कृष्ण हेतु अर्पण तन हमरौ॥

(७०९) राग रामकली—ताल तिताला

रसना क्यों न राम रस पीती।
षटरस भोजन पान करेगी फिर रीती की रीती॥
अजहूँ छोड़ कुबान आपनी जो बीती सो बीती।
वा दिनकी तू सुधि बिसराई जा दिन बात कहीती॥
जब यमराज द्वार आ अड़िहैं खुलिहै तब करतूत खलीती।
रूपकुँवरिको मान सिखावन भगवत सन कर प्रीती॥

(७१०) राग मालश्री—ताल तिताला

अब मन कृष्ण कृष्ण कहि लीजे।
कृष्ण कृष्ण कहि कहिके जगमें साधु समागम कीजे॥
कृष्ण नामकी माला लैके कृष्ण नाम चित दीजे।
कृष्ण नाम अमृत रस रसना तृषावंत हो पीजे॥
कृष्ण नाम है सार जगतमें कृष्ण हेतु तन छीजे।
रूपकुवँरि धरि ध्यान कृष्णको कृष्ण कृष्ण कहि लीजे॥

❑ ❑

चेतावनी

(७११) राग पीलू—ताल तिताला

भजन बिन है चोला बेकाम।
मल अरु मूत्र भरो नर सब तन है निष्फल यह चाम॥
बिन हरि भजन पवित्र न ह्वैहै धोवौ आठौ याम।
काया छोड़ हंस उड़ि जैहै पड़ो रहै धन धाम॥
अपनो सुत मुख लू धर दैहै सोच लेहु परिणाम।
रूपकुँवरि सब छोड़ बसहु ब्रज भजिये श्यामा-श्याम॥

❑ ❑

दैन्य

(७१२) राग कामोद—ताल तिताला

हमारे प्रभु कब मिलिहैं घनश्याम।
तुम बिन ब्याकुल फिरत चहूँ दिशि
मन न लहै बिश्राम॥ हमारे प्रभु०॥
दिन नहिं चैन रैन नहिं निदिया
कल न परे बसु याम॥ हमारे प्रभु०॥
जैसे मिले प्रभु बिप्र सुदामहिं
दीन्हें कंचन धाम॥ हमारे प्रभु०॥
रूपकुँवरि रानी सरनागत
पूरन कीजे काम॥ हमारे प्रभु०॥

❑ ❑

दीनता

(७१३) राग बिभास—ताल तिताला

हमपर कब कृपालु हरि हुइहौ।
मैं अधमिन तुम अधम-उधारन
कैसे प्रन न निबइहौ।
कोटिन खल प्रभु तुमने तारे
दीन जान का मोहि लजइहौ॥ १॥

मैं सरनागत नाथ तिहारी
दास जान किन आस पुजइहौ।
का कहिहै जग लोक नाथ जब
रूपकुँवरिकी सुध बिसरइहौ॥ २॥

❑ ❑

प्रार्थना

(७१४) राग खम्माच—ताल तिताला

करहु प्रभु भवसागरसे पार॥
कृपा करहु तो पार होत हौं नहिं बूड़ति मँझधार।
गहिरो अगम अथाह थाह नहिं लीजै नाथ उबार॥
मैं हौं अधम अनेक जन्मकी तुम प्रभु अधम-उधार।
रूपकुँवरि बिन नाम श्यामके नहिं जगमें निस्तार॥

(७१५) राग देस—ताल तिताला

प्रभुजी! यह मन मूढ़ न माने॥
काम क्रोध मद लोभ जेवरी ताहि बाँधि कर ताने।
सब बिधि नाथ याहि समुझायौ नेक न रहत ठिकाने॥
अधम निलज्ज लाज नहिं याको जो चाहे सोइ ठाने।
सत्य असत्य धर्म अरु अधरम नेक न यह शठ जाने॥
करि हारी सब यतन नाथ मैं नेक न याहि लजाने।
दीन जानि प्रभु रूपकुँवरिकौ सब बिधि नाथ निभाने॥

(७१६) राग सोरठ—ताल तिताला

बिहारी जू है तुम लौ मेरी दौर॥
दीननको प्रभु राखत आये हौ त्रिभुवन सिरमौर।
जो जन सरन भये तव स्वामी तिनहिं दियो शुभ ठौर॥
मीरा आदि द्रौपदी सौरी सबके राखे तौर।
रानी रूपकुँवरि सरनागत करिये प्रभु अब गौर॥

❑ ❑

कीर्तन

(७१७) राग गारा—ताल दादरा

जय जय श्रीकृष्णचन्द्र नंदके दुलारे॥
ब्यास ऋषिन कपिलदेव मच्छ कच्छ हंस सेव।
नर हरि बामन सुमेव परशु धरनहारे॥
कलकि बौद्ध पृथु सुधीर ध्रुव हरि रघुबंस बीर।
धन्वन्तरि हरण पीर हयग्रीव प्यारे॥
बद्रीपति दत्तात्रय मन्वन्तर टारन भय।
यज्ञेश्वर शूकर जय सनकादिक उचारे॥
रूपकुँवरि चतुरबिंस नाम जपति बढ़ति बंस।
भक्ति मुक्ति लहै हंस अधमनको तारे॥

(७१८) राग गारा—ताल तिताला

जय जय मोहन मदनमुरारी॥
जय जय जय बृंदाबनबासी आनँद मंगलकारी।
जय जय रंगनाथ श्रीस्वामी जय प्रभु कलिमलहारी॥
जय जय कहत सकल सुर हरषित जय जय कुंजबिहारी।
जय जय जय मधुबन बंसीबट जय जय करि गिरधारी॥
जय जय दीनबंधु करुणाकर जय जय गर्वप्रहारी।
रूपकुँवरि बिनवति कर जोरे हौं प्रभु सरन तिहारी॥

❑ ❑

प्रभाती

(७१९) राग प्रभाती—ताल दादरा

जागहु ब्रजराज लाल मोर मुकुटवारे।
पक्षी ध्वनि करहिं शोर अरुण वरुण भानु भोर
नवल कमल फूल रहे भौंरा गुनजारे॥
भक्तनके सुने बयन जागे करुणाके अयन
पूजी मन कामधेनु पृथ्वी पगु धारे।

करके सुस्नान ध्यान पूजन पूरण विधान
बिप्रनको दियौ दान नंदके दुलारे॥
ग्वाल बाल टेर टेर दुहरी लीन्हीं नवेर
बछरा दीन्हें उबेर दूध दुहत सारे।
करके भोजन गैयन सँग भये ग्वाल
बंसीबट तीर गये यमुना किनारे॥
मुरली कर लकुट हाथ बिहरत गोपिनके साथ
नटवर सब बेष किये यशुमतिके पियारे।
हौं तो मैं शरण नाथ मिनवति धरि चरन माथ
रूपकुँवरि दरस हेतु शरण है तिहारे॥

❑ ❑

चाह

(७२०) राग पीलू—ताल तिताला

लागो कृष्ण-चरण मन मेरौ॥
ध्रुव प्रहलाद दास कर लीन्हें ऐसहिं मौपर हेरौ।
गजकी टेर सुनत ही तुमने तुरतहि जाइ उबेरौ॥ १॥
भवसागरसे पार उतारहु नेक करौ नहिं देरौ।
रूपकुँवरि रानीको दीजे प्रभु पद-प्रेम घनेरौ॥ २॥

(७२१) राग पूरिया कल्याण—ताल तिताला

नाथ मुहिं कीजै ब्रजकी मोर।
निश दिन तेरो नृत्य करौंगी ब्रजकी खोरन खोर॥
श्याम घटा सम घात निरखिके कूकौंगी चहुँ ओर।
मोर मुकुट माथेके काजें दैहों पंखा टोर॥
ब्रजबासिन सँग रहस करूँगी नचिहौं पंख मरोर।
रूपकुँवरि रानी सरनागत जय जय जुगलकिशोर॥

(७२२) राग सारंग—ताल तिताला

हे हरि ब्रजबासिन मुहिं कीजे॥
चह ब्रज ग्वाल बाल गोपिनके चह ब्रज बनचर कीजे।
चह ब्रज धेनु चाहि ब्रज बछरा चह ब्रज तृणचर कीजे॥
चह ब्रज लता चहै ब्रज सरिता चह ब्रज जलचर कीजे।
चह ब्रज कीच नीच ऊँचन घर चह ब्रज फणचर कीजे॥
चह ब्रज बाट घाट पनघट रज चह ब्रज थलचर कीजे।
चह ब्रज भूप-भवनकी किंकरि चह ब्रज घुड़चर कीजे॥
चह ब्रज चकइ चकोर मोर कर चह ब्रज नभचर कीजै।
रूपकुँवरि दासी दासिनको चह अनुचरी करीजै॥

❑ ❑

प्रकीर्ण

(७२३) राग शुद्ध कल्याण—ताल तिताला

प्रभुके दो ही दास हैं साँचे॥
नेमी होय चाहि हो प्रेमी होय न मनके काँचे।
प्रथम भक्ति प्रेमी जन पावत दूजे नेमी राँचे॥
प्रेम भाव लखि ब्रजगोपिनको तिनके सँग प्रभु नाँचे।
रूपकुँवरि यह सत्य जान लो हरि साँचेको साँचे॥

❑ ❑

रहीम

(७२४) राग शुद्ध कल्याण—ताल तिताला

छबि आवन मोहनलालकी।
काछिनि काछे कलित मुरलि कर पीत पिछौरी सालकी॥
बंक तिलक केसरकौ कीनें, दुति मानों बिधु बालकी।
बिसरत नाहि सखी, मो मनतें, चितवन नयन बिसालकी॥
नीकी हँसनि अधर सुधरनिकी, छबि छीनी सुमन गुलालकी।
जलसों डारि दियों पुरइन पर, डोलनि मुकता-मालकी॥
आप मोल बिन मोलनि डोलनि, बोलनि मदनगोपालकी।
यह सुरूप निरखै सोइ जानै, या 'रहीम' के हालकी॥

(७२५) राग पटमंजरी—ताल तिताला

कमलदल नैननिकी उनमानि।
बिसरत नाहिं सखी, मो मनतें मन्द-मन्द मुसुकानि॥
यह दसननि दुति चपलाहूतें महाचपल चमकानि।
बसुधाकी बस करी मधुरता, सुधा-पगी बतरानि॥
चढ़ी रहै चित उर बिसालकी, मुकुत माल थहरानि।
नृत्य-समय पीताम्बरहूकी फहरि-फहरि फहरानि॥
अनुदिन श्रीबृंदाबन ब्रजतें, आवन आवन जानि।
अब 'रहीम' चिततें न टरति है, सकल स्यामकी बानि॥

(७२६) राग चाँदनी केदारा—ताल आड़ा चौताला

शरद-निशि-निशीथे चाँदकी रोशनाई।
सघन-बन-निकुंजे कान्ह बंसी बजाई॥
रति, पति, सुत, निद्रा साइयाँ छोड़ भागी,
मदन-शिरसि भूयः क्या बला आन लागी॥

(७२७)

कलित ललित माला वा जवाहर जड़ा था,
चपल चखनवाला चाँदनीमें खड़ा था।
कटि-तट-बिच मेला पीत सेला नवेला,
अलिबन अलबेला यार मेरा अकेला॥

(७२८)

दृग छकित छबीली छेलराकी छरी थी,
मणि-जटित रसीली माधुरी मूँदरी थी।
अमल कमल ऐसा खूबसे खूब देखा,
कहि न सकी जैसा श्यामका हस्त देखा॥

(७२९)

कठिन कुटिल काली देख दिलदार जुलफें,
अलि-कलित बिहारी आपने जीकी कुलफें।
सकल शशि-कलाको रोशनी-हीन लेखौं,
अहह ब्रजललाको किस तरह फेर देखौं॥

(७३०)

जरद बसनवाला गुलचमन देखता था,
झुक-झुक मतवाला गावता रेखता था।
श्रुति युग चपलासे कुण्डलें झूमते थे,
नयन कर तमाशे मस्त है घूमते थे॥

(७३१)

तरल तरनि-सी हैं तीर-सी नोकदारें,
अमल कमल-सी हैं दीर्घ हैं बिल बिदारें।
मधुर मधुप हेरें माल मस्ती न राखें,
बिलसति मन मेरे सुन्दरी स्याम आँखें॥

(७३२)

भुजग जुग किधौं हैं काम कमनैत सोहैं,
नटवर! तव मोहैं बाँकुरी मान भौंहैं।
सुनु सखि, मृदु बानी बेदुरुस्ती अकिलमें,
सरल-सरल सानी कै गई सार दिलमें॥

(७३३)

पकरि परम प्यारे साँवरेको मिलाओ,
असल अमृत-प्याला क्यों न मुझको पिलाओ?
इति बदति पठानी मन्मथांगी बिरागी,
मदन-शिरसि भूयः क्या बला आन लागी॥

(७३४) राग झँझौटी—ताल तिताला (पंजाबी ठेका)

पट चाहैं तन, पेट चाहत छदन मन,
चाहत है, धन जेती सम्पदा सराहिबी।
तेरोई कहायकै, रहीम कहै दीनबन्धु,
आपनी बिपत्ति जाय काके द्वार काहिबी?
पेट भरि खायो चाहै, उद्यम बनायौ चाहै,
कुटुँब जियायो चाहै, काढ़ि गुन लाहिबी।
जीविका हमारी जोपै औरनके कर डारौ,
ब्रजके बिहारी! तो तिहारी कहाँ साहिबी॥

❑ ❑

रसखानि

(७३५) राग बागेश्री—ताल तिताला

मानुष हौं तो वही रसखानि बसौं ब्रज गोकुल गाँवके ग्वारन।
जो पसु हौं तो कहा बसु मेरो, चरौं नित नन्दकी धेनु मँझारन॥
पाहन हौं तो वही गिरिकौ, जो धर्‍यौ कर छत्र पुरन्दर-धारन।
जो खग हौं तौ बसेरो करौं मिलि, कालिंदी-कूल-कदम्बकी डारन॥

(७३६) राग मालश्री—ताल तिताला

या लकुटी अरु कामरियापर, राज तिहूँ पुरकौ तजि डारौं।
आठहु सिद्धि नवो निधिकौ सुख, नन्दकी गाइ चराइ बिसारौं॥
रसखानि, कबों इन आँखिनसों, ब्रजके बन-बाग तड़ाग निहारौं।
कोटिक हों कलधौतके धाम, करीलकी कुंजन ऊपर बारौं॥

(७३७) राग भैरवी—ताल तिताला

गावैं गुनी, गनिका, गन्धर्व औ सारद, सेष सबै गुन गावैं।
नाम अनन्त गनन्त गनेस-ज्यों, ब्रह्मा त्रिलोचन पार न पावैं॥
जोगी, जती, तपसी अरु सिद्ध, निरन्तर जाहि समाधि लगावैं।
ताहि अहीरकी छोहरियाँ, छछियाभरि छाछपै नाच नचावैं॥

(७३८) राग नारायनी—ताल तिताला

सेस, महेस, गनेस, दिनेस, सुरेसहु जाहि निरन्तर गावैं।
जाहि अनादि, अनन्त, अखण्ड, अछेद, अभेद सुबेद बतावैं॥
नारद-से सुक ब्यास रटैं, पचिहारे, तऊ पुनि पार न पावैं।
ताहि अहीरकी छोहरियाँ, छछियाभरि छाछपै नाच नचावैं॥

(७३९) राग केदारा—ताल झप

खंजन-नैन फँसे पिंजरा-छबि, नाहिं रहैं थिर कैसेहूँ माई!
छूटि गयी कुल कानि सखी, रसखानि, लखी मुसुकानि सुहाई॥
चित्र-कढ़े-से रहैं मेरे नैन, न बैन कढ़ै, मुख दीनी दुहाई।
कैसी करौं, जिन जाव अली, सब बोलि उठैं, यह बावरी आई॥

(७४०) राग पूरबी—ताल दीपचंदी

कानन दै अँगुरी रहिबो, जबहीं मुरली-धुनि मन्द बजैहै;
मोहिनी-तानन सों रसखानि, अटा चढ़ि गोधन गैहै तौ गैहै।
टेरि कहौं सिगरे ब्रज-लोगनि, काल्हि कोऊ कितनो समुझैहै;
माई री, वा मुखकी मुसुकानि, सँभारी न जैहै न जैहै न जैहै॥

(७४१) राग देशी—ताल कहरवा

आजु री, नन्दलला निकस्यो, तुलसी-बनतें बनकैं मुसकातो।
देखे बनै न बनै कहते अब, सो सुख जो मुखमें न समातो॥
हौं रसखानि, बिलोकिबेकों कुल कानिको काज कियो हिय हातो।
आय गई अलबेली अचानक, ऐ भटु लाजको काज कहा तो?॥

(७४२) राग भूपाली—ताल तिताला

धूरि-भरे अति सोभित स्यामजु, तैसी बनी सिर सुन्दर चोटी।
खेलत-खात फिरैं अँगनाँ, पगपैजनी बाजतीं, पीरी कछोटी॥
वा छबिकों रसखानि बिलोकत, बारत कामकलानिधि-कोटी।
कागके भाग कहा कहिए, हरि-हाथसों लै गयो माखन-रोटी॥

(७४३) राग हमीर—ताल झप

ब्रह्म मैं ढूँढ्यौ पुरानन गानन, बेद-रिचा सुनि चौगुने चायन।
देख्यो सुन्यो कबहूँ न कितै, वह कैसे सरूप औ कैसे सुभायन॥
टेरत हेरत हारि पर्‍यौ, रसखानि, बतायो न लोग-लुगायन।
देखौ, दुर्‍यौ वह कुंज-कुटीरमें बैठ्यौ पलोटत राधिका-पायन॥

(७४४) राग संकरा—ताल तिताला

द्रौपदि औ गनिका, गज, गीध, अजामिलसों कियो सो न निहारो।
गौतम-गेहिनी कैसे तरी, प्रहलादको कैसे हर्‍यौ दुख भारो॥
काहे को सोच करै रसखानि, कहा करिहै रवि-नन्द बिचारो?
कौनकी संक परी है जु माखन-चाखनहारो है राखनहारो॥

(७४५) राग जलधर केदारा—ताल तिताला

जा दिनतें निरख्यौ नँद-नंदन, कानि तजी घर बन्धन छूट्यो।
चारु बिलोकनिकी निसि मार, सँभार गयी मन मारने लूट्यो॥
सागरकौं सरिता जिमि धावति रोकि रहे कुलकौ पुल टूट्यो।
मत्त भयो मन संग फिरै, रसखानि सुरूप सुधा-रस घूट्यो॥

(७४६) राग पीलू बरवा—ताल कहरवा

बेनु बजावत, गोधन गावत, ग्वारनके सँग गोमधि आयो।
बाँसुरीमें उन मेरो नाम लै, साथिनके मिस टेरि सुनायो॥
ऐ सजनी, सुनि सासके त्रासनि, नन्दके पास उसासनि आयो।
कैसी करौं रसखानि तहीं चित चैन नहीं, चित चोर चुरायो॥

(७४७) राग बागेश्री—ताल तिताला

बैन वही उनकौ गुन गाइ, औ कान वही उन बैन सों सानी।
हाथ वही उन गात सरैं, अरु पाइ वही जु वही अनुजानी॥
जान वही उन प्रानके संग, औ मान वही जु करै मनमानी।
त्यों रसखानि वही रसखानि, जु है रसखानि, सो है रसखानी॥

❑ ❑

यारी साहब

(७४८) राग दीपक—ताल तिताला

बिरहिनी मंदिर दियना बार॥
बिन बाती बिन तेल जुगतसों, बिन दीपक उजियार।
प्रान पिया मेरे गृह आये, रचि-पचि सेज सँवार॥
सुखमन सेज परम तत रहिया, पिय निरगुन निरकार।
गावहु री मिलि आनँद-मंगल, 'यारी' मिलके यार॥

(७४९) राग मियाँकी टोड़ी (खयाल)—ताल ति०

बिन बंदगी इस आलममें, खाना तुझे हराम है रे!
बंदा करै सोइ बंदगी, खिदमतमें आठों जाम है रे!
'यारी' मौला बिसारके, तू क्या लागा बेकाम है रे!
कुछ जीते-जी बंदगी कर ले, आखिरको गोर मुकाम है रे!

(७५०) राग संकरा—ताल तिताला

दिन दिन प्रीति अधिक मोहि हरिकी।
काम-क्रोध-जंजाल भसम भयो, बिरह-अगिन लगि धधकी॥
धधकि-धधकि सुलगति अति निर्मल, झिलमिल-झिलमिल झलकी।
झरि-झरि परत अँगार अधर 'यारी' चढ़ि अकास आगे सरकी॥

(७५१) राग हुसेनी कान्हरा—ताल कहरवा

दोउ मूँदके नैन अन्दर, देखा, नहिं चाँद सूरज दिन रात है रे!
रोशन समा बिनु तेल-बाती, उस जोतिसों सबै सिफाति है रे!
गोता मार देखो आदम, कोउ और नाहिं संग-साथि है रे!
'यारी' कहै तहकीक किया, तू मलकुल मौतकी जाति है रे!

(७५२) राग मालकोस—ताल तिताला

हमारे एक अलह प्रिय प्यारा है।
घट-घट नूर उसी प्यारेका जाका सकल पसारा है॥
चौदह तबक जाकी रोशनाई, झिलमिल जोत सितारा है।
बेनमून बेचून अकेला, हिंदु तुरकसे न्यारा है॥

सोइ दरबेस दरस निज पायो, सोई मुसलिम सारा है।
आवै न जाय, मरै नहिं जीवै 'यारी' यार हमारा है॥

(७५३) राग आसावरी—ताल कहरवा

गुरुके चरनकी रज लैके, दोउ नैननके बिच अंजन दीया।
तिमिर मेटि उँजियार हुआ, निरंकार पियाको देख लीया॥
कोटि सूरज तहँ छिपे घने, तीन लोक-धनी धन पाइ पीया।
सतगुरुने जो करी किरपा, मरिके 'यारी' जुग-जुग जीया॥

(७५४) राग सिंदूरा—ताल दीपचंदी

हौं तो खेलौं पियासँग होरी।
दरस-परस पतिबरता पियकी, छबि निरखत भइ बौरी॥
सोलह कला सँपूरन देखौं, रबि ससि भे इक ठौरी।
जबतें दृष्टि पर्‌यो अबिनासी लागी रूप-ठगौरी॥
रसना रटति रहति निसि बासर, नैन लगे यहि ठौरी।
कह 'यारी' यादि करु हरिकी, कोइ कहैं सो कहौ री॥

(७५५) राग शहाना—ताल दीपचंदी

झिलमिल-झिलमिल बरसै नूरा, नूर-जहूर सदा भरपूरा।
रुनझुन-रुनझुन अनहद बाजै, भँवर गुँजार गगन चढ़ि गाजै॥
रिमझिम-रिमझिम बरसै मोती, भयो प्रकास निरंतर जोती।
निर्मल निर्मल निर्मल नामा, कह 'यारी' तहँ लियो बिस्रामा॥

(७५६) राग भैरवी—ताल तिताला

रसना, राम कहत तैं थाको।
पानी कहे कहुँ प्यास बुझति है, प्यास बुझै जदि चाखो॥
पुरुष-नाम नारी ज्यों जानैं, जानि-बूझि नहिं भाखो।
दृष्टीसे मुष्टी नहिं आवै नाम निरंजन बाको॥
गुरु-परताप साधुकी संगति, उलटि दृष्टि जब ताको।
'यारी' कहै सुनो भाई संतो, बज्र बेधि कियो नाको॥

(७५७) राग पीलू—ताल कहरवा

निर्गुन चुनरी निर्बान, कोउ ओढ़ै संत सुजान॥
घट दर्शनमें जाइ खोजो, और बीच हैरान।
जोति-सरूप सुहागिन चुनरी आव बधू धरि ध्यान॥
हद बेहदके बाहर 'यारी' संतनको उत्तम ज्ञान।
कोऊ गुरुगम ओढ़ै चुनरिया, निर्गुन चुनरी निर्बान॥

(७५८) राग हमीर—ताल तिताला

आरति करो मन आरति करो।
गुरु-प्रताप साधुकी संगति, आवागमन तें छूटि पड़ो॥
अनहद ताल आदि सुध बानी, बिनु जिभ्या गुन बेद पढ़ो।
आपा उलटि आतमा पूजो, त्रिकुटी न्हाइ सुमेर चढ़ो॥
साराँग सेत सुरतिसो राखो, मन पतंग होइ अजर जरो।
ज्ञानकै दीप बरै बिन बाती, कह 'यारी' तहँ ध्यान धरो॥

(७५९) राग जोगिया—ताल रूपक

जोगी जुगति जोग कमाव।
सुखमना पर बैठि आसन, सहज ध्यान लगाव॥
दृष्टि सम करि सुन्न सोओ, आपा मेटि उड़ाव।
प्रगट जोति अकार अनुभव, शब्द सोहं गाव॥
छोड़ि मठको चलहु जोगी, बिना पर उड़ि जाव।
'यारी' कहै यह मत बिहंगम, अगम चढ़ि फल खाव॥

(७६०) राग सारंग—ताल तिताला

मन मेरो सदा खेलै नटबाजी, चरन कमल चित राजी॥
बिनु करताल पखावज बाजै, अगम पंथ चढ़ि गाजी।
रूप बिहीन सीस बिनु गावै, बिनु चरनन गति साजी॥
बाँस सुमेरु सुरतिकै डोरी, चित चेतन सँग चेला।
पाँच पचीस तमासा देखहिं, उलटि गगन चढ़ि खेला॥
'यारी' नट ऐसी बिधि खेलै, अनहद ढोल बजावै।
अनँत कला अवगति अनमूरति, बानक बनि बनि आवै॥

(७६१) राग अहीर भैरों—ताल चर्चरी

मन ग्वालिया, सत सुकृत तत दुहि लेह॥
नैन-दोहनि रूप भरि-भरि, सुरति सब्द सनेह।
निझर झरत अकास ऊठत, अधर अधरहिं देह॥
जेहि दुहत सेस महेस ब्रह्मा कामधेनु बिदेह।
'यारी' मथके लियो माखन, गगन मगन भखेह॥

(७६२) राग तिलक कामोद—ताल चर्चरी

चंद तिलक दिये सुंदर नारी, सोइ पतिबरता पियहि पियारी।
कंचन-कलस धरे पनिहारी, सीस सुहाग भाग उँजियारी॥
सब्द-सेंदुर दै माँग सवाँरी, बेंदी अचल टरत नहिं टारी।
अपन रूप जब आप निहारी, 'यारी' तेज-पुंज उँजियारी॥

(७६३) राग दुर्गा—ताल तिताला

तू ब्रह्म चीन्हो रे ब्रह्मज्ञानी।
समुझि बिचारि देखु नीके करि, ज्यों दर्पनमधि अलख निसानी।
कहै 'यारी' सुनो ब्रह्मगियानी जगमग जोति निसानी॥

(७६४) राग पीलू—ताल कहरवा

उरध मुख भाठी, अवटौं कौनी भाँति।
अर्ध उर्ध दोउ जोग लगायो, गगन-मँडल भयो माठ॥
गुरु दियो ज्ञान, ध्यान हम पायो, कर करनी कर ठाट।
हरिके मद मतवाल रहत है, चलत उबटकी बाट॥
आपा उलटिके अमी चुबाओ, तिरबेनीके घाट।
प्रेम-पियाला श्रुति भरि पीवो, देखो उलटी बाट॥
पाँच तत्त इक जोति समाने, धर छहवो मन हाथ।
कह 'यारी' सुनियों भाइ संतो, छकि-छकि रहि भयो मात॥

(७६५) राग प्रभाती—ताल दीपचंदी

राम रमझनी यारी जीवके॥
घटमें प्रान अपान दुहाई, अरध उरध आवै अरु जाई॥
लेके प्रान अपान मिलावै वाही पवनतें गगन गरजावै॥
गरजै गगन जो दामिनि दमकै मुक्ताहल रिमझिम तहँ बरखै॥
वा मुक्तामहँ सुरति पिरोवै सुरति सब्द मिलि मानिक होवै॥
मानिक जोति बहुत उजियारा, कह 'यारी' सोइ सिरजनहारा॥
साहब सिरजनहार गुसाईं, जामें हम, सोई हम माँहीं॥
जैसे कुंभ नीर बिच भरिया, बाहर-भीतर खालिक दरिया॥
उठ तरंग तहँ मानिक मोती, कोटिन चंद सूरकै जोती॥
एक किरिनिका सकल पसारा, अगम पुरुष सब कीन्ह नियारा॥
उलटि किरिन जब सूर समानी, तब आपनि गति आपुहि जानी॥
कह 'यारी' कोई अवर न दूजा, आपुहिं ठाकुर आपहिं पूजा॥
पूजा सत्त पुरुषका कीजै, आपा मेटि चरन चित दीजै॥
उनमुनि रहनि सकलको त्यागी, नवधा प्रीति बिरह बैरागी॥
बिनु बैराग भेद नहिं पावै, केतो पढ़ि-पढ़ि रचि-रचि गावै॥
जो गावै ताको अरथ बिचारै, आपु तरै, औरनको तारै॥

(७६६) राग पीलू—ताल कहरवा

सतगुरु है सत पुरुष अकेला, पिंड ब्रह्माण्डके बाहर मेला॥
दूरतें दूर, ऊँचतें ऊँचा, बाट न घाट गली नहिं कूचा॥
आदि न अंत मध्य नहिं तीरा, अगम अपार अति गहिर गँभीरा॥
कच्छ दृष्टि तहँ ध्यान लगावै, पलमहँ कीट भृंग होइ जावै॥
जैसे चकोर चंदके पासा, दीसै धरती बसै अकासा॥
कह 'यारी' ऐसे मन लावै, तब चातक स्वाँती-जल पावै॥

(७६७) राग पीलू—ताल कहरवा

सुन्नके मुकाममें बेचूनकी निसानी है,
जिकिर रूह सोई अनहद बानी है।
अगमको गम्म नहीं झलक पेसानी है,
कहै 'यारी' आपा चीन्है सोई ब्रह्मज्ञानी है॥

(७६८) राग बहार—ताल तिताला

उड़ु रे उड़ु बिहंगम चढ़ु अकास।
जहँ नहिं चाँद-सूर निसि-बासर, सदा अमरपुर अगम बास॥
देखै उरध अगाध निरंतर हरष सोक नहिं जमकै त्रास।
कह 'यारी' तहँ बधिक-फाँस नहिं फल खायो जगमग परकास॥

(७६९) राग तिलंग—ताल तेवरा

गयो सो गयो बहुरि नहिं आयौ॥
दूरितें अंतर गवन कियो, तिहुँ लोक दिखायो।
तेंहूँतें आगे, दूरितें दूरि परेतें परे जाइ छायो॥
'यारी' कहै अति पूरन तेजा, सो देखि सरूप पतंग समायो।
आवै न जाय, मरै नहिं जीवै, हलै न टलै तहवाँ ठहरायो॥

(७७०) राग झँझौटी—ताल तिताला

एक कहो सो अनेक है दीसत, एक अनेक धरे है सरीरा।
आदिहि तौ फिर अंतहुँ भी मद्ध सोई हरि गहिर गँभीरा॥
गोप कहो सो अगोप सों देखो, जोतिस्वरूप बिचारत हीरा।
कहे सुने बिनु कोइ न पावै कहिके सुनावत 'यारी' फकीरा॥

(७७१)

देखु बिचारि हिये अपने नर, देह धरो तौ कहा बिगरो है।
यह मट्टीका खेल-खिलोना बनो, एक भाजन, नाम अनंत धरो है॥
नेक प्रतीति हिये नहिं आवति, मर्म भूलो नर अवर करो है।
भूषन ताहि गलाइके देखु, 'यारी' कंचन ऐनको ऐन धरो है॥

(७७२) धुन लावनी—ताल कहरवा

आँखी सेती जो भी देखिये, सो तो आलम फ़ानी है।
कानोंसे भी जो सुनिये रे सो तो जैसे कहानी है॥
इस बोलतेको उलटि देखै, सोई आरिफ सोइ ज्ञानी है।
'यारी' कहै, यह बूझि देखा, और सबै नादानी है॥

(७७३) धुन लावनी—ताल कहरवा

जहँ मूल न डार न पात है रे, बिन सींचे बाग सहज फूला।
बिन डाँड़ीका फूल है रे, निर्बासके बास भँवर भूला॥
दरियावके पार हिंडोलना रे कोउ बिरही बिरला जा झूला।
'यारी' कहै इस झूलनेमें, झूलै कोऊ आसिक दोला॥

(७७४) धुन लावनी—ताल कहरवा

जबलग खोजै चला जावै, तबलग मुद्दा नहिं हाथ आवै।
जब खोज मरै तब घर करै, फिर खोज पकरके बैठ जावै॥
आपमें आपको आप देखै, और कहूँ नहिं चित्त जावै।
'यारी' मुद्दा हासिल हुआ, आगेको चलना क्या भावै॥

(७७५) धुन लावनी—ताल कहरवा

अंधा पूछे आफ़ताबको रे उसे किस मिसाल बतलाइये जी?
वा नूर समान नहीं औरै, कवने तमसील सुनाइये जी॥
सब आँधरे मील दलील करैं, बिन दीदा दीदार न पाइये जी।
'यारी' अंदर यकीन बिना, इलमसे क्या बतलाइये जी॥

(७७६) राग पीलू—ताल कहरवा

हम तो एक हुबाब हैं रे, साकिन बहरके बीच सदा।
दरियावके बीच दरियावकी मौज है, बाहर नाहीं गैर खुदा॥
उठनेमें हुबाब है, देखो, मिटनेमें मुतलक सौदा।
हुबाब तो ऐन दरियाव 'यारी' वोहि नाम धरो है बुदबुदा॥

(७७७) राग सारंग—ताल कहरवा

आबके बीच निमक जैसे, सबलो है येहि मिलि जावै।
वह भेदकी बात अवर है रे, यह बात मेरे नहिं मन भावै॥
गवास होइके अंदर धँसई, आदर सँवारके जोति लावै।
'यारी' मुद्दा हासिल हूआ, आगेको चलना क्या भावै॥

(७७८) राग खम्माच—ताल कहरवा

गगन गुफामें बैठिके रे, उलटिके अपना आप देखै।
अजपा जपै बिन जीभसों रे, बिन नैन निरंजन रूप लेखै॥
जोति बिना दीपक है रे, दीपक बिना जगमग पेखै।
'यारी' अलख अलेख है रे, भेषके भीतर भेष भेषै॥

(७७९) राग खम्माच—ताल कहरवा

गगन-गुफामें बैठिके रे, अजपा जपै बिन जीभ सेती।
त्रिकुटी संगम जोति है रे, तहँ देखि लेवै गुरु ज्ञान सेती॥
सुन्न गुफामें ध्यान धरै, अनहद सुनै बिन काम सेती।
'यारी' कहै, सो साधु है रे, बिचार लेवै गुरु ध्यान सेती॥

❑ ❑

खुसरो

(७८०) राग जौनपुरी—ताल दीपचंदी

बहुत रही बाबुल घर दुलहिन, चल तेरे पी ने बुलाई।
बहुत खेल खेली सखियनसों अंत करी लरकाई॥
न्हाय-धोयके बस्तर पहिरे, सब ही सिंगार बनाई।
बिदा करनेको कुटुँब सब आये, सिंगरे लोग लुगाई॥
चार कहारन डोली उठाई, संग पुरोहित नाई।
चले ही बनैगी होत कहा है, नैनन नीर बहाई॥
अंत बिदा ह्वै चलि है दुलहिन काहूकी कछु न बसाई।
मौज खुशी सब देखत रह गये, मात पिता औ भाई॥
मोरि कौन सँग लगन धराई, धन-धन तोरि है खुदाई।
बिन माँगे मेरी मँगनी जो दीन्हीं, पर-घरकी जो ठहराई॥

अँगुरी पकरि मोरा पहुँचा भी पकरे कँगना अँगूठी पहराई।
नौशाके सँग मोहि कर दीन्हीं, लाज सँकोच मिटाई॥
सोना भी दीन्हा, रूपा भी दीन्हा, बाबुल दिल-दरियाई।
गहेल गहली डोलति आँगनमें, अचानक पकर बैठाई॥
बैठत मलमल कपरे पहनाये, केसर तिलक लगाई।
'खुसरो' चली ससुरारी सजनी, संग नहीं कोई जाई॥

❑ ❑

दरिया साहब (मारवाड़वाले)

(७८१) राग पीलू—ताल दीपचंदी

कहा कहूँ मेरे पिउकी बात! जोरे कहूँ सोइ अंग सुहात।
जब मैं रही थी कन्या क्वारी, तब मेरे करम हता सिर भारी॥
जब मेरे पिउसे मनसा दौड़ी, सतगुरु आन सगाई जोड़ी।
तब मैं पिउका मंगल गाया, जब मेरा स्वामी ब्याहन आया॥
हथलेवा दै बैठी संगा, तब मोहिं लीन्हीं बायें अंगा।
जन 'दरिया' कहे, मिट गई दूती, आपा अरपि पीउ सँग सूती॥

(७८२) राग बिहाग—ताल दीपचंदी

जाके उर उपजी नहिं भाई! सो क्या जानै पीर पराई॥
ब्यावर जानै पीरकी सार, बाँझ नार क्या लखै बिकार।
पतिब्रता पतिको ब्रत जानै, बिभचारिन मिल कहा बखानै॥
हीरा पारख जौहरि पावै, मूरख निरखके कहा बतावै।
लागा घाव कराहै सोई, कोतुकहारके दर्द न कोई॥
राम नाम मेरा प्रान-अधार, सोई राम रस-पीवनहार।
जन 'दरिया' जानैगा सोई, प्रेमकी भाल कलेजे पोई॥

(७८३) राग बिलावल—ताल चर्चरी

जो धुनिया तौ भी मैं राम तुम्हारा।
अधम कमीन जात मति-हीना, तुम तौ हौ सिरताज हमारा॥
कायाका जंत्र सब्द मन मुठिया सुखमन ताँत चढ़ाई।
गगन-मँडलमें धुनिया बैठा, मेरे सतगुरु कला सिखाई॥
पाप पान हर कुबुध काँकड़ा, सहज-सहज झड़ जाई।
घुंडी गाँठ रहन नहिं पावै, इकरंगी होय आई॥
इकरँग हुआ, भरा हरि चोला, हरि कहै, कहा दिलाऊँ।
मैं नाहीं मेहनतका लोभी, बकसो मौज भक्ति निज पाऊँ॥
किरपा करि हरि बोले बानी, तुम तौ हौ मम दास।
'दरिया' कहे, मेरे आतम भीतर मेलो राम भक्त-बिस्वास॥

(७८४) राग कलिंगड़ा—ताल चर्चरी

आदि अंत मेरा है राम, उन बिन और सकल बेकाम॥
कहा करूँ तेरा बेद-पुराना, जिन है सकल सकत बरमाना।
कहा करूँ तेरी अनुभौ बानी, जिनतें मेरी बुद्धि भुलानी॥
कहा करूँ ये मान-बड़ाई, राम बिना सब ही दुखदाई।
कहा करूँ तेरा सांख्य औ जोग, राम बिना सब बंधन रोग॥
कहा करूँ इन्द्रिनका सुक्ख, राम बिना देवा सब दुक्ख।
'दरिया' कहै, राम गुरु मुखिया, हरि बिन दुखी, रामसँग सुखिया॥

(७८५) राग माँड़—ताल तिताला

बाबुल कैसे बिसरा जाई?
जदि मैं पति-संग रल खेलूँगी, आपा धरम समाई।
सतगुरु मेरे किरपा कीन्ही, उत्तम बर परनाई;
अब मेरे साईंको सरम पड़ेगी, लेगा चरन लगाई॥
तैं जानराय मैं बाली भोली, तैं निर्मल मैं मैली;
तैं बतरावै, मैं बोल न जानूँ, भेद न सकूँ सहेली॥
तैं ब्रह्म-भाव मैं आतम-कन्या, समझ न जानूँ बानी;
'दरिया' कहै, पति पूरा पाया, यह निश्चय करि जानी॥

(७८६) राग देस—ताल तिताला

पतिब्रता पति मिली है लाग, जहँ गगन-मँडलमें परमभाग॥
जहँ जल बिन कँवला बहु अनंत, जहँ बपु बिनु भौंरा गुंजरंत।
अनहद बानी जहँ अगम खेल, जहँ दीपक जरै बिन बाती तेल॥
जहँ अनहद-सबद है कहत घोर, बिनु मुख बोले चात्रिक मोर।
जहँ बिन रसना गुन बदति नारि, बिन पग पातर निरतकारि॥
जहँ जल बिन सरवर भरा पूर, जहँ अनंत जोत बिन चंद-सूर।
बारह मास जहँ रितु बसंत, धरैं ध्यान जहँ अनँत संत॥

त्रिकुटी सुखमन जहँ चुवत छीर, बिन बादल बरसै मुक्ति नीर।
अमरत-धारा जहँ चलै सीर, कोई पीवै बिरला संत धीर॥
ररंकार धुन अरूप एक, सुरत गही उनहीकी टेक।
जन 'दरिया' बैराट चूर, जहँ बिरला पहुँचे संत सूर॥

(७८७) राग आसा—ताल तिताला

संतो कहा गृहस्थ कहा त्यागी।
जेहि देखूँ तेहि बाहर-भीतर, घट-घट माया लागी॥
माटीकी भीत, पवनका थंभा, गुन औगुनसे छाया;
पाँच तत्त आकार मिलाकर, सहजैं गिरह बनाया॥
मन भयो पिता, मनसा भई माई, दुख-सुख दोनों भाई;
आसा-तृस्ना बहनें मिलकर, गृहकी सौंज बनाई॥
मोह भयो पुरुष, कुबुद्धि भई घरनी, पाँचों लड़का जाया;
प्रकृति अनंत कुटुम्बी मिलकर कलहल बहुत मचाया॥
लड़कोंके सँग लड़की जाई, ताका नाम अधीरी;
बनमें बैठी घर-घर डोलै, स्वारथ-संग खपी री॥
पाप-पुण्य दोउ पार-पड़ोसी, अनँत बासना नाती;
राग-द्वेषका बंधन लागा, गिरह बना उतपाती॥
कोइ गृह माँड़ि गिरहमें बैठा, बैरागी बन बासा;
जन 'दरिया' इक राम भजन बिन घट-घटमें घर बासा॥

(७८८) राग भैरवी—ताल कहरवा

सब जग सोता सुध नहिं पावै, बोलै सो सोता बरड़ावै॥
संसय मोह भरमकी रैन, अंध धुंध होय सोते ऐन।
जप तप संजय औ आचार, यह सब सुपनेके ब्यौहार॥
तीर्थ दान जग प्रतिमा-सेवा, यह सब सुपना-लेवा-देवा।
कहना-सुनना, हार औ जीत, पछा-पछी सुपनो बिपरीत॥
चार बरन और आश्रम चार, सुपना अंतर सब ब्यौहार।
षट दरसन आदी भेद-भाव, सुपना-अंतर सब दरसाव॥

राजा राना तप बलवंता, सुपना माहीं सब बरतंता।
पीर औलिया सबै सयाना, ख्वाबमाहिं बरतें निधि नाना॥
काजी सैयद औ सुलताना, ख्वाबमाहिं सब करत पयाना।
सांख्य, जोग औ नौधा भकती, सुपनामें इनकी इक बिरती॥
काया-कसनी दया औ धर्म सुपने सूर्ग औ बंधन कर्म।
काम क्रोध हत्या पर-नास, सुपनामाहीं नरक निवास॥
आदि भवानी संकर देवा, यह सब सुपना देवा-लेवा।
ब्रह्मा बिस्नू दस औतार, सुपना-अंतर सब ब्यौहार॥
उद्भिज सेदज जेरज अंडा, सुपन रूप बरतै ब्रह्मंडा।
उपजै बरतै अरु बिनसावै, सुपने-अंतर सब दरसावै॥
त्याग-ग्रहन सुपना-ब्यौहारा, जो जागा सो सबसे न्यारा।
जो कोई साध जागिया चावै, सो सतगुरुके सरनै आवै॥
कृत-कृतबिरला जोगसभागी, गुरुमुख चेत सब्द मुखजागी।
संसय मोह भरम निसि नास, आतमराम सहज परकास॥
राम सँभाल सहज धर ध्यान, पाछे सहज प्रकासै ज्ञान।
जन 'दरियाव' सोइ बड़भागी, जाकी सुरत ब्रह्म सँग लागी॥

(७८९) राग दरबारी कान्हरा—ताल तिताला

आदि अनादी मेरा साईं॥
दृष्ट न मुष्ट है, अगम, अगोचर, यह सब माया उनहीं माईं।
जो बनमाली सीचै मूल, सहजै पिवै डाल फल फूल॥
जो नरपतिको गिरह बुलावै, सेना सकल सहज ही आवै।
जो कोई कर भानु प्रकासै, तौ निसि तारा सहजहि नासै॥
गरुड़-पंख जो घरमें लावै, सर्प जाति रहने नहिं पावै।
'दरिया' सुमरौ एकहि राम, एक राम सारै सब काम॥

(७९०) राग काफी—ताल तिताला

जो सुमिरूँ तौं पूरन राम,
अगम अपार, पार नहिं जाको, है सब संतनका बिसराम।
कोटि बिस्नु जाके अगवानी, संख चक्र सत सारँगपानी॥
कोटि कारकुन बिधि कर्मधार, परजापति मुनि बहु बिस्तार।
कोटि काल संकर कोतवाल, भैरव दुर्गा धरम बिचार॥
अनंत संत ठाढ़े दरबार, आठ सिधि नौ निधि द्वारपाल।
कोटि बेद जाको जस गावैं, विद्या कोटि जाको पार न पावैं॥
कोटि अकास जाके भवन दुवारे, पवन कोटि जाके चँवर ढुरावै।
कोटि तेज जाके तपै रसोय, बरुन कोटि जाके नीर समोय॥
पृथी कोटि फुलबारी गंध, सुरत कोटि जाके लाया बंध।
चंद सूर जाके कोटि चिराग, लक्ष्मी कोटि जाके राँधै पाग॥
अनंत संत और खिलवत खाना, लख-चौरासी पलै दिवाना।
कोटि पाप काँपैं बल छीन, कोटि धरम आगे आधीन॥
सागर कोटि जाके कलसधार, छपन कोटि जाके पनिहार।
कोटि सन्तोष जाके भरा भंडार, कोटि कुबेर जाके मायाधार॥
कोटि स्वर्ग जाके सुखरूप, कोटि नर्क जाके अंधकूप।
कोटि करम जाके उत्पतिकार, किला कोटि बरतावनहार॥
आदि अंत मद्ध नहिं जाको, कोई पार न पावै ताको।
जन दरियाका साहब सोई, तापर और न दूजा कोई॥

(७९१) राग भीमपलासी—ताल तिताला

चल-चल रे हंसा, राम-सिंध, बागड़में क्या तू रह्यो बन्ध॥
जहँ निर्जल धरती, बहुत धूर, जहँ साकित बस्ती दूर-दूर।
ग्रीषम ऋतुमें तपै भोम, जहँ आतम दुखिया रोम-रोम॥
भूख प्यास दुख सहै आन, जहँ मुक्ताहल नहि खान-पान।
जउवा नारू दुखित रोग, जहँ मैं तैं बानी हरष-सोग॥
माया बागड़ बरनी येह, अब राम-सिन्ध बरनूँ सुन लेह।
अगम अगोचर कथ्या न जाय, अब अनुभवमाहीं कहूँ सुनाय॥

अगम पंथ है राम-नाम, गिरह बसौ जाय परम धाम।
मानसरोवर बिमल नीर, जहँ हंस-समागम तीर-तीर॥
जहँ मुक्ताहल बहु खान-पान, जहँ अवगत तीरथ नित सनान।
पाप-पुन्यकी नहीं छोत, जहँ गुरु-सिष-मेला सहज होत॥
गुन इन्द्री मन रहे थाक, जहँ पहुँच न सकते बेद-बाक।
अगम देस जहँ अभयराय, जन दरिया, सुरत अकेली जाय॥

(७९२) राग सावनी कल्याण—ताल तिताला

चल चल रे सुआ तेरे आदराज, पिंजरामें बैठा कौन काज?
बिल्लीका दुख दहै जोर, मारै पिंजरा तोर-तोर॥
मरने पहले मरो धीर, जो पाछे मुक्ता सहज छीर।
सतगुरु-सब्द हृदैमें धार, सहजाँ-सहजाँ करो उचार॥
प्रेम-प्रवाह धसै जब आभ, नाद प्रकासै परम लाभ।
फिर गिरह बसाओ गगन जाय, जहँ बिल्ली मृत्यु न पहुँचै आय॥
आम फलै जहँ रस अनन्त, जहँ सुखमें पाओ परम तन्त।
झिरमिर-झिरमिर बरसै नूर, बिन कर बाजै तालतूर॥
जग दरिया आनन्द पूर, जहँ बिरला पहुँचै भाग भूर।

(७९३) राग भूपाली—ताल तिताला

नाम बिन भाव करम नहिं छूटै।
साध-संग और राम-भजन बिनु, काल निरन्तर लूटै॥
मलसेती जो मलको धोवै, सो मल कैसे छूटै?
प्रेमका साबुन नामका पानी, दोय मिल ताँता टूटै॥
भेद-अभेद भरमका भाँड़ा, चौड़े, पड़-पड़ फूटै।
गुरुमुख-सब्द गहै उर-अंतर, सकल भरमसे छूटै॥
रामका ध्यान तू धर रे प्रानी, अमरतका मेह बूटै।
जन दरियाव, अरप दे आपा, जरा-मरन तब टूटै॥

(७९४) राग भैरवी—ताल चर्चरी

दुनियाँ भरम भूल बौराई।
आतमराम सकल घट भीतर, जाकी सुद्ध न पाई॥
मथुरा कासी जाय द्वारिका, अरसठ तीरथ न्हावै।
सतगुरु बिन सोधा नहिं कोई, फिर-फिर गोता खावै॥
चेतन मूरत जड़को सेवै बड़ा थूल मत गैला।
देह-अचार किया कहा होई, भीतर है मन मैला॥
जप-तप-संजम काया-कसनी, सांख्य जोगब्रत दाना।
यातें नहीं ब्रह्मसे मेला, गुनहर करम बँधाना॥
बकता ह्वै ह्वै कथा सुनावै, स्रोता सुन घर आवै।
ज्ञान ध्यानकी समझ न कोई, कह-सुन जनम गँवावै॥
जन दरिया, यह बड़ा अचंभा, कहे न समझै कोई।
भेड़-पूँछ गहि सागर लाँघै, निस्चय डूबै सोई॥

(७९५) राग त्रिवेनी—ताल तिताला

मैं तोहि कैसे बिसरूँ देवा!
ब्रह्मा बिस्नु महेसुर ईसा, ते भी बंछै सेवा॥
सेस सहस मुख निसिदिन ध्यावै आतम ब्रह्म न पावै।
चाँद सूर तेरी आरति गावैं, हिरदय भक्ति न आवै॥
अनन्त जीव तेरी करत भावना, भरमत बिकल अयाना।
गुरु-परताप अखंड लौ लागी, सो तोहि माहि समाना॥
बैकुंठ आदि सो अंग मायाका, नरक अन्त अँग माया।
पारब्रह्म सो तो अगम अगोचर, कोइ बिरला अलख लखाया॥
जन दरिया, यह अकथ कथा है, अकथ कहा क्या जाई।
पंछीका खोज, मीनका मारग, घट-घट रहा समाई॥

(७९६) राग केदारा—ताल दीपचंदी

जीव बटाऊ रे बहता मारग माईं।
आठ पहरका चालना, घड़ी इक ठहरै नाईं॥
गरभ जनम बालक भयो रे, तरुनाई गरबान।
बृद्ध मृतक फिर गर्भबसेरा, यह मारग परमान॥
पाप-पुन्य सुख-दुःखकी करनी, बेड़ी थारे लागी पाँय।
पंच ठगोंके बसमें पड़ो रे, कब घर पहुँचै जाय॥
चौरासी बासो तू बस्यो रे, अपना कर-कर जान।
निस्चय निस्चल होयगो रे, तूँ पद पहुँचै निर्बान॥
राम बिना तोको ठौर नहीं रे, जहँ जावै तहँ काल।
जन दरिया मन उलट जगतसूँ, अपना राम सँभाल॥

(७९७) राग नट बिलावल—ताल तिताला

है कोई संत राम अनुरागी, जाकी सुरत साहबसे लागी।
अरस-परस पिवके सँग राती, होय रही पतिबरता॥
दुनियाँ भाव कछू नहिं समझै, ज्यों समुँद समानी सरिता।
मीन जाय करि समुँद समानी, जहँ देखै तहँ पानी॥
काल कीरका जाल न पहुँचे, निर्भय ठौर लुभानी।
बावन चन्दन भौंरा पहुँचा, जहँ बैठे तहँ गन्धा॥
उड़ना छोड़के थिर ह्वै बैठा, निसिदिन करत अनन्दा।
जन दरिया, इक राम-भजन कर भरम बासना खोई॥
पारस परसि भया लोहकंचन, बहुरि न लोहा होई।

(७९८) राग माँड—ताल कहरवा

मुरली कौन बजावै हो, गगन-मँडलके बीच॥
त्रिकुटी-संगम होयकर, गंग-जमुनके घाट।
या मुरलीके सब्दसे, सहज रचा बैराट॥
गंग-जमुन-बिच मुरली बाजै, उत्तम दिसि धुन होहि।
वा मुरलीको टेरहिं सुन-सुन रहीं गोपिका मोहि॥

जहँ अधर डाली हंसा बैठा, चूगत मुक्ता हीर।
आनँद चकवा केल करत है, मानसरोवर-तीर॥
सब्द धुन मिरदंग बजत है; बारह मास बसंत।
अनहद ध्यान अखंड आतुर वे, धारत सब ही संत॥
कान्ह गोपी करत नृत्यहिं, चरन बपु ही बिना।
नैन बिन 'दरियाव' देखै, आनँदरूप घना॥

(७९९) राग गौड़ सारंग—ताल तिताला

ऐसा साधू करम दहै॥
अपना राम कबहुँ नहिं बिसरै, बुरी-भली सब सीस सहै।
हस्ती चलै भूकै बहु कूकर, ताका औगुन उर न गहै;
वाकी कबहूँ मन नहिं आनै, निराकारकी ओट रहै।
धनको पाय भया धनवन्ता, निरधन मिल उन बुरा कहै;
वाकी कबहुँ न मनमें लावै, अपने धन सँग जाय रहै॥
पतिको पाय भई पतिबरता, बहु बिभचारिन हाँसि करै;
वाकै संग कबहुँ नहिं जावै, पतिसे मिलकर चिता जरै।
'दरिया' राम भजै सो साधू, जगत भेष उपहास करै;
वाको दोष न अन्तर आनै, चढ़ नाम-जहाज भव-सिन्धु तरै॥

(८००) राग ललित—ताल चर्चरी

साहब मेरे राम हैं, मैं उनकी दासी;
जो बान्या सो बन रह्या, आज्ञा अबिनासी।
अरध उरध षट कँवल बिच, करतार छिपाया;
सतगुरु मिल किरपा करी, कोइ बिरले पाया।
तीन लोक, चौदह भुवन, केवल वह भरपूरा;
हाजिराँसे हाजिर सदा, वह दूराँसे दूरा।
पाप-पुन्य दोउ रूप हैं, उनहींकी माया;
साधनके बरतन सदा, भरमै भरमाया।
जन 'दरिया' इक राम भज, भजबेकी बारा;
जिन यह भार उठाइया, उनके सिर भारा।

(८०१) राग पीलू—ताल चर्चरी

अमृत नीका, कहै सब कोई, पिये बिना अमर नहिं होई।
कोइ कहै, अमृत बसै पताल, नर्क अन्त नित ग्रासै काल॥
कोइ कहै, अमृत समुन्दर माहीं, बड़वा अगिनि क्यों सोखत ताहीं ?
कोइ कहै, अमृत ससिमें बास, घटै-बढ़ै क्यों होइहै नास ?
कोइ कहै, अमृत सुरगाँ, माहिं, देव पियें क्यों खिर-खिर जाहिं ?
सब अमृत बातोंका बात, अमृत है संतनके साथ।
'दरिया' अमृत नाम अनंत, जाको पी-पी अमर भये संत॥

(८०२) राग काफी—ताल तिताला

साधो, अलख निरंजन सोई।
गुरु परताप राम-रस निर्मल, और न दूजा कोई॥
सकल ज्ञानपर ज्ञान दयानिधि, सकल जोतिपर जोती।
जाके ध्यान सहज अघ नासै, सहज मिटै जम छोती॥
जाकी कथाके सरवनतें ही, सरवन जागत होई।
ब्रह्मा-बिस्नु-महेस अरु दुर्गा, पार न पावै कोई॥
सुमिर-सुमिर जन होइहैं राना, अति झीना-से-झीना।
अजर, अमर, अच्छय, अबिनासी, महा बीन परबीना॥
अनंत संत जाके आस-पिआसा, अगन मगन चिर जीवैं।
जन 'दरिया' दासनके दासा, महाकृपा-रस पीवैं॥

(८०३) राग खम्बावती—ताल कहरवा

राम-नाम नहिं हिरदै धरा, जैसा पसुवा तैसा नरा॥
पसुवा-नर उद्यम कर खावै, पसुवा तो जंगल चर आवै।
पसुवा आवै पसुवा जाय, पसुवा चरै औ पसुवा खाय॥
राम-नाम ध्याया नहिं माई, जनम गया पसुवाकी नाई।
राम-नामसे नाहीं प्रीत, यह सब ही पशुओंकी रीत॥
जीवत सुख-दुखमें दिन भरै, मुवा पछे चौरासी परै।
जन 'दरिया' जिन राम न ध्याया, पसुवा ही ज्यों जनम गँवाया॥

(८०४) राग बिहाग—ताल तिताला

साधो, हरि-पद कठिन कहानी।
काजी पण्डित मरम न जानै,
कोइ-कोइ बिरला जानी॥
अलहको लहना, अगहको गहना,
अजरको जरना, बिन मौत मरना।
अधरको धरना, अलखको लखना,
नैन बिन देखना, बिनु पानी घट भरना॥
अमिलसूँ मिलना, पाँव बिन चलना,
बिन अगिनके दहना, तीरथ बिन न्हावना।
पन्थ बिन जावना, बस्तु बिनु पावना,
बिन गेहके रहना, बिना मुख गावना॥
रूप न रेख, बेद नहिं सिमृति,
नहिं जाति बरन कुल-काना।
जन 'दरिया' गुरुगमतें पाया,
निरभय पद निरबाना॥

(८०५) राग मियाँकी टोड़ी—ताल तिताला

साधो, राम अनूपम बानी।
पूरा मिला तो वह पद पाया, मिट गई खैंचातानी॥
मूल चाँप दृढ़ आसन बैठा, ध्यान धनीसे लाया।
उलटा नाद कँवलके मारग, गगना माहिं समाया॥
गुरुके सब्दकी कूंजी सेती, अनंत कोठरी खोली।
ध्रू के लोकपै कलस बिराजै, ररंकार धुन बोली॥
बसत अगाध अगम सुख-सागर, देख सुरत बौराई।
बस्तु घनी, पर बरतन ओछा, उलट अपूठी आई॥
सुरत सब्द मिल परचा हुआ, मेरु मद्धका पाया।
तामें पैसा गगनमें आया, जायके अलख लखाया॥

पग बिन पातुर, कर बिन बाजा, बिन मुख गावैं नारी।
बिन बादल जहँ मेहा बरसै, ढुमक-ढुमक सुख क्यारी॥
जन दरियाव, प्रेम गुन गाया, वह मेरा अरट चलाया।
मेरुदंड होय नाल चली है, गगन-बाग जहँ पाया॥

(८०६) राग माँड—ताल चर्चरी

राम भरोसा राखिये, ऊनित नहिं काई।
पूरनहारा पूरसी, कलपै मत भाई!
जल दिखै आकाससे कहो कहाँसे आवै?
बिन जतना ही चहुँ दिसा, दह चाल चलावै।
चात्रिक भू-जल ना पिवै, बिन अहार न जीवै।
हर वाहीको पूरवै, अन्तरगत पीवै।
राजहंस मुकता चुगै, कछु गाँठ न बाँधै,
ताको साहब देत है, अपनों ब्रत साधै।
गरभ-बासमें जाय करि, जिव उद्यम न करही;
जानराय जानै सबै, उनको वहिं भरही।
तीन लोक चौदह भुवन, करै सहज प्रकासा।
जाके सिर समरथ धनी, सोचै क्या दासा?
जबसे यह बाना बना, सब समझ बनाई।
'दरिया' बिकलप मैटिके, भज राम सहाई॥

(८०७) राग झँझौटी—ताल कहरवा

सतगुरुसे सब्द ले, रसना रटन कर,
हिरदेमें आनकर ध्यान लावै।
षट—कँवल बेधकर, नाभि-कँवल छेदकर,
कामको लोप पाताल जावै॥
जहँ साँईकौ सीस ले, जमके सिर पाँव दे,
मेरु मध होय आकास आवै।
अगम है बाग जहँ, निगम गुल खिल रहा,
दास दरियाव, दीदार पावै॥

❑ ❑

ताज

(८०८) राग देवगंधार—ताल तिताला

छैल जो छबीला, सब रंगमें रँगीला, बड़ा
चित्तका अड़ीला, कहूँ देवतोंसे न्यारा है।
माल गले सोहै, नाक-मोती सेत जो है, कान
कुंडल मन मोहै, लाल मुकुट सिर धारा है॥
दुष्ट जन मारे, सब संत जो उबारे, 'ताज'
चित्तमें निहारै प्रन प्रीति करनवारा है।
नंदजूका प्यारा, जिन कंसको पछारा, वह
वृन्दावनवारा, कृष्ण साहब हमारा है॥

(८०९) राग देस—ताल तिताला

ध्रुवसे, प्रहलाद, गज ग्राहसे अहिल्या देखि,
सौंरी और गीध यौं विभीषन जिन तारे हैं।
पापी अजामील, सूर, तुलसी, रैदास कहूँ,
नानक, मलूक, 'ताज' हरिही के प्यारे हैं॥
धनी नामदेव, दादू, सदना कसाई जानि,
गनिका, कबीर, मीरा, सेन उर धारे हैं।
जगतकौ जीवन जहान बीच नाम सुन्यौ,
राधाके बल्लभ कृष्ण बल्लभ हमारे हैं॥

(८१०) राग नट मल्हार—ताल तिताला

कोऊ जन सेवै शाह राजा राव ठाकुरकों,
कोऊ जन सेवैं भैरों भूप काजसार हैं।
कोऊ जन सेवैं देवी चंडिका प्रचंडहीकों,
कोऊ जन सेवैं 'ताज' गनपति सिरभार हैं॥
कोऊ जन सेवैं प्रेत-भूत भवसागरकों,
कोऊ जन सेवैं जग कहूँ बार-बार हैं।
काहूके ईस बिधि संकरको नेम बड़ो,
मेरे तौ अधार एक नन्दके कुमार हैं॥

(८११) राग काफी—ताल तिताला

साहब सिरताज हुआ नन्दजूका आप पूत,
मार जिन असुर करी काली सिर छाप है।
कुन्दनपुर जायकैं सहाय करी भीषमकी,
रुकमिनीकी टेक राखी लगी नहिं खाप है॥
पांडवकी पच्छ करी द्रौपदी बढ़ाय चीर,
दीन-से सुदामाकी मेटी जिन ताप है।
निहचै करि सोधि लेहु ज्ञानी गुनवान बेगि,
जगमें अनूप मित्र कृष्णका मिलाप है॥

(८१२) राग दरबारी—ताल तिताला

सुनो दिलजानी मेरे दिलकी कहानी तुम,
दस्त ही बिकानी बदनामी भी सहूँगी मैं।
देवपूजा ठानी मैं निवाजहू भुलानी, तजे
कलमा-कुरान साड़े गुननि गहूँगी मैं॥
साँवला सलोना सिरताज सिर कुल्ले दिये,
तेरे नेह दागमें निदाघ ह्वै दहूँगी मैं।
नंदके कुमार, कुरबान तेरी सूरत पै,
हौं तौ मुगलानी हिंदुवानी ह्वै रहूँगी मैं॥

❑ ❑

शेष

(८१३) राग सूहा—ताल तिताला

मिटि गयो मौन, पौन-साधनकी सुधि गई,
भूली जोग-जुगति, बिसार्‌यो तप बनकौ॥
'शेष' प्यारे मनकौ उज्यारौ भयो प्रेम नेम,
तिमिर अज्ञान गुन नास्यो बालपनकौ॥
चरनकमलहीकी लोचनमें लोच धरी,
रोचन ह्वै राच्यो, सोच मिट्यो धाम धनकौ॥
सोक लेस नेकहूँ, कलेसकौ न लेस रह्यौ,
सुमरि श्रीगोकलेस गो कलेस मनकौ॥

❑ ❑

नजीर

(८१४) राग बहार—ताल दादरा

(१)

यारो, सुनो य दधिके लुटैयाका बालपन,
औ मधुपुरी नगरके बसैयाका बालपन।
मोहन सरूप नृत्य-करैयाका बालपन,
बन-बनके ग्वाल गौवें चरैयाका बालपन॥
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(२)

जाहिरमें सुत वो नंद जसोदाके आप थे,
बरना वो आपी माई थे और आपी बाप थे।
परदेमें बालपनके ये उनके मिलाप थे,
जोती-सरूप कहिये जिन्हें सो वो आप थे॥

ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(३)

उनको तो बालपनसे न था काम कुछ जरा,
संसारकी जो रीत थी उसको रखा बजा।
मालिक थे वह तो आपी, उन्हें बालपनसे क्या?
वाँ बालपन, जवानी, बुढ़ापा सब एक था।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(४)

बाले थे बिर्जराज, जो दुनियाँमें आ गये,
छीलाके लाख रंग तमासे दिखा गये।
इस बालपनके रूपमें कितनोंको भा गये,
एक यह भी लहर थी जो जहाँको जता गये।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(५)

परदा न बालपनका वो करते अगर जरा,
क्या ताब थी जो कोई नजर भरके देखता।
झाड़ औ पहाड़ देते सभी अपना सर झुका,
पर कौन जानता था जो कुछ उनका भेद था।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन।

(६)

अब घुटनियोंका उनके मैं चलना बयाँ करूँ?
या मीठी बातें मुँहसे निकलना बयाँ करूँ?
या बालकोंमें इस तरह पलना बयाँ करूँ?

या गोदियोंमें उनका मचलना बयाँ करूँ ?
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(७)

पाटी पकड़के चलने लगे जब मदनगोपाल,
धरती तमाम हो गयी एक आनमें निहाल।
बासुकि चरन छुअनको चले छोड़के पताल,
आकासपर भी धूम मची देख उनकी चाल।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(८)

करने लगे ये धूम जो गिरधारी नंदलाल,
इक आप और दूसरे साथ उनके ग्वाल-बाल।
माखन दही चुराने लगे सबके देखभाल,
दी अपनी दूध चोरीकी घर-घरमें धूम डाल।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(९)

कोठेमें होवे फिर तो उसीको ढँढोरना,
मटका हो तो उसीमें भी जा मुखको बोरना।
ऊँचा हो तो भी कंधेपै चढ़के न छोड़ना,
पहुँचा न हाथ तो उसे मुरलीसे फोड़ना।
ऐसा था, बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(१०)

गर चोरी करते आ गई ग्वालिन कोई वहाँ,
औ उसने आ पकड़ लिया तो उससे बोले वाँ।
मैं तो तेरे दहीकी उड़ाता था मक्खियाँ,
खाता नहीं मैं उसको निकाले था चींटियाँ।
ऐसा था बासुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(११)

गुस्सेमें कोई हाथ पकड़ती जो आनकर,
तो उसको वह स्वरूप दिखाते थे मुर्लीधर।
जो आपी लाके धरती वो माखन कटोरीभर,
गुस्सा वो उसका आनमें जाता वहाँ उतर।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(१२)

उनको तो देख ग्वालिनें जो जान पाती थीं,
घरमें इसी बहानेसे उनको बुलाती थीं।
जाहिरमें उनके हाथसे वे गुल मचाती थीं,
परदे सबी वो कृष्णकी बलिहारी जाती थीं।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(१३)

कहती थीं दिलमें, दूध जो अब हम छिपायेंगे,
श्रीकृष्ण इसी बहाने हमें मुँह दिखायँगे।
और जो हमारे घरमें ये माखन न पायँगे,
तो उनको क्या गरज है वो काहेको आयँगे।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(१४)

सब मिल जसोदा पास यह कहती थीं आके बीर,
अब तो तुम्हारा कान्हा हुआ है बड़ा शरीर।
देता है हमको गालियाँ, औ फाड़ता है चीर,
छोड़े दही न दूध, न माखन मही न खीर।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(१५)

माता जसोदा उनकी बहुत करतीं मिंतियाँ,
औ कान्हको डरातीं उठा मनकी साँटियाँ।
तब कान्हजी जसोदासे करते यही बयाँ,
तुम सच न मानो मैया ये सारी हैं झूठियाँ।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(१६)

माता, कभी ये मुझको पकड़कर ले जाती हैं,
औ गाने अपने साथ मुझे भी गवाती हैं।
सब नाचती हैं आप मुझे भी नचाती हैं,
आपी तुम्हारे पास ये फरियादी आती हैं।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(१७)

मैया, कभी ये मेरी छगुलिया छिपाती हैं,
जाता हूँ राहमें तो मुझे छेड़े जाती हैं।
आपी मुझे रुठाती हैं आपी मनाती हैं,
मारो इन्हें ये मुझको बहुत-सा सताती हैं।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(१८)

इक रोज़ मुँहमें कान्हने माखन छिपा लिया,
पूछा जसोदाने तो वहाँ मुँह बना दिया।
मुँह खोल तीन लोकका आलम दिखा दिया,
इक आनमें दिखा दिया और फिर भुला दिया।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(१९)

थे कान्हजी तो नंद-जसोदाके घरके माह,
मोहन नवलकिशोरकी थी सबके दिलमें चाह।
उनको जो देखता था, सो करता था वाह वाह,
ऐसा तो बालपन न किसीका हुआ है आह।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(२०)

राधारमनके यारो अजब जाये गौर थे,
लड़कोंमें वो कहाँ हैं जो कुछ उनमें तौर थे।
आपी वो प्रभु नाथ थे आपी वो दौर थे,
उनके तो बालपनहीमें तेवर कुछ और थे।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(२१)

होता है यों तो बालपन हर तिफ्लका भला,
पर उनके बालपनमें तो कुछ औरी भेद था।
इस भेदकी भला जो किसीको खबर है क्या,
क्या जाने अपनी खेलने आये थे क्या कला।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(२२)

सब मिलके यारो, कृष्णमुरारीकी बोलो जै,
गोबिंद-कुंज-छैल-बिहारीकी बोलो जै।
दधिचोर गोपीनाथ, बिहारीकी बोलो जै,
तुम भी 'नजीर' कृष्णमुरारीकी बोलो जै।
ऐसा था बाँसुरीके बजैयाका बालपन,
क्या-क्या कहूँ मैं कृष्ण-कन्हैयाका बालपन॥

(८१५) राग पीलू—ताल कहरवा

(१)

जब मुरलीधरने मुरलीको अपने अधर धरी,
क्या-क्या परेम-प्रीत-भरी उसमें धुन भरी।
लै उसमें 'राधे-राधे' की हरदम भरी खरी,
लहराई धुन जो उसकी इधर औ उधर जरी।
सब सुननेवाले कह उठे जै जै हरी हरी,
ऐसी बजाई कृष्ण-कन्हैयाने बाँसुरी॥

(२)

ग्वालोंमें नंदलाल बजाते वो जिस घड़ी,
गौएँ धुन उसकी सुननेको रह जातीं सब खड़ी।
गलियोंमें जब बजाते तो वह उसकी धुन बड़ी,
ले-लेके अपनी लहर जहाँ कानमें पड़ी।
सब सुननेवाले कह उठे जै जै हरी हरी,
ऐसी बजाई कृष्ण-कन्हैयाने बाँसुरी॥

(३)

मोहनकी बाँसुरीके मैं क्या-क्या कहूँ जतन,
ले उसकी मनकी मोहिनी धुन उसकी चितहरन।
उस बाँसुरीका आनके जिस जा हुआ वजन,
क्या जल, पवन, 'नजीर' पखेरू व क्या हरन—
सब सुननेवाले कह उठे जै जै हरी हरी,
ऐसी बजाई कृष्ण-कन्हैयाने बाँसुरी॥

(८१६) राग धनाश्री—ताल तिताला

(१)

हैं आशिक और माशूक जहाँ वाँ शाह वजीरी है बाबा!
नै रोना है, नै धोना है, नै दर्दे असीरी है बाबा!
दिन-रात बहारें-चोहलें हैं, औ ऐसे सफीरी है बाबा!
जो आशिक हुए सो जानै हैं, यह भेद फकीरी है बाबा!
हर आन हँसी, हर आन खुशी, हर वक्त अमीरी है बाबा!
जब आशिक़ मस्त फक़ीर हुए, फिर क्या दिलगीरी है बाबा!

(२)

कुछ जुल्म नहीं, कुछ जोर नहीं, कुछ दाद नहीं, फरियाद नहीं।
कुछ कैद नहीं, कुछ बंद नहीं, कुछ जब्र नहीं, आजाद नहीं॥
शागिर्द नहीं, उस्ताद नहीं, बीरान नहीं, आबाद नहीं।
हैं जितनी बातें दुनियाँकी, सब भूल गये कुछ याद नहीं॥
हर आन हँसी, हर आन खुशी, हर वक्त अमीरी है बाबा!
जब आशिक़ मस्त फक़ीर हुए, फिर क्या दिलगीरी है बाबा!

(३)

जिस सिम्त नजर कर देखें हैं, उस दिलवर की फुलवारी है।
कहीं सब्जीकी हरियाली है, कहीं फूलों की गुलक्यारी है॥
दिन-रात मगन खुस बैठे हैं और आस उसी की भारी है।
बस, आप ही वो दातारी है, और आप ही वो भंडारी है॥
हर आन हँसी, हर आन खुशी, हर वक्त अमीरी है बाबा!
जब आशिक़ मस्त फक़ीर हुए, फिर क्या दिलगीरी है बाबा!

(४)

हम चाकर जिसके हुस्नके हैं, वह दिलवर सबसे आला है।
उसने ही हमको जी बख्शा, उसने ही हमको पाला है॥
दिल अपना भोला-भाला है, और इश्क बड़ा मतवाला है।
क्या कहिये और 'नजीर' आगे, अब कौन समझनेवाला है?
हर आन हँसी, हर आन खुशी, हर वक्त अमीरी है बाबा!
जब आशिक़ मस्त फक़ीर हुए, फिर क्या दिलगीरी है बाबा!

(८१७) राग कजरी—ताल तिताला

(१)

क्या इल्म उन्होंने सीख लिये, जो बिन लेखेंको बाँचे हैं।
और बात नहीं मुँहसे निकले, बिन होंठ हिलाये जाँचे हैं॥
दिल उनके तार सितारोंके, तन उनके तबल तमाँचे हैं।
मुँहचंग जबा दिल सारंगी, पा घुँघरू हाथ कमाँचे हैं॥
हैं राग उन्हींके रंग-भरे, और भाव उन्हींके साँचे हैं।
जो बे-गत बे-सुरताल हुए, बिन ताल पखावज नाचे हैं॥

(२)

जब हाथको धोया हाथोंसे, जब हाथ लगे थिरकानेको।
और पाँवको खींचा पाँवोंसे, और पाँव लगे गत पानेको॥
जब आँख उठाई हस्तीसे, जब नयन लगे मटकानेको।
सब काछ कछे, सब नाच नचे, उस रसिया छैल रिझानेको॥
हैं राग उन्हींके रंग-भरे, औ भाव उन्हींके साँचे हैं।
जो बे-गत बे-सुरताल हुए, बिन ताल पखावज नाचे हैं॥

(३)

था जिसकी खातिर नाच किया, जब मूरत उसकी आय गई।
कहीं आप कहा, कहीं नाच कहा, औ तान कहीं लहराय गई॥
जब छैल-छबीले सुंदरकी, छबि नैनों भीतर छाय गई।
एक मुरछा-गत-सी आय गई, और जोतमें जोत समाय गई॥
हैं राग उन्हींके रंग-भरे, औ भाव उन्हींके साँचे हैं।
जो बे-गत बे-सुरताल हुए, बिन ताल पखावज नाचे हैं॥

(४)

सब होस बदनका दूर हुआ, जब गतपर आ मिरदंग बजी।
तन भंग हुआ, दिल दंग हुआ, सब आन गई बेआन सजी॥
यह नाचा कौन 'नजीर' अब याँ, और किसने देखा नाच अजी!
जब बूँद मिली जा दरियामें, इस तानका आखिर निकला जी॥
हैं राग उन्हींके रंग-भरे, औ भाव उन्हींके साँचे हैं।
जो बे-गत बे-सुरताल हुए, बिन ताल पखावज नाचे हैं॥

(८१८) राग बिहागरा—ताल दादरा

(१)

गर यारकी मर्जी हुई सर जोड़के बैठे।
घर-बार छुड़ाया तो वहीं छोड़के बैठे॥
मोड़ा उन्हें जिधर वहीं मुँह मोड़के बैठे।
गुदड़ी जो सिलाई तो वहीं ओढ़के बैठे॥
औ शाल उढ़ाई तो उसी शालमें खुश हैं।
पूरे हैं वही मर्द जो हर हालमें खुश हैं॥

(२)

गर खाट बिछानेको मिली खाटमें सोये।
दूकाँमें सुलाया तो वो जा हाटमें सोये॥
रस्तेमें कहा सो तो वह जा बाटमें सोये।
गर टाट बिछानेको दिया टाटमें सोये॥
औ खाल बिछा दी तो उसी खालमें खुश हैं।
पूरे हैं वही मर्द जो हर हालमें खुश हैं॥

(३)

उनके तो जहाँमें अजब आलम हैं नजीर आह!
अब ऐसे तो दुनियामें वली कम हैं नजीर आह!
क्या जाने, फरिश्ते हैं कि आदम हैं नजीर आह!
हर वक्तमें हर आनमें खुर्रम हैं नजीर आह!
जिस ढालमें रखा वो उसी ढालमें खुश हैं।
पूरे हैं वही मर्द जो हर हालमें खुश हैं॥

(८१९) राग मिश्रकाफी—ताल तिताला (द्रुतलय)

है बहारे बाग दुनिया चंदरोज, देख लो इसका तमाशा चंदरोज।
ऐ मुसाफिर कूचका सामान कर, इस जहाँमें है बसेरा चंदरोज॥
पूछा लुकमाँसे जिया तू कितने रोज? दस्त हसरतमलके बोला, चंदरोज।
बादे मदफन क़ब्रमें बोली कजा-अब यहाँ पै सोते रहना चंदरोज॥

फिर तुम कहाँ, औ मैं कहाँ ऐ दोस्तो! साथ है मेरा तुम्हारा चंदरोज।
क्या सताते हो दिले बेजुर्मको, जालिमो, है ये जमाना चंदरोज॥
याद कर तू ऐ नजीर! कबरोंके रोज, जिंदगीका है भरोसा चंदरोज।

❑ ❑

कारे खाँ

(८२०) राग झँझौटी—ताल तिताला

माफ किया मुलक़, मताह दी विभीषनको,
कही थी जुबान कुरबान ये करारकी।
बैठनेको ताइफ तखत दै तखत दिया,
दौलत बढ़ाई थी जुनारदार यारकी॥
तब क्या कहा था, अब सरफराज आप हुए,
जब कि अरज सुनी चिड़ीमार खारकी।
'कारे' के करारमाहिं क्यों न दिलदार हुए,
एरे नंदलाल? क्यों हमारी बार, बार की॥

(८२१) राग देस—ताल चर्चरी

छलबलकै थाक्यो अनेक गजराज भारी,
भयो बलहीन जब नेक न छुड़ा गयो।
कहिबेको भयो करुना की, कबि 'कारे' कहैं,
रही नेक नाक और सब ही डुबा गयो॥
पंकज-से पायन पयादे पलंग छाँडि,
पावरी बिसारि प्रभु ऐसी परि पा गयो।
हाथीके हृदयमाहिं आधो 'हरि' नाम सोय,
गरे जौं न आयो गरुड़ेस तौलों आ गयो॥

(८२२) राग झँझौटी—ताल तिताला

वृंदावन कीरति विनोद कुंज-कुंजनमें,
आनँदके कंद लाल मूरति गुपालकी।
कालीदह 'कारे' पताल पैठि नाग नाथ्यौ,
केतकीके फूल तोरि लाये माला हारकी॥

परसतहीं पूतना परमगति पाय गई,
पलकहीं पार पार्‌यो अजामील नारकी।
गीध गुन-गानहार, छाँछके उगानहार,
आई ना अहीर! क्या हमारी बार, बार की॥

❑ ❑

करीमबक्श

(८२३) राग सहाना—ताल चर्चरी

ऐ मेरे रब! तू पाप-हरैया, संकटमें किरपाका करैया।
मेरे रहीम! रहम कर साहब! मेरे करीम! करम कर साहब॥
मुझ पापीका पाप छुड़ाओ, डूबत नैया पार लगाओ।
झाँझरि नाव पतवार पुराना, यह डर मोरे हिये समाना॥
जो तुम सुध नहीं लैहो मोरी, बैरी माँझ मोहि दैहै बोरी।
दियो बैरि इक संग लगाये, जो सीधे पथ सों बहकाये॥
देत दोहाई हौं अब तोरी, होहु सहाय बिपतिमें मोरी।
ऐसी जून बियापी मोपर, कठिन काज छोड़ा है तोपर॥
आपन न्याव तुम्हींपर छाँड़ा, लाद चलेगा जब बंजाड़ा।
यह सब कुछ, पर आश है हमकू, हिय पूरन बिस्वास है हमकू॥
हमरी करनी सब बिसराई, दैहो बिगड़ो काज बनाई।
देत तुम्हीं औ दिलावत तुमहीं, मारो तुम्हीं औ जिलाओ तुमहीं॥
सब कुछ तज 'करीम' हौं तोको, ध्यावौं, होय न जासों धोको॥

(८२४) राग पीलू—ताल चर्चरी

कैसे तुम आ नैहरवा भुलानी। सइयाँका कहना कबहुँ नहिं मानी॥
काम कियो नित निज-मन-मानी, पियाकी सुधि काहे बिसरानी।
टेढ़ी चाल अजहुँ तज मूरख, चार दिनाकी यह जिंदगानी॥
मद-माती इठलात फिरति का, गोरी, का तेरे हियमें समानी।
गुन ढँगसों जो पियाको रिझावै, 'करीम' वही है सखी सयानी॥

(८२५) राग हुसेनी कान्हरा—ताल झप

ना जानों, पियासों कैसे होयँ बतियाँ।
उनके मनकी जुगति नहिं सीखी, यह जिय सोच रहै दिन रतियाँ॥
वहाँ न कोऊको कोऊ पूछत, सुन-सुन हाल फटति हैं छतियाँ।
और सखी पिया अपने मिलनकी करति 'करीम' हैं लाखन घतियाँ॥

❑ ❑

इन्शा

(८२६) राग काफी—ताल तिताला

जब छाड़ि करीलकी कुंजनकों, वहाँ द्वारकामें हरि जाय छये।
कलधौतके धाम बनाये घने, महराजनके महराज भये॥
तज मोरके पंख औ कामरिया, कछू औरहि नाते हैं जोड़ लये।
धरि रूप नये किये नेह नये, अब गइयाँ चराइबो भूल गये॥

❑ ❑

बाजिन्द

(८२७) राग देश—ताल चर्चरी

सुन्दर पाई देह नेह कर राम सों,
क्या लुब्धा बेकाम धरा धन धाम सों।
आतम-रंग-पतंग संग नहीं आवसी,
जमहू के दरबार, मार बहु खावसी॥ १॥
गाफिल मूढ़ गँवार अचेतन चेत रे!
समझै संत सुजान, सिखावन देत रे।
बिषया माँहि बिहाल लगा दिन रैन रे!
सिर बैरी यमराज, न सूझै नैन रे॥ २॥
दिल के अन्दर देख, कि तेरा कौन है,
चले न भोले! साथ, अकेला गौन है।
देख देह धन दार इनसे चित दिया,
रट्या न निसिदिन राम काम तैं क्या किया॥ ३॥

देह गेहमें नेह निवारे दीजिये,
राजी जासें राम काम सोइ कीजिये।
रह्या न बेसी कोय रंक अरु राव रे!
कर ले अपना काज, बन्या हद दाव रे॥ ४॥
बंछत ईस गनेस एइ नर-देहको,
श्रीपति-चरण-सरोज बढ़ावन नेह को।
सो नर-देही पाय अकाज न खोइए,
साईंके दरबार गुनाही होइए॥ ५॥
केती तेरी जान, किता तेरा जीवना?
जैसा स्वपन बिलास, तृषा जल पीवना।
ऐसे सुख के काज, अकाज कमावना।
बार-बार जम-द्वार मार बहु खावना॥ ६॥
नहिं है तेरा कोय, नहीं तू कोयका,
स्वारथका संसार बना दिन दोय का।
'मेरी-मेरी' मान फिरत अभिमान में,
इतराते नर मूढ़ एहि अज्ञानमें॥ ७॥
कूड़ा नेह-कुटुंब धनौ हित धायता,
जब घेरै जमराज करै को सहायता?
अंतर-फूटी, आँख, न सूझै आँधरे!
अजहूँ चेत अजान! हरी से साध रे!॥ ८॥
बार-बार नर देह कहो कित पाइए?
गोबिंद के गुन-गान कहो कब गाइए?
मत चूकै अवसान अबै तन माँ धरे,
पानी पहली पाळ अज्ञानी बाँध रे॥ ९॥
झूठा जग-जंजाल पड़्या तैं फंदमें,
छूटनकी नहिं करत, फिरत, आनन्दमें।

यामें तेरा कौन, समा जब अंतका,
उबरनका ऊपाय शरण इक संतका॥ १०॥
मंदिर माल बिलास खजाना मेड़ियाँ
राज-भोग-सुख-साज औ चंचल चेड़ियाँ।
रहता पास खबास हमेश हुजूरमें,
ऐसे लाख असंख्य गये मिल धूरमें॥ ११॥
मदमाते मगरूर वे मूँछ मरोड़ते,
नवल त्रिया का मोह छनक नहिं छोड़ते।
तीखे करते तरक, गरक मद पानमें,
गये पलक में ढलक तलब मैदानमें॥ १२॥
फूलाँ सेज बिछायक तापर पोढ़ते,
ओछे दुपटे साल दुसाले ओढ़ते।
लेके दर्पण हाथ नीके मुख जोवते,
ले गये दूत उपाड़, रहे सब रोवते॥ १३॥
अत्तर तेल फूलेल लगाते अंगमें,
अंध-धुंध दिन-रैन तियाके संगमें।
महल अबासा बैठ करंता मौज रे!
ऐसे गये अपार मिला नहिं खोज रे!॥ १४॥
रहते भीने छैल सदा रँग रागमें,
गजरा फूलाँ गुथंत धरंता पागमें।
दर्पणमें मुख देखक मुछवा तानता,
जगमें वाका कोइ नाम नहिं जानता!॥ १५॥
महल फबारा हौजकं मोजाँ माणता,
समरथ आप-समान और नहि जाणता।
कैसा तेज प्रताप चलंता दूरमें,
भला-भला भूपाल गया जमपूरमें॥ १६॥

सुंदर नारी संग हिंडोले झूलते,
पैन्ह पटंबर अंग फरंता फूलते।
जो थे खूबी खेलके बैठ बजारकी,
सो भी हो गये छैल न ढेरी छारकी॥ १७॥
राज-कचेरी माँह जे आदर पावते,
करते हुकम गरूर जरूर दिखावते।
पाग धनीकी बाँधके रहते अकड़ते,
रहे धरे धन धाम गये जम पकड़ते॥ १८॥
इन्द्रपुरी-सी मान बसंती नगरियाँ,
भरती जल पनिहारि कनकसिर गगरियाँ।
हीरा लाल झबेर-जड़ी सुखमामयी,
ऐसी पुरी उजाड़ भयंकर हो गई॥ १९॥
होती जाके सीसपै छत्रकी छाइयाँ,
अटलभिरंती आन दसो दिस माइयाँ।
उदै-अस्त लूँ राज जिनूका कहावता,
हो गये ढेरी-धूर नजर नहिं आवता॥ २०॥
नित जाके दरबार झंडती नोबताँ,
मंत्री पास प्रबीन करंता म्होबता।
चतुर लोगाँ चोज तरक अति सूझता,
तीनाहूँका नाम जगत नहिं बूझता॥ २१॥
बंका किला बनायके तोपाँ साजियाँ,
माते मैगल द्वार हैं केते ताजियाँ।
नितप्रति आगे आय नचंती नायका,
वाको गया उपाड़ दूत जमरायका!॥ २२॥
माणिक हीरा लाल खजाना मोतियाँ,
सज राणी सिंगार सोलहों जोतियाँ।
दिन-दिन अधिक सुगंध लगाते देहमें,
ऐसे भोगी भूप मिले सब खेहमें!॥ २३॥

या तन-रंग-पतंग काल उड़ जायगा,
जमके द्वार जरूर खता बहु खायगा।
मनकी तज रे घात, बात सत मान ले,
मनुषाकार मुरार ताहि कूँ जान ले॥ २४॥
यह दुनियाँ 'बाजिन्द' पलकका पेखना,
यामें बहुत बिकार कहो क्या देखना!
सब जीवनका जीव, जगत आधार है,
जो न भजै भगवंत, भागमें छार है॥ २५॥
दो-दो दीपक बाल महलमें सोवते,
नारीसे कर नेह जगत तहिं जोवते।
सूँधा तेल लगाय पान मुख खायँगे,
बिना भजन भगवानके मिथ्या जायँगे॥ २६॥
राम-नामकी लूट फबै है जीवको,
निसिबासर कर ध्यान सुमर तूँ पीवको।
यहै बात परसिद्ध कहत सब गाम रे!
अधम-अजामिल तरे नारायण नाम रे॥ २७॥
गाफिल हुए जीव कहो क्यों बनत है?
या मानुषके साँस जो कोऊ गनत है।
जाग, लेय हरिनाम, कहाँ लों सोय है,
चक्कीके मुख पर्यो, सो मैदा होय है॥ २८॥
आज सुनै कै काल, कहत हौं तूझको,
भाँवै बैरी जानकै जो तूँ मूझको।
देखत अपनी दृष्टि खता क्या खात है!
लोहे कैसो ताव जनम यह जात है॥ २९॥
केते अर्जुन भीम जहाँ जसवंत-से,
केते गिनैं असंख्य बली हनुमंत-से।
जिनकी सुन-सुन हाँक महागिरि फाटते,
तिन धर खायो काल जो इंद्रहिं डाटते॥ ३०॥

बुल्लेशाह

(८२८) राग पीलू ताल कहरवा

कद मिलसी मैं बिरहों सताई नूँ॥
आप न आवै, न लिखि भेजै, भट्ठि अजे ही लाई नूँ।
तौंजेहा कोइ होर नाँ, जाणा, मैं तमि सूल सवाई नूँ॥
रात-दिनें आराम न मैंनूँ, खावै बिरह कसाई नूँ।
'बुल्लेशाह' धृग जीवन मेरा जौंलग दरस दिखाई नूँ॥

(८२९) राग मालकोस—ताल तिताला

टुक बूझ कवन छप आया है।
कइ नुकतेमें जो फेर पड़ा, तब ऐन गैनका नाम धरा;
जब मुरसिद नुकता दूर किया, तब ऐनों ऐन कहाया है॥
तुसीं इलम किताबाँ पढ़ दे हो, केहे उलटे माने कर दे हो;
बेमूजब ऐवें लड़दे हो केहा उलटा बेद पढ़ाया है॥
दुइ दूर करो, कोइ सोर नहीं, हिन्दू-तुरक कोई होर नहीं;
सब साधु लखो, कोई चोर नहीं, घट-घटमें आप समाया है॥
ना मैं मुल्ला, ना मैं काजी, ना मैं सुन्नीं, ना मैं हाजी;
'बुल्लेशाह', नाल लाई बाजी, अनहद सबद बजाया है॥

(८३०) राग काफी—ताल तिताला

माटी खुदी करेंदी यार।
माटी जोड़ा, माटी घोड़ा, माटीदा असवार॥
माटी माटीनू मारन लागी, माटीदे हथियार।
जिस माटीपर बहती माटी, तिस माटी हंकार॥
माटी बाग, बगीचा माटी, माटीदी गुलजार।
माटी माटीनू देखन आई, है माटीदी बहार॥
हँस-खेल फिर माटी होई, पौंदी पाँव पसार।
'बुल्लेशाह' बुझारत बूझी, लाह सिरों भों मार॥

(८३१) राग भैरों—ताल दीपचंदी

अब तो जाग मुसाफिर प्यारे! रैन घटी लटके सब तारे!
आवा गौन सराईं डेरे, साथ तयार मुसाफिर तेरे,
अजे न सुनदा कूच नकारे, कर ले आज करनदी बेला,
बहुरि न होसी आवन तेरा, साथ तेरा चल चल्ल पुकारे।
आपो अपने लाहे दौड़ी, क्या सरधन क्या निरधन बौरी,
लाहा नाम तू लेहु सँभारे। 'बुल्ले' सुहुदी पैरी एरिये,
गफलत छोड़ हीला कुछ करिये, मिरग जतन बिन खेत उजारे॥

❑ ❑

आदिल

(८३२) राग झँझौटी—ताल तिताला

मुकुटकी चटक लटक बिंब कुंडलकी,
भौंहकी मटक नेकु आँखिन देखाउ रे!
एरे बनवारी, बलिहारी जाउँ तेरी, मेरी
गैल किन आय नेकु गायन चराउ रे!
'आदिल' सुजान रूप गुनके निधान कान्ह,
बाँसुरी बजाय तन तपन बुझाउ रे!
नंदके किसोर, चितचोर, मोर पंखवारे,
बंसीवारे साँवरे पियारे, इत आउ रे!

❑ ❑

मकसूद

(८३३) राग सूरमल्हार—ताल दादरा

लगा भादों मुझे दुख देने भारी
घटा चहुँ ओर झुक आई है सारी।
भरी जल थल चढ़ीं नदियोंकी धारें,
सखी, अबतक न आये पी हमारे॥

घटा कारी अँधेरी नित डरावै,
पिया बिन नींद बिरहिनको न आवै।
अरे कागा, तू उड़के जा बिदेसा,
सलोने स्यामको लेकर सँदेसा॥
ये सब हालत वहाँ तकरीर कीजो,
मेरा साबित गुनह तकसीर कीजो।
कि उस जोगिनको तुम क्यों छोड़ बैठे?
तरफ उसकीसे मुँह क्यों मोड़ बैठे?
मुझे गम दिन-ब-दिन खाने लगा है,
अजलका दिन नजर आने लगा है।
न जानूँ दरस पीका कब मिलेगा,
कमल इस मेरे जीका कब खिलेगा॥
सखी, यह मास भादो भी सिधारा,
न आया आह वह प्रीतम पियारा।
दिवानी पीकी मैं मेरा पिया है,
पियाका नाम सुमरन मैं किया है॥

❑ ❑

मौजदीन

(८३४) राग सिंदूरा—ताल धमार

इतनी कोई कहो हमारी, मनमोहन ब्रजराज कुवरसों नारी।
पाव परसकर दरसन कीजो, हूजो जोर दोउ कर ठारी—
फिर पाछे इतनी कहि दीजो, सुध लीन्हीं न एकहूँ बारी।
फागुन आयो झाँझ डफ बाजै, भीर भई अति भारी।
मोहिं तो आस तिहारे मिलनकी, भूल गई सुध सारी।
मोहि गुलाल लाल बिन तोरे, भई है रैन अँधियारी।
अँसुवनको अब रंग बनो है, नैन बने पिचकारी।

बृन्दाबनकी कुंजगलिनमैं, ढूँढ़त ढूँढ़त हारी।
दैहौ दरस मोहि अपनी मौजसे ऐहो कृष्ण मुरारी,
पिया मोहि आस तिहारी॥

❑ ❑

वाहिद

(८३५) राग मालश्री—ताल कहरवा

सुंदर सुजानपर, मंद मुसुकानपर,
बाँसुरीकी तानपर ठौरन ठगी रहै।
मूरति बिसालपर, कंचनकी मालपर,
खंजन-सी चालपर खौरन खगी रहै॥
भौंहें धनु मैनपर, लोने जुग नैनपर,
सुद्ध रस बैनपर, 'वाहिद' पगी रहै।
चंचल वा तनपर, साँवरे बदनपर,
नंदके नँदनपर लगन लगी रहै॥

❑ ❑

दीन दरवेश

(८३६) राग जोगिया—ताल कहरवा

हिंदू कहैं सो हम बड़े, मुसलमान कहैं हम्म।
एक मूँग दो फाड़ हैं, कुण जादा कुण कम्म॥
कुण जादा कुण कम्म, कभी करना नहिं कजिया।
एक भगत हो राम, दूजा रहिमानसे रजिया॥
कहै 'दीन दरवेश' दोय सरिता मिल सिन्धू।
सबका साहब एक, एक मुसलिम इक हिंदू॥ १॥
गड़े नगारे कूचके, छिनभर छाना नाहिं।
कौन आज, को कालको, पाव पलकके माहिं॥

पाव पलकके माहिं समझ ले मनुवा मेरा।
धरा रहै धन-माल, होयगा जंगल डेरा॥
कहै 'दीन दरवेश' गर्व मत करै गँवारे।
छिनभर छाना नाहिं, कूचके गड़े नगारे॥ २॥

बन्दा जानै मैं करौं करनहार करतार।
तेरा किया न होयगा होगा होवनहार॥
होगा होवनहार बोझ नर यों ही उठावै।
जो बिधि लिखा ललाट प्रतछ फल तैसा पावै॥
कहै 'दीन दरवेश' हुकमसे पान हलन्दा।
करनहार करतार करेगा क्या तू बन्दा?॥ ३॥

बन्दा, बहुत न फूलिये, खुदा खिवेगा नाहिं।
जोर जुलम कीजै नहीं, मिरतलोकके माहिं॥
मिरतलोकके माहिं तजुरबा तुरत दिखावै।
जो नर करै गुमान, सोई जग खत्ता खावै॥
कहै 'दीन दरवेश' भूल मत गाफिल गन्दा!
मिरतलोकके माहिं फूलिये बहुत न बन्दा!॥ ४॥

❑ ❑

अफ़सोस

(८३७) राग पीलू—ताल दीपचंदी

का सँग फाग मचाऊँ री, कुबजा-सँग गिरधारी रहत हैं॥
अँसुवनकौ सखि रंग बनायो, दोउ नैना पिचकारी रहत है।
बिरहमें कल न परत पल-छिन हूँ, ब्याकुल सखियाँ सारी रहत हैं॥
निसिदिन कृष्ण मिलनको सखियाँ, आस लगाये ठाढ़ी रहत हैं।
'अफ़सोस' पियाकी नेह सुरतिया निरखत नर औ नारी रहत हैं॥

❑ ❑

काजिम

(८३८) राग आसावरी—ताल कहरवा

फाग खेलन कैसे जाऊँ सखी री,
हरि-हाथन पिचकारी रहति है।
सबकी चुनरिया कुसुम रँग बोरी,
मोरी चुनरिया गुलनारी रहति है॥
कोई सखी गावति, कोई बजावति,
हमको तो सुरत तिहारी रहति है।
कहत है 'काजिम' अपनी सखीसों,
सैयाँकी सुरत मतवारी रहति है॥

❑ ❑

खालस

(८३९) राग दरबारी—ताल तिताला

तुम नाम-जपन क्यों छोड़ दिया?
क्रोध न छोड़ा, झूठ न छोड़ा, सत्य बचन क्यों छोड़ दिया?
झूठे जगमें दिल ललचाकर, असल वतन क्यों छोड़ दिया?
कौड़ीको तो खूब सँभाला, लाल रतन क्यों छोड़ दिया?
जिन सुमिरनसे अति सुख पावै, तिन सुमिरन क्यों छोड़ दिया?
'खालस' एक भगवान भरोसे, तन-मन-धन क्यों छोड़ दिया?

(८४०) राग आसावरी—ताल कहरवा

जिन्हों घर झूमते हाथी, हजारों लाख थे साथी;
उन्हींको खा गई माटी, तू खुशकर नींद क्यों सोया?
नकारा कूचका बाजै, कि मारू मौतका बाजै;
ज्यों सावन मेघला गाजै, तू खुशकर नींद क्यों सोया?
जिन्हों घर लाल औ हीरे, सदा मुख पानके बीड़े;
उन्हींको खा गये कीड़े, तू खुशकर नींद क्यों सोया?

जिन्हों घर पालकी घोड़े, जरी जखफ़्तके जोड़े;
वही अब मौतने तोड़े, तू खुशकर नींद क्यों सोया ?
जिन्हों सँग नेह था तेरा, किया उन खाकमें डेरा;
न फिर करने गये फेरा, तू खुशकर नींद क्यों सोया ?

❑ ❑

वहजन

(८४१) राग बिहागरा—ताल चर्चरी

करें अब कौन बहाना, गवन हमरा नगिचाना !
सब सखियन मेरी चूनर मैली दूजे पियाघर जाना।
तीजे डर मोहि सास-ननदका, चौथे पिया दैहे ताना॥
प्रेम-नगरकी राह कठिन है, वहाँ रँगरेज सियाना।
एक बोर दे दियो चुनरीमें, तासों पिय पहिचाना॥
राह चलत सतगुरु मिले, 'वहजन' उनका है नाम बखाना।
मेहर भई उनकी जब मोपर, तब ही लगी ठिकाना॥

❑ ❑

लतीफ़ हुसैन

(८४२) राग काफी—ताल तिताला

ऊधो ! मोहन-मोह न जावै।
जब-जब सुधि आवति है रहि-रहि, तब-तब हिय बिचलावै॥
बिरह-बिथा बेधति है उन बिन, पल छिन चैन न आवै।
काह करौं कित जाउँ कौन बिधि, तनकी तपनि बुझावै॥
ब्याकुल ग्वाल-बाल अति दीखत, ब्रजबनिता घबरावै।
गाय-बच्छ डोलत अनाथ सम, इत उत हाय, रँभावै॥
कंसत्रास भीषण लखि सिगरो, धीरज छूटो जावै।
कौन बचाव करैगो, अब तो, यह दुख असह लखावै॥

जबलौं अवधि कंस-गृह पूरी, करिकैं मोहन आवै।
तबलौं कौन उपाय करै हम, कोऊ नाहि बतावै॥

□ □

मंसूर

(८४३) राग देस—ताल क़व्वाली

अगर है शौक मिलनेका, तो हरदम लौ लगाता जा।
जलाकर खुदनुमाईको, भसम तनपर लगाता जा॥
पकड़कर इश्ककी झाड़ू सफाकर हिजरए दिलको।
दुईकी धूलको लेकर मुसल्लहपर उड़ाता जा॥
मुसल्लह फाड़, तसबीह तोड़, किताबें डाल पानीमें।
पकड़ तू दस्त फिरश्तोंका, गुलाम उनका कहाता जा॥
न मर भूखों, न रख रोजह, न जा मसजिद न कर सिजदा।
वजूका तोड़ दे कूज़ा, शराबे शौक़ पीता जा॥
हमेशा खा, हमेशा पी, न गफ़लतसे रहो इकदम।
नशेमें सैर कर, अपनी खुदीको तू जलाता जा॥
न हो मुल्ला, न हो ब्रहमन, दुईकी छोड़कर पूजा।
हुक्म है शाह कलंदरका, अनलहक तू कहाता जा॥
कहे मंसूर मस्ताना, मैंने हक़ दिलमें पहचाना।
वही मस्तोंका मयखाना, उसीके बीच आता जा॥

□ □

यकरंग

(८४४) राग खम्माच—ताल कहरवा

हरदम हरिनाम भजो री।
जो हरदम हरिनामक भजिहौ, मुक्ति ह्वै जैहै तोरी।
पाप छोड़के पुन्य जो करिहौ, तब बैकुंठ मिलो री,
करमसे धरम बनो री।

'यकरंग' पियसों जाय कहौ कोई, हर घर रंग मचो री,
सुर नर मुनि सब फाग खेलत हैं, अपनी-अपनी जोरी,
खबर कोई लेत न मोरी॥

(८४५) राग टोडी—ताल दीपचंदी

पिया मिलन कैसे जाओगी गोरी! रंग-रूप सब जात रहो री।
ना अच्छे गुनढँग, ना अच्छे जोबन, मैली भई अब चूनरि तोरी॥
करके सिंगार पियाघर जैयो, तब देखिहैं पिया तोरी ओरी।
जाय कहो कोई 'यकरंग' पियसों, तुम बिन या गत हो गई मोरी॥

(८४६) राग सोरठ—ताल कहरवा

मितवा रे, नेकीसे बेड़ा पार।
जो मितवा तुम नेकी न करिहौ, बुड़ि जैहौ मझधार॥
नेक करमसे धरम सुधरिहैं, जीवनके दिन चार।
'यकरंग' भोग खैर हशरकी, जासे हो निस्तार॥

(८४७) राग हीम—ताल कहरवा

निसिदिन जो हरिका गुन गाय रे!
बिगड़ी बात वाकी सब बन जाय रे!
लाख कहूँ, मानै नहिं एकहु,
कब कहो, कबलग हम समझायँ रे!
सोच-विचार करो कुछ 'यकरंग',
आखिर बनत-बनत बन जाय रे!

(८४८) राग भैरवी—ताल कहरवा

साँवलिया मन भाया रे।
सोहिनी सूरत मोहिनी मूरत, हिरदै बीच समाया रे।
देसमें ढूँढ़ा, बिदेसमें ढूँढ़ा, अंतको अंत न पाया रे॥
काहूमें अहमद, काहूमें ईसा, काहूमें राम कहाया रे।
सोच-विचार कहै 'यकरंग' पिया जिन ढूँढ़ा तिन पाया रे॥

□□

कायम

(८४९) राग बहार—ताल चर्चरी

गुरु बिनु होरी कौन खेलावै कोई पंथ लगावै॥
करै कौन निर्मल या जीको, माया मनतें छुड़ावै।
फीको रंग जगतके ऊपर, पीको रंग चढ़ावै॥
लाल-गुलाल लगाय हाथसों भरम अबीर उड़ावै।
तीन लोककी माया फूकके ऐसी फाग रमावै॥
हरि हेरत मैं फिरति बावरी, नैननिमें कब आवै।
हरिको लखि 'कायम' रसियासों काहे न धूम मचावै॥

❑ ❑

निजामुद्दीन औलिया

(८५०) राग माँड—ताल चर्चरी

परबत बाँस मँगाव मेरे बाबुल! नीके मड़वा छाव रे!
सोना दीन्हा, रूपा दीन्हा, बाबुल दिल-दरयाव रे!
हाथी दीन्हा, घोड़ा दीन्हा, बहुत-बहुत मन चाव रे!
डोलिया फँदाय पिया लै चलिहै, अब सँग नहिं कोई आव रे!
गुड़िया खेलन माँके घर रह गयी, नहिं खेलनको दाव रे!
'निजामुद्दीन औलिया' बहियाँ पकरि चले, धरिहौं वाके पाँव रे!

❑ ❑

फ़रहत

(८५१) राग मल्हार—ताल तिताला

वृषभानु-नंदिनी झूलैं अली, आनन्द-कन्द ब्रजचन्द साथ।
सारद, गनेस, नारद, दिनेस, सनकादिक ब्रह्मादिक सुरेस,
हूलसत महेस बमभोलानाथ।
कोयल-समान-सखियनकी कूक, 'फ़रहत' चन्द्रावलि देत झूँक,
श्रीनंदनंद गले डाल हाथ॥

(८५२) राग हंसधुन—ताल इकताला

बंसी मुखसों लगाय ठाढ़े श्रीराधावर,
मधुर-मधुर बजत धुन सुन सब गोपी बेहाल।
थिरक-थिरक नाचै, मानो घन बिच दामिनि चमकै,
कारे मतवारे रतनारे दृग लटक चाल।
सीस मुकुट चमकै, मकराकृत कुंडल दमकै,
'फ़रहत' अति प्यारी घूँघरारी अलक, तिलक भाल॥

(८५३) राग सारंग—ताल तिताला

मारो मारो हो स्याम पिचकारी हो।
ताक लगाये खड़ी सखियन सँग ओट लिये राधा प्यारी हो।
देखो देखो स्याम वहै कोउ आवति, अबीर लिये भरि थारी हो॥
इक पिचकारी और प्रभु मारो, भींज जाय तन सारी हो।
'फ़रहत' निरखि-निरखि यह लीला, हरिचरना बलिहारी हो॥

❑ ❑

काजी अशरफ महमूद

(८५४) राग चैती—ताल कहरवा

ठुमुक ठुमुक पग कुमुक-कुंज-मग
चपल चरण हरि आये, हो हो चपल चरण हरि आये,
मेरे प्राण-भुलावन आये, मेरे नयन-लुभावन आये।
निमिक-झिमिक-झिम, निमिक-झिमिक-झिम,
नर्तन पद-व्रज आये, हो हो नर्तन पद-व्रज आये।
मेरे प्राण-भुलावन आये, मेरे नयन-लुभावन आये।
अरुन करुण-सम छिन्न भिन्न तम
करन बाल-रबि आये, हो हो करन बाल-रबि आये।
मेरे प्राण-भुलावन आये, मेरे नयन-लुभावन आये।
अमल कमल कर मुरलि मधुर धर
वंशी बजावन आये, हो हो वंशी बजावन आये।

मेरे प्राण-भुलावन आये, मेरे नयन-लुभावन आये।
पुंज पुंज हर कुंज गुंजभर
भृंग-रंग हरि आये, हो हो भृंग-रंग हरि आये।
मेरे प्राण-भुलावन आये, मेरे नयन-लुभावन आये॥
झुन झुन दुल-दुल, मंजुल बुल-बुल
फुल्ल मुकुल हरि आये, हो हो फुल्ल मुकुल हरि आये।
मेरे प्राण-भुलावन आये, मेरे नयन-लुभावन आये।

❑ ❑

आलम

(८५५) राग जैजैवंती—ताल कहरवा

जसुदाके अजिर बिराजैं मनमोहनजू,
अंग रज लागे छबि छाजैं सुरपालकी।
छोटे-छोटे आछे पग घुँघुरू घूमत घने,
जातें चित्त हित्त लागै शोभा बाल जालकी॥
आछी बतियाँ सुनावैं छिन छाँड़िबो न भावै,
छातीसों छपावै लागै छोह वा दयालकी।
हेरि ब्रज-नारी हारी बारि फेरि डारी सब,
'आलम' बलैया लीजै ऐसे नंदलालकी॥

(८५६) राग केदारा—ताल कहरवा

मुकता मनि पीत हरी बनमाल सु
सो सुर चापु प्रकास किये जनु।
भूषन दामिनि दीपति है
धुरवा सित चन्दन खोर किये तनु॥
'आलम' धार सुधा मुरली
बरसा पपिहा ब्रजनारिनको पनु।
आवत हैं बनसे धनते लखि
री सजनी घनस्याम सदा-घनु॥

❑ ❑

तालिब शाह

(८५७) राग शहाना—ताल चर्चरी

महबूब बागे सुहागे बने हैं, सुमोहन गरे माल फूलौं हिये हैं।
महारंग माते अमाते मदनके, बिलोकत बदन खौरि चन्दन दिये हैं॥
यही वेश हरिदेव भृकुटी तुम्हारे, सुलकुटी भँवर लेख या लख लिये हैं।
दिवाना हुआ है निमाना दरशका, सुतालिब वही स्याम गिरवर लिये हैं॥

❑ ❑

महबूब

(८५८) राग हमीर—ताल तिताला

आगे धेनु धारि गेरि ग्वालम कतारतामें,
फेरि फेरि टेरि धौरी धूमरीन गनते।
पोंछि पचकारन अँगौंछनसों पोंछि-पोंछि,
चूमि चारु चरण चलावै सु-बचनते॥
कहै महबूब जरा मुरली अधर वर,
फूँकि दई खरज निखादके सुरनते।
अमित अनंद भरे, कन्द छबि वृन्दावन,
मंदगति आवत मुकुंद मधुवनते॥

❑ ❑

नफ़ीस खलीली

(८५९) राग कान्हरा—ताल चर्चरी

कन्हैयाकी आँखें हिरन-सी नसीली।
कन्हैयाकी शोखी कली-सी रसीली॥
कन्हैयाकी छबि दिल उड़ा लेनेवाली।
कन्हैयाकी सूरत लुभा लेनेवाली॥
कन्हैयाकी हर बातमें एक रस है।
कन्हैयाका दीदार सीमीं क़फ़स है॥

कभी गोपियोंमें जो पनघटपै आये।
वह नखरेमें आईं तो ये हठपै आये॥
किसीका सलामत दुपट्टा न छोड़ा।
जो भागीं तो कंकड़से मटकोंको फोड़ा॥
जो हाथ आई उसकी मरोड़ी कलाई।
बहुत कसमसाई न छोड़ी कलाई॥
बिठाया जमींपर पकड़कर किसीको।
रखा बाँसुरीसे जकड़कर किसीको॥
वह कहती हैं—'अब शाम होती है प्यारे।'
यह कहते हैं—'क्यों आईं जमना किनारे?'
ग्वालिनका मक्खन चुराकर जो भागे।
वह लाईं शिकायत जसोदाके आगे॥
कहा —'तेरा मोहन सताता बहुत है।
चुराता तो है, पर गिराता बहुत है॥'
कई एक पहलेसे घरमें खड़ी हैं।
जसोदासे सब बारी-बारी लड़ी हैं॥
वहीं नागहाँ नन्दका लाल आया।
कयामतकी चलता हुआ चाल आया॥
कहा दूरसे —'झूठ कहती हैं माता।
इसी ताकमें यह तो रहती हैं माता॥
शिकायात अरजाँ मजाक इनके सस्ते।
कहीं जाऊँ तो रोक देती हैं रस्ते॥
ये छेड़ें मुझे और दुहाई न दूँ मैं।
जो ठोकर, झटककर कलाई न दूँ मैं॥
जो पनघट पै इनको दिखाई न दूँ मैं।
जो मुरली बजाता सुनाई न दूँ मैं॥
तड़पती हैं बेचैन होती हैं क्या-क्या।
मेरे गममें आँसू पिरोती हैं क्या-क्या॥

न शबको मिला हूँ, न दिनको मिला हूँ।
महीनोंके बाद आज इनको मिला हूँ॥
ये झूठी हैं गर शिकवा-बर लब है आई।
मुझे देखनेके लिये सब हैं आई॥'

❑ ❑

सैयद कासिम अली

(८६०) राग बागेश्री—ताल कव्वाली

मोहन प्यारे जरा गलियोंमें हमारी आजा!
आजा, आजा, इधर ऐ कृष्ण कन्हैया! आजा!
दु:ख हरनेके लिये तूने न किया है क्या-क्या?
फिर वह बंसी लिये यमुनाके किनारे आजा!
लाखों गौएँ तेरी अब फिरती हैं मारी मारी,
लगन तुझसे ही लगी नंद-दुलारे आजा!
तेरी इस भूमिमें छाई है घटा जुलमोंकी!
तिलमिलाते हुए भारतको बचा जा, आजा!
परदये गैबसे हो जायँ इशारे, तेरे,
अब नहीं ताब गमे हिज्रकी प्यारे आजा!
जल्द आजा कि तेरे वास्ते 'अली' व्याकुल है,
कर्मभूमिमें वही कर्म सिखाने आजा!

❑ ❑

हनुमानप्रसाद पोद्दार

श्रीविष्णु-चरण-वन्दन

(८६१) राग जैजैवंती—ताल झूमरा

शोभित चारों भुजा सुदर्शन, शंख गदा, सरसिजसे युक्त।
रुचिर किरीट, सुभग पीताम्बर, कमल नयन शोभा संयुक्त॥
चिन्ह विप्र-पदका वक्षसपर कौस्तुभमणि गल मंजुलहार।
परम सुखद श्रीविष्णु-चरण, वन्दन करता हूँ बारंबार॥

(८६२) राग कल्याण—ताल कहरवा

श्लोक—नारायणं हृषीकेशं गोविन्दं गरुडध्वजम्।
वासुदेवं हरिं कृष्णं केशवं प्रणमाम्यहम्॥

दोहा—श्रीगनपति गुरु सारदा, बंदौं बारंबार।
परब्रह्मके रूप सब भिन्न-भिन्न आकार॥ १॥
पुनि सुमिरौं गुरुबर चरन, बांछित-फलदातार।
अति दुस्तर भवसिंधुतें, जे पहुँचावहिं पार॥ २॥

(८६३) राग भैरवी—ताल रूपक

वन्दौं विष्णु विश्वाधार॥
लोकपति, सुरपति, रमापति, सुभग शान्ताकार।
कमल-लोचन कलुषहर कल्याण पद-दातार॥
नील नीरद-वर्ण नीरज-नाभ नभ अनुहार।
भृगुलता-कौस्तुभ सुशोभित हृदय मुक्ताहार॥
शंखचक्र गदा कमलयुत भुज विभूषित चार।
पीत-पट परिधान पावन अंग अंग उदार॥
शेष-शय्या-शयित, योगी-ध्यान-गम्य, अपार।
दुःखमय भव-भय-हरण, अशरणशरण, अविकार॥

❑ ❑

प्रार्थना

(८६४) राग आसावरी—ताल धुमाली

परम गुरु राम मिलावनहार।
अति उदार, मंजुल मंगलमय, अभिमत-फलदातार॥
टूटी-फूटी नाव पड़ी मम भीषण भव नद धार।
जयति जयति जय देव दयानिधि, बेग उतारो पार॥

(८६५) राग देशी खमाच—ताल पंजाबी ठेका

आयो चरन तकि सरन तिहारी।
बेगि करौ मोहि अभय बिहारी॥
जोनि अनेक फिर्‌यो भटकान्यो।
अब प्रभु पद छाड़ौं न मुरारी!॥
मो सम दीन न दाता तुम सम।
भली मिली यह जोरि हमारी॥
मैं हौं पतित, पतितपावन तुम।
पावन करु, निज बिरद सँभारी॥

(८६६) राग गारा—ताल दादरा

जयति देव जयति देव, जय दयालु देवा।
परम गुरु, परम पूज्य, परम देव देवा॥
सब बिधि तव चरन-सरन आइ पर्‌यो दासा।
दीन, हीन, मति-मलीन, तदपि सरन-आसा॥
पातक अपार किंतु दयाको भिखारी।
दुखित जानि राखु सरन पाप-पुंज-हारी॥
अबलौंके सकल दोष क्षमा करहु स्वामी।
ऐसो करु, जाते पुनि हौं, न कुपथगामी॥
पात्र हौं कुपात्र हौं, भले अनधिकारी।
तदपि हौं तुम्हारो, अब लेहु मोहि उबारी॥
लोग कहत तुम्हरो सब, मनहु कहत सोई।
करिय सत्य सोइ नाथ भव भ्रम सब खोई॥

मोरि ओर जनि निहारि, देखिय निज तनही।
हठ करि मोहि राखिय हरि! संतत तल पनही॥
कहौं कहा बार-बार जानहु सब भेवा।
जयति, जयति, जय दयालु, जय दयालु देवा॥

(८६७) राग बिलावल—ताल तेवरा

प्रभु तव चरन किमि परिहरौं।
ये चरन मोहि परम प्यारे, छिन न इनते टरौं॥
जिन पदनकी अमित महिमा, बेद-सुर-मुनि कहैं।
दास संतत करत अनुभव, रहत निसिदिन गहैं॥
परसि जिनकों सिला तेहि छिन बनी सुंदरि नारि।
घरनि मुनिवरकी अहिल्या, सकौं केहि बिधि टारि॥
इन पदन सम सरन असरन, दूसरो कोउ नाहि।
होइ जो कोउ तुम बतावहु, धाइ पकरौं ताहि॥
और बिधि नहिं टरौं टार्‌यो, होइ साध्य सु करौं।
जलजगत मकरंद अलि ज्यों, मनहिं चरनन्हि धरौं॥

(८६८) राग देशी—खमाच

बहु जुग बहुत जोनि फिरि हारो। अब तो एक भरोसो तिहारो॥
जद्यपि कुटिल, कामरत, पापी। तदपि गुलाम सदा हौं तिहारो॥
जाऊँ कहाँ तव चरण बिहाई। लीन्हों प्रभु-पद-कमल-सहारो॥

(८६९) राग बागेश्री—ताल तीनताल

प्रभु तुम अपनो बिरद सँभारो।
अधम-उधारन नाम धरायो अब मत ताहि बिसारो॥
मोसों अधिक अधम को जगमहँ पापिनमहँ सरदारो।
ढूँढ़-ढूँढ़ जग अघ अति कीन्हें गनत न आवै पारो॥
मोरे अघकों लिखत लिखावत चित्रगुप्त पचि हारो।
तऊ न आयो अंत अघनको, छाड़ी कलम बिचारो॥
अबलौं अधम अनेक उधारे, मो सों पल्लौ डारो।
राखो लाज नाम अपनेकी, मत खोवो पतियारो॥

(८७०) राग तिलंग—ताल तीनताल

अब हरि! एक भरोसो तेरो।
नहिं कछु साधन ग्यान भगतिको, नहिं बिराग उर हेरो॥
अघ ढोवत अघात नहिं कबहूँ, मन बिषयनको चेरो।
इंद्रिय सकल भोगरत संतत, बस न चलत कछु मेरो॥
काम-क्रोध-मद-लोभ-सरिस अति प्रबल रिपुनतें घेरो।
परबस पर्‌यो, न गति निकसनकी यदपि कलेस घनेरो॥
परखे सकल बंधु, नहिं कोऊ बिपदकालको नेरो।
दीनदयाल दया करि राखउ, भव जल बूड़त बेरो॥

(८७१) राग सोहनी—ताल तेवरा

हे दयामय! दीनबन्धो!! दीनको अपनाइये।
डूबता बेड़ा मेरा मझधार पार लँघाइये॥
नाथ! तुम तो पतितपावन, मैं पतित सबसे बड़ा।
कीजिये पावन मुझे, मैं शरणमें हूँ आ पड़ा॥
तुम गरीबनिवाज हो, यों जगत सारा कह रहा।
मैं गरीब अनाथ दु:खप्रवाहमें नित बह रहा॥
इस गरीबीसे छुड़ाकर कीजिये मुझको सनाथ।
तुम सरीखे नाथ पा, फिर क्यों कहाऊँ मैं अनाथ॥
हो तृषित आकुल अमित प्रभु! चाहता जो बूँद नीर।
तुम तृषाहारी अनोखे उसे देते सुधा-क्षीर॥
यह तुम्हारी अमित महिमा सत्य सारी है प्रभो!।
किसलिये मैं रहा बंचित फिर अभीतक हे विभो!॥
अब नहीं ऐसा उचित, प्रभु! कृपा मुझपर कीजिये।
पापका बन्धन छुड़ा नित-शान्ति मुझको दीजिये॥

(८७२) राग केदारा—ताल तीनताल

प्रभु! मेरो मन ऐसो ह्वै जावै।
बिषयनको बिष सगरो उतरै, पुनि नहिं कबहूँ छावै॥
बिनसै सकल कामना मनकी अनत न कतहूँ धावै।
निरखत निरत निरंतर माधुरि, स्याम मुरति सुख पावै॥
कामी जिमि कामिनि-सँग चाहै, लोभी धन मन लावै।
तिमि अबिरत निज प्रियतमकी सुधि, छिन इक नहिं बिसरावै॥
ममता सकल जगतकी छूटै, मधुर स्याम छबि भावै।
तवै आनन सरोज-रस चाखन मन मधुकर बनि जावै॥

(८७३) राग केदारा—ताल तीनताल

चहौं बस एक यही श्रीराम।
अबिरल अमल अचल अनपाइनि, प्रेम-भगति निष्काम॥
चहौं न सुत-परिवार, बंधु-धन, धरनी, जुवति ललाम।
सुख-वैभव उपभोग जगतके चहौं न सुचि सुरधाम॥
हरि-गुन सुनत सुनावत कबहूँ, मन न होइ उपराम।
जीवन-सहचर साधु-संग सुभ, हो संतत अभिराम॥
नीरदनील नवीन बदन अति सोभामय सुखधाम।
निरखत रहौं बिस्वमय निसिदिन, छिन न लहौं बिस्राम॥

(८७४) राग आसावरी—ताल धुमाली

मेरे एक राम-नाम आधार।
ढूँढ़ थक्यो पर मिल्यो न दूजो, भीर परेको यार॥
देखे सुने अनेक महीपति, पंडित, साहूकार।
जद्यपि नीति-धरम-धन संयुत, नहिं अस परम उदार॥
माता-पिता, भ्राता, नारी, सुत, सेवक, बंधु अपार।
बिपदकालमहँ कोउ न संगी, स्वारथमय संसार॥
करि करुना दयालु गुरु दीन्हों, राम-नाम सुखसार।
दुस्तर भवसागरमहँ अटक्यो बेरो उतर्‌यो पार॥

(८७५) राग केदारा—ताल तीनताल

हुआ अब मैं कृतार्थ महाराज।
दिया चरन आश्रय गरीबको, धन्य! गरीबनिवाज॥
घूमा नभ-जल-पृथिवीतलपर, धरे नित नये साज।
मिली न शान्ति कहीं प्रभु! ऐसी, जैसी मुझको आज॥
बिबिध रूपसे पूजा मैंने कितना देव-समाज।
कितने धनी उदार मनाये, हुआ न मेरा काज॥
दुखसमुद्रमें डूब रहा था मेरा भग्न जहाज।
चरण-किनारा मिला अचानक, छूटा दुखका राज॥

(८७६) राग खमाच—ताल दीपचंदी
(मारवाड़ी बोली)

नाथ मैं थारो जी थारो।
चोखो, बुरो, कुटिल अरु कामी, जो कुछ हूँ सो थारो॥
बिगड़्यो हूँ तो थारो बिगड़्यो, थे ही मनै सुधारो।
सुधर्‌यो तो प्रभु सुधर्‌यो थारो, थाँ सूँ कदे न न्यारो॥
बुरो, बुरो, मैं भोत बुरो हूँ, आखर टाबर थारो।
बुरो कुहाकर मैं रह जास्यूँ, नाँव बिगड़सी थारो॥
थारो हूँ, थारो ही बाजूँ, रहस्यूँ थारो, थारो!!।
आँगळियाँ नुह परै न हौवै, या तो आप विचारो॥
मेरी बात जाय तो जाओ, सोच नहीं कछु म्हारो।
मेरे बड़ो सोच यो लाग्यो बिरद लाजसी थारो॥
जचै जिसतराँ करो नाथ! अब, मारो चाहै त्यारो।
जाँघ उघाड़्याँ लाज मरोगा, ऊँडी बात बिचारो॥

(८७७) राग पीलू—ताल दीपचंदी
(मारवाड़ी बोली)

नाथ! थारैं सरण पड़ी दासी*।
(मोय) भवसागरमें त्यार काट्द्यो जनम-मरण फाँसी॥
नाथ! मैं भोत कष्ट पाई।
भटक भटक चौरासी जूणी मिनख-देह पाई। मिटाद्यो दुःखाँकी रासी॥
नाथ! मैं पाप भोत कीना।
संसारी भोगाँकी आसा दुःख भोत दीना। कामना है सत्यानासी॥
नाथ मैं भगति नहीं कीनी।
झूठा भोगाँकी तृसनामें उम्मर खो दीनी। दुःख अब मेटो अबिनासी॥
नाथ! अब सब आसा टूटी।
(थारे) श्रीचरणाँकी भगति एक है संजीवन बूटी।
रहूँ नित दरसणकी प्यासी॥

(८७८) राग भीमपलासी—ताल तीनताल
(मारवाड़ी बोली)

नाथ! मनें अबकी बार बचाओ॥ टेक॥
फँस्यों आय मैं भँवर जाळ, निकलणकी बाट बताओ।
रस्तो भूल्यो, मिल्यो अँधेरो, मारग आप दिखाओ॥
दुखियानैं उद्धार करणको, थारैं घणो उमाओ।
मेरै जिस्यो दुखी कुण जगमैं, प्रभुजी! आप बताओ॥
भोत कष्ट मैं भुगत्या स्वामी, अब तो फंद कटाओ।
धीरज गई, धरम भी छूट्यो, आफ़त आप मिटाओ॥
आरत भोत हो रह्यो प्रभुजी, अब मत बार लगाओ।
करो माफ तकसीर दासकी, सरण मनैं बकसाओ॥

---

* सांसारिक तापोंसे पीड़ित, संसारसे निराश होकर श्रीहरिके चरणोंकी आश्रित एक अबलाकी प्रार्थना।

(८७९) राग जोशी—ताल दीपचन्दी
(मारवाड़ी बोली)

नाथ! थारै सरणै आयो जी!
जचै जिसतराँ, खेल खिलाओ, थे मन-चायो जी॥
बोझो सभी ऊतर्‌यो मनको, दुख बिनसायो जी।
चिंता मिटी, बड़े चरणाँको सहारो पायो जी॥
सोच फिकर अब सारो थारै ऊपर आयो जी।
मैं तो अब निस्चिन्त हुयो अंतर हरखायो जी॥
जस-अपजस सब थारो, मैं तो दास कुहायो जी।
मन-भँवरो थारै, चरण-कमलमें जा लिपटायो जी॥

(८८०) राग मलार—ताल रूपक

सुन्यो तेरो पतितपावन नाम!
अजामिल[1]-से पतितकों तैं दियो अपने धाम॥
ब्याध[2]-खग[3]-मृग[4] जे रहे नित धरमतें उपराम।
किये पावन अति पतित ते भये पूरनकाम॥
कठिन कलिके काल अपि तारे अनेक कुठाम।
धरमहीन, मलीन, पातक निरत आठों जाम॥
पाप करत उछाह जुत, मम मन न लीन्ह बिराम।
तदपि अजहुँ न मोहि तार्‌यो, किमि बिसार्‌यो नाम॥

(८८१) राग शंकरा—ताल रूपक

दीनबन्धो! कृपासिन्धो! कृपाबिन्दू दो प्रभो!
उस कृपाकी बूँदसे फिर बुद्धि ऐसी हो प्रभो॥
वृत्तियाँ द्रुतगामिनी हो जा समावें नाथमें।
नदी-नद जैसे समाते हैं सभी जलनाथमें॥

---

१. अजामिलने मरते समय पुत्रके संकेतसे 'नारायण' नाम उच्चारण किया था, जिससे वह परमधामको गया।

२. व्याधने भगवान् श्रीकृष्णके पैरमें बाण मारा था, उसकी परमगति हुई।

३. जटायुकी कथा श्रीरामायणमें प्रसिद्ध है।

४. वानर, भालू, गजराज आदि।

जिस तरफ देखूँ उधर ही दरस हो श्रीरामका।
आँख भी मूँदूँ तो दीखै मुखकमल घनश्यामका॥
आपमें मैं आ मिलूँ प्रभु! यह मुझे वरदान दो।
मिलती तरंग समुद्रमें जैसे मुझे भी स्थान दो॥
छूट जावें दुःख सारे, क्षुद्र सीमा दूर हो।
द्वैतकी दुबिधा मिटै, आनन्दमें भरपूर हो॥
आनन्द सीमारहित हो, आनन्द पूर्णानन्द हो।
आनन्द सत आनन्द हो, आनन्द चित आनन्द हो॥
आनन्दका आनन्द हो, आनन्दमें आनन्द हो।
आनन्दको आनन्द हो, आनन्द ही आनन्द हो॥

(८८२) राग भीमपलासी—ताल तीनताल

नाथ! अब कैसे हो कल्याण?
प्रभु-पद-पंकज-बिमुख निरंतर रहते पामर प्राण।
परसुखकातर महामलिन मन चाहत पद निर्वाण॥
सत्य, अहिंसा, प्रेम, दया सब कर गये दूर प्रयाण।
लगा हृदयमें द्वेष-घृणा हिंसाका बेधक बाण॥
भेदबुद्धिसे भरा हृदय सब भाँति हुआ पाषाण।
आत्मभावना भूल वैरपर सदा चढ़ाता शाण॥
लगा कामना-भूत भयानक, मिटा धर्म परिमाण।
उभयभ्रष्ट हुआ बनकर अब पशु बिनु पूँछ विषाण॥
श्रुति-स्मृतिकी करता अवहेला, पढ़ता नहीं पुराण।
प्रभो! पतित इस अधम दीनका तुम्हीं करो अब त्राण॥

(८८३) राग आसावरी

एक लालसा मनमहँ धारौं।
बंसीबट, कालिंदीतट, नटनागर नित्य निहारौं॥
मुरली-तान मनोहर सुनि-सुनि तन सुधि सकल बिसारौं।
पल-पल निरखि झलक अँग अंगनि पुलकित तन मन वारौं॥

रिझऊँ स्याम मनाइ गाइ गुन गुंज-माल गर डारौं।
परमानंद भूलि जग सगरौ स्यामहि स्याम पुकारौं॥

(८८४) राग जैजैवन्ती—ताल झूमरा

कर प्रणाम तेरे चरणोंमें लगता हूँ अब तेरे काज।
पालन करनेको आज्ञा तव मैं नियुक्त होता हूँ आज॥
अंतरमें स्थित रहकर मेरे बागडोर पकड़े रहना।
निपट निरंकुश चंचल मनको सावधान करते रहना॥
अन्तर्यामीको अन्त:स्थित देख सशंकित होवे मन।
पाप-वासना उठते ही हो नाश लाजसे वह जल भुन॥
जीवोंका कलरव जो दिनभर सुननेमें मेरे आवे।
तेरा ही गुणगान जान मन प्रमुदित हो अति सुख पावे॥
तू ही है सर्वत्र व्याप्त हरि! तुझमें यह सारा संसार।
इसी भावनासे अंतरभर मिलूँ सभीसे तुझे निहार॥
प्रतिपल निज इन्द्रियसमूहसे जो कुछ भी आचार करूँ।
केवल तुझे रिझानेको, बस, तेरा ही व्यवहार करूँ॥

(८८५) राग आसावरी

मोकों कछू न चहिये राम।
तुम बिन सब ही फीके लागैं, नाना सुख धन धाम॥
सुंदरि, संतति, सेवक, सब गुन, बुधि, बिद्या भरपूर।
कीरति, कला, निपुनता, नीती, इनकौं रखिये दूर॥
आठ सिद्धि, नौ निद्धि आपनी और जननकौं दीजै।
मैं तो चेरो जनम-जनमको, कर धरि अपनो कीजै॥

(८८६) राग आसावरी

खड़ा अपराधी प्रभुके द्वार!
न्याय चाहता, क्षमा नहीं, दो दण्ड दोष अनुसार॥ १॥
अर्थ-दण्ड देना चाहो तो करो स्वार्थ सब छार।
रहने मत दो कुछ भी इसके 'अपना' 'मेरा' कार॥ २॥

कैद अगर करना चाहो तो प्रेम-बेड़ियाँ डार।
रक्खो बाँध इसे नित निज चरणोंके कारागार॥ ३॥
निर्वासित करना चाहो तो लूटो घर-संसार।
पहुँचा दो सत्वर दोषीको भव-समुद्रके पार॥ ४॥
कभी न आने दो फिर वापस, मरने दो बेकार।
बह जाने दो इसे वहाँ सच्चिदानन्दकी धार॥ ५॥

(८८७) राग भैरवी

होगा कब वह सुदिन समय शुभ, मायावी मन बनकर दीन।
मोहमुक्त हो हो जायेगा, पावन प्रभु-चरणोंमें लीन॥
कब जगकी झूठी बातोंसे, हो जावेगी घृणा इसे।
कब समझेगा उसे भयानक, मान रहा रमणीय जिसे॥
कब गुरु-चरणोंकी रजको यह, निज मस्तकपर धारेगा।
काम-क्रोध-लोभादि वैरियोंको, कब हठसे मारेगा॥
पुण्यभूमि ऋषिसेवितमें कब, होगा इसका निर्जन-वास।
गंगाकी पुनीत धारासे कब सब अघका होगा नास॥
कब छोड़ेंगी सबल इन्द्रियाँ अपने विषयोंमें रमना।
कब सीखेंगी उलटी आकर, अन्तरमें उसके जमना॥
कब साधनके प्रखर तेजसे सारा तम मिट जायेगा।
कब मन विषय विमुख हो हरिकी विमल भक्तिको पायेगा॥
धन-जन-पदकी प्रबल लालसा कष्टमयी कब छूटेगी।
मान-बड़ाई, 'मैं मेरे' की फाँसी कब यह टूटेगी॥
कब यह मोह स्वप्न छूटेगा, कब प्रपंचका होगा बाध।
परवैराग्य प्रकट कब होगा, कब सुख होगा इसे अगाध॥
कब भवभयके कारण मिथ्या अहंकारका होगा नास।
कब सच्चा स्वरूप दीखेगा, छूट जायगा देहाध्यास॥
कब सबके आधार एक भूमा-सुखका मुख दीखेगा।
कब यह सब भेदोंमें नित्य अभेद देखना सीखेगा॥
कब प्रतिबिम्ब बिम्ब होगा, कब नहीं रहेगा चित-आभास।
निजानन्द निर्मल अज अव्ययमें कब होगा नित्य निवास॥

(८८८) राग आसावरी

बना दो विमलबुद्धि भगवान।
तर्कजाल सारा ही हर लो, हरो सुमति-अभिमान।
हरो मोह, माया, ममता, मद, मत्सर मिथ्या मान॥
कलुष काम-मति कुमति हरो, हे हरे! हरो अज्ञान।
दम्भ, दोष, दुर्नीति हरण कर करो सरलता दान॥
भोग-योग अपवर्ग-स्वर्गकी हरो स्पृहा बलवान।
चाकर करो चारु चरणोंका नित ही निज जन जान॥
भर दो हृदय भक्ति-श्रद्धासे, करो प्रेमका दान।
कभी न करो दूर निज पदसे मेटो भवका भान॥

(८८९) राग पहाड़ी—ताल केरवा
(मारवाड़ी बोली)

अब कित जाऊँजी, हार कर सरणै थाँरै आयो॥
जबतक धनकी धूम रही घर भायाँ सेती छायो।
साला-साढ़ भोत नीसर्या, नेड़ोइ साख बतायो॥
अणगिणतीका बण्या भायला, प्रेम घणो दरसायो।
एक-एकसें बढ़कर बोल्यो, एकहिं जीव बतायो॥
सभा-समाज, पंच-पंचायत, ऊँचो भोत बिठायो।
वाह-वाहकी धूम मचाई, स्याणो घणो बतायो॥
घरका सभी, साख सबहीसूँ सबहीकै मन भायो।
बाताँ सेती सभी पसीनै ऊपर खून बुहायो॥
लक्ष्मी माता करी कृपा जद, चंचल रूप दिखायो।
माया लई समेट, भरमको पड़दो दूर हटायो॥
मात-पितानै खारो लाग्यो, भायाँ मान घटायो।
साला साढ़ सभी बीछड़या, कोइ न नेड़ो आयो॥
'एक जीवका' भोत भायला, एक न आडो आयो।
उलटी हँसी उड़ाई जगमैं बेवकूफ बतलायो॥

टूट्यो प्रेम, छूट्यो सँग सबसूँ सब कोई छिटकायो।
नाक चढ़ाकर मुँहसूँ बोल्या, सब जग हुयो परायो॥
सुखको रूप समझकर जगनें, भोत दिना भरमायो।
खुल गई पोल, रूप सगलाँको असली चौड़ै आयो॥
मिटी भरमना सारी, थारै चरणाँ चित्त लगायो।
नाथ! अनाथ पतित पापीने तुरत सनाथ बणायो॥

(८९०) राग आसावरी

नाथ अब लीजै मोहि उबार!
कामी, कुटिल, कठिन कलिकवलित कुत्सित कपटागार।
मोही, मुखर—महा मद-मर्दित, मंद, मलिन-आचार॥
वलयित विषय, वितािडत, विचलित, विकसित विविध विकार।
दीन, दुखी, दुरदृष्ट, दुरत्यय, दुर्गत, दुर्गुण-भार॥
पंकिल, प्रचुर, पतित, परिपंथी, निरपत्रप, निःसार।
निःस्व, निखिलनिगमागम-वर्जित, निगडित नित गृह-दार॥
दीनाश्रय! तव विरद विपत्ति-विदारण श्रुति-विस्तार।
सुनत सुयश शुचि सो अब मैं आगत अघहारी-द्वार॥

(८९१) राग बहार

सनातन सत-चित आनँद रूप। अगुण, अज, अव्यय, अलख, अनूप॥
अगोचर, आदि, अनादि, अपार। विश्व-व्यापक, विभु, विश्वाधार॥
न पाता जिनकी कोई थाह। बुद्धि-बल हो जाते गुमराह॥
संत श्रद्धालु तर्क कर त्याग। सदा भजते मनके अनुराग॥
समझकर विषवत् सारे भोग। त्याग, हो जाते स्वस्थ निरोग॥
एक, बस, करते प्रियकी चाह। बिचरते जगमें बेपरवाह!॥
धरा, धन, धाम, नाम, आराम। सभी कुछ राम विश्व-विश्राम॥
देखते सबमें ऐसे भक्त। सतत रहते चिन्तन-आसक्त॥
प्रेम-सागरकी तुंग तरंग। बाँध मर्यादाका कर भंग॥
बहा ले जाती जब श्रुतिधार। संत तब करते प्रेम पुकार॥

प्रेमवश विह्वल हो श्रीराम । भक्त-मन-रंजन अति अभिराम ॥
दिव्य मानव-शरीरवर धार । अनोखा, लेते जग अवतार ॥
मदन-मनमोहन, मुनि-मन-हरण । सुरासुर सकल विश्व सुख-करण ॥
मधुर मंजुल मूरति द्युतिमान । विविध क्रीड़ा करते भगवान ॥
दयावश करते जग-उद्धार । प्रेमसे, तथा किसीको मार ॥
विविध लीला विशाल शुचि चित्र । अलौकिक सुखकर सभी विचित्र ॥
जिन्हें गा-सुनकर मोहागार । सहज होते भव-वारिधि पार ॥
तोड़ माया-बन्धन जग-जाल । देखते 'सीय-राम' सब काल ॥
वही सुन्दर मृदु युगल-स्वरूप । दिखाते रहो राम रघु-भूप ! ॥
'सकल जग सीय राममय' जान । करूँ सबको प्रणाम, तज मान ॥

(८९२) राग भैरवी

हे निर्गुण! हे सर्वगुणाश्रय! हे निरुपम! हे उपमामय! ।
हे अरूप! हे सर्वरूपमय! हे शाश्वत! हे शान्तिनिलय! ॥
हे अज! आदि! अनादि! अनामय! हे अनन्त! हे अविनाशी! ।
हे सच्चित-आनन्द, ज्ञानघन, द्वैतहीन, घट-घट-वासी! ॥
हे शिव, साक्षी, शुद्ध, सनातन, सर्वरहित हे सर्वाधार! ।
हे शुभमन्दिर, सुन्दर, हे शुचि, सौम्य, साम्यमति रहितविकार! ॥
हे अन्तर्यामी! अन्तरतम, अमल, अचल, हे अकल, अपार! ।
हे निरीह, हे नर-नारायण, नित्य, निरंजन, नव, सुकुमार! ॥
हे नव नीरद नील नराकृत, निराकार, हे नीराकार! ।
हे समदर्शी, संत-सुखाकर, हे लीलामय प्रभु साकार! ॥
हे भूमा, हे विभु, त्रिभुवनपति, सुरपति, मायापति भगवान्! ।
हे अनाथपति, पतित उधारन, जन तारन हे दयानिधान! ॥
हे दुर्बलकी शक्ति, निराश्रयके आश्रय, हे दीनदयालु! ।
हे दानी, हे प्रणतपाल, हे शरणागतवत्सल जनपाल! ॥
हे केशव! हे करुणासागर! हे कोमल, अति सुहृद महान ।
करुणाकर अब उभय अभय-चरणोंमें हमें दीजिये स्थान ॥

सुर-मुनि-वन्दित कमलानन्दित चरण-धूलि तव मस्तकधार।
परम सुखी हम हो जायेंगे, होंगे सहज भवार्णव पार॥

(८९३) राग भीमपलासी

हे नाथ! तुम्हीं सबके मालिक तुम ही सबके रखवारे हो।
तुम ही सब जगमें व्याप रहे, विभु! रूप अनेकों धारे हो॥
तुम ही नभ, जल, थल, अग्नि तुम्हीं, तुम सूरज-चाँद-सितारे हो।
यह सभी चराचर है तुममें, तुम ही सबके ध्रुवतारे हो॥

× × ×

हम महामूढ़ अज्ञानीजन, प्रभु! भवसागरमें डूब रहे।
नहिं नेक तुम्हारी भक्ति करें, मन मलिन विषयमें खूब रहे॥
सत्संगतिमें नहिं जायँ कभी, खल संगतिमें भरपूर रहे।
सहते दारुण दुख दिवस-रैन, हम सच्चे सुखसे दूर रहे॥

× × ×

तुम दीनबन्धु जगपावन हो, हम दीन, पतित अति भारी हैं।
है नहीं जगतमें ठौर कहीं, हम आये शरण तुम्हारी हैं॥
हम पड़े तुम्हारे हैं दरपर, तुमपर तन-मन-धन वारे हैं।
अब कष्ट हरो, हरि हे हमरे, हम निंदित निपट, दुखारे हैं॥

× × ×

इस टूटी-फूटी नैयाको भवसागरसे खेना होगा।
फिर निज हाथोंसे नाथ! उठाकर पास बिठा लेना होगा॥
हे अशरणशरण, अनाथनाथ, अब तो आश्रय देना होगा।
हमको निज चरणोंका निश्चित नित दास बना लेना होगा॥

(८९४) राग आसावरी

बना दो बुद्धिहीन भगवान॥
तर्क-शक्ति सारी ही हर लो, हरो ज्ञान-विज्ञान।
हरो सभ्यता, शिक्षा, संस्कृति, नये जगतकी शान॥
विद्या-धन-मद हरो, हरो हे हरे! सभी अभिमान।
नीति भीतिसे पिंड छुड़ाकर करो सरलता-दान॥

नहीं चाहिये भोग-योग कुछ, नहीं मान-सम्मान।
ग्राम्य, गँवार बना दो, तृणसम दीन, निपट निर्मान॥
भर दो हृदय भक्ति-श्रद्धासे करो प्रेमका दान।
प्रेमसिन्धु! निज मध्य डुबाकर मेटो नामनिशान॥

(८९५) राग विहाग

मोहन, राखु पद-रजतरैं॥
सुर-सुरेन्द्र-विधि-पद नहिं चहिये, डारहु मुकुति परै।
जग-सुखके सब साज सँभारहु, इनतें दुख न टरै॥
सुख-दुख लाभ-हानि जगकी सम, नैको मन न जरै!
बिनु विराम छबि धाम निरखि तन मन नित प्रेम गरै॥

(८९६) राग भैरवी

हे स्वामी! अनन्य अवलम्बन, हे मेरे जीवन-आधार!
तेरी दया अहैतुक पर निर्भर कर आन पड़ा हूँ द्वार॥
जाऊँ कहाँ जगतमें तेरे सिवा न शरणद है कोई।
भटका, परख चुका सबको, कुछ मिला न, अपनी पत खोई॥
रखना दूर, किसीने मुझसे अपनी नजर नहीं जोड़ी।
अति हित किया सत्य समझाया, सब मिथ्या प्रतीति तोड़ी॥
हुआ निराश, उदास गया विश्वास जगतके भोगोंका।
जिनके लिये खो दिया जीवन, पता लगा उन लोगोंका॥
अब तो नहीं दीखता मुझको तेरे सिवा सहारा और।
जल-जहाजका कौआ जैसे पाता नहीं दूसरी ठौर॥
करुणाकर! करुणा कर सत्वर अब तो दे मन्दिर-पट खोल।
बाँकी झाँकी नाथ! दिखाकर तनिक सुना दे मीठे बोल॥
गूँज उठे प्रत्येक रोममें परम मधुर वह दिव्य स्वर।
हृत्-तंत्री बज उठे साथ ही मिला उसीमें अपना सुर॥
तन पुलकित हो, सु-मन जलजकी खिल जायें सारी कलियाँ।
चरण मृदुल बन मधुप उसीमें करते रहे रंगरलियाँ॥

हो जाऊँ उन्मत, भूल जाऊँ तन मनकी सुधि सारी।
देखूँ फिर कण-कणमें तेरी छबि नव नीरद-घन प्यारी॥
हे स्वामिन्! तेरा सेवक बन तेरे बल होऊँ बलवान।
पाप-ताप छिप जायें हो भयभीत मुझे तेरा जन जान॥

(८९७) राग भीमपलासी

पतित नहीं जो होते जगमें, कौन पतितपावन कहता?
अधमोंके अस्तित्व बिना अधमोद्धारण कैसे कहता॥
होते नहीं पातकी, 'पातकि-तारण' तुमको कहता कौन?
दीन हुए बिन, दीनदयालो! दीनबंधु फिर कहता कौन?॥
पतित, अधम, पापी दीनोंको क्योंकर तुम बिसार सकते।
जिनसे नाम कमाया तुमने, क्योंकर उन्हें टाल सकते॥
चारों गुण मुझमें पूरे, मैं तो विशेष अधिकारी हूँ।
नाम बचानेका साधन हूँ, यों भी तो उपकारी हूँ॥
इतनेपर भी नाथ! तुम्हें यदि मेरा स्मरण नहीं होगा।
दोष क्षमा हो, इन नामोंका रक्षण फिर क्योंकर होगा॥
सुन प्रलापयुत पुकार, अब तो करिये नाथ! शीघ्र उद्धार।
नहीं, छोड़िये, नामोंको यों कहनेको होता लाचार॥
जिसके कोई नहीं, तुम्हीं उसके रक्षक कहलाते हो।
मुझे नाथ अपनानेमें फिर क्यों इतना सकुचाते हो?
नाम तुम्हारे चिर सार्थक हैं मेरा दृढ़ विश्वास यही।
इसी हेतु, पावन कीजै प्रभु! मुझे कहींसे आस नहीं॥
चरणोंको दृढ़ पकड़े हूँ, अब नहीं हटूँगा किसी तरह।
भले फेंक दो, नहीं सुहाता अगर पड़ा भी इसी तरह॥
पर यह रखना, स्मरण नाथ! जो यों दुतकारोगे हमको।
अशरणशरण, अनाथनाथ, प्रभु कौन कहेगा फिर तुमको?

(८९८) राग भैरवी

सकुच भरे अधखिले सुमनमें छिपकर रहता प्रेम-पराग।
नव-दर्शनमें मुग्ध प्राणका होगा मूक मधुर अनुराग॥
भय लज्जा, संकोच सहम, सहसा वाणीका निपट निरोध।
वाचारहित, नेत्र-मुख अवनत, हास्यहीन, बालकवत् क्रोध॥
जो उसने था किया, इसी स्वाभाविक रसका ही व्यवहार।
तो देना था तुम्हें चाहिये उसे हर्षसे अपना प्यार॥
हृदयंगम करना आवश्यक था वह सरल प्रणयका भाव।
नहीं तिरस्कृत करना था नवप्रेमिकका वह गूँगा चाव॥
प्रथम मिलनमें ही क्या समुचित है समस्त-संकोच-विनाश।
क्या उससे वस्तुतः नहीं होता नवीन मधु-रसका नाश॥
नव कलिकाके लिये चाहना असमयमें ही पूर्ण विकास।
क्या है नहिं अप्राकृत और असंगत उससे ऐसी आस?॥
क्या नववधू कभी मुखरा बन कर सकती प्रियसे परिहास।
क्या वह मूर्खा या संदिग्धा बन सह सकती मिथ्या त्रास?॥
क्या वह प्रौढ़ा सदृश खोल अवगुंठन कर सकती रस-भंग?।
क्या बहने देती, मर्यादा तजकर, सहसा हास्य-तरंग?॥
क्या 'मूकास्वादनवत्' होता नहीं प्रेमका असली रूप?।
क्या उसमें है नहीं झलकता प्रेम-पयोधि गँभीर अनूप?॥
क्या है नहीं प्रसन्न इष्टको मानस-पूजा ही करती?।
क्या वह नहीं बाह्य पूजासे बढ़कर इष्ट हृदय हरती॥
यदि नव प्रेमिकने तुमको पूजा केवल मनसे ही नाथ?।
स्तंभित, कंपित, मुग्ध हर्षसे कह-सुन कुछ भी सका न साथ॥
क्या इससे हे प्रेमिकवर! प्रभु! हुआ तुम्हारा कुछ अपमान?।
क्या इसमें अपराध मानते सरल भक्तका? हे भगवान!॥
यदि ऐसा है नहीं देव! तो क्यों फिर होते अंतर्द्धान?।
क्यों दर्शनसे वंचित करते, क्यों दिखलाते इतना मान?॥

क्यों आँखोंसे ओझल होते, पता नहीं क्यों बतलाते?।
क्यों भक्तोंको सुख पहुँचाने नहीं शीघ्र सम्मुख आते?॥

❑ ❑

(८९९) आरती

जय जगदीश हरे प्रभु! जय जगदीश हरे!
मायातीत, महेश्वर, मन-बच-बुद्धि परे॥ टेक॥
आदि, अनादि, अगोचर, अविचल, अविनाशी।
अतुल, अनंत, अनामय, अमित शक्ति-राशी॥ १॥ जय०
अमल, अकल, अज, अक्षय, अव्यय, अविकारी।
सत-चित-सुखमय, सुंदर, शिव, सत्ताधारी॥ २॥ जय०
विधि, हरि, शंकर, गणपति, सूर्य, शक्तिरूपा।
विश्व-चराचर तुमहीं, तुमहीं जग भूपा॥ ३॥ जय०
माता-पिता-पितामह-स्वामिसुहृद भर्ता।
विश्वोत्पादक-पालक-रक्षक-संहर्ता ॥ ४॥ जय०
साक्षी, शरण, सखा, प्रिय, प्रियतम, पूर्ण प्रभो।
केवल काल कलानिधि, कालातीत विभो॥ ५॥ जय०
राम कृष्ण, करुणामय, प्रेमामृत-सागर।
मनमोहन, मुरलीधर, नित-नव नटनागर॥ ६॥ जय०
सब विधिहीन, मलिनमति, हम अति पातकि जन।
प्रभु-पद-विमुख अभागी कलि-कलुषित-तन-मन॥ ७॥ जय०
आश्रय-दान दयार्णव! हम सबको दीजे।
पाप-ताप हर हरि! सब , निज-जन कर लीजे॥ ८॥ जय०

(९००)

हर हर हर महादेव! (टेक)
सत्य, सनातन, सुंदर, शिव! सबके स्वामी।
अविकारी, अविनाशी, अज, अंतर्यामी॥ १॥ हर हर०
आदि अनंत, अनामय, अकल, कलाधारी।
अमल, अरूप, अगोचर, अविचल अघहारी॥ २॥ हर हर०

ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, तुम त्रिमूर्तिधारी।
कर्ता, भर्ता, धर्ता तुम ही संहारी॥ ३ ॥ हर हर०
रक्षक, भक्षक, प्रेरक, तुम औढरदानी।
साक्षी, परम अकर्ता कर्ता अभिमानी॥ ४ ॥ हर हर०
मणिमय भवन निवासी, अति भोगी, रागी।
सदा मसानबिहारी, योगी वैरागी॥ ५ ॥ हर हर०
छाल, कपाल, गरल, गल, मुंडमाल व्याली।
चिताभस्म तन, त्रिनयन, अयन महाकाली॥ ६ ॥ हर हर०
प्रेत-पिशाच, सुसेवित पीत जटाधारी।
विवसन, विकट रूपधर, रुद्र प्रलयकारी॥ ७ ॥ हर हर०
शुभ्र, सौम्य, सुरसरिधर, शशिधर, सुखकारी।
अतिकमनीय, शान्तिकर शिव मुनि मन हारी॥ ८ ॥ हर हर०
निर्गुण, सगुण, निरंजन, जगमय नित्य प्रभो।
कालरूप केवल, हर! कालातीत विभो॥ ९ ॥ हर हर०
सत-चित-आनँद, रसमय, करुणामय, धाता।
प्रेम-सुधा-निधि, प्रियतम, अखिल विश्व-त्राता॥ १० ॥ हर हर०
हम अति दीन, दयामय! चरण-शरण दीजै।
सब विधि निर्मल मति कर अपना कर लीजै॥ ११ ॥ हर हर०

❑ ❑

नाम

(९०१) राग पीलू बरवा—ताल धुमाली

बन्धुगणो! मिलि कहो प्रेमसे 'यदुपति ब्रजपति श्यामा-श्याम।'
मुदित चित्तसे घोष करो पुनि—'पतीतपावन राधेश्याम॥'
जिह्वा-जीवन सफल करो कह—'जय यदुनन्दन, जय घनश्याम।'
हृदय खोल बोलो, मत चूको—'रुक्मिणिवल्लभ श्यामा श्याम॥'
नव-नीरद-तनु, गौर मनोहर, 'जय श्रीमाधव जय बलराम।'
उभय सखा मोहनके प्यारे—'जय श्रीदामा, जयति सुदाम॥'

परमभक्त निष्कामशिरोमणि—'उद्धव-अर्जुन शोभाधाम।'
प्रेम-भक्ति-रस-लीन निरन्तर विदुर, 'विदुर-गृहिणी अभिराम॥'
अति उमंगसे बोलो सन्तत—'यदुपति ब्रजपति श्यामा-श्याम।'
मुक्तकंठसे सदा पुकारो—'पतीतपावन राधेश्याम॥'

(९०२) राग आसावरी—ताल रूपक

साधन नाम-सम नहिं आन।
जपत सिव-सनकादि, सारद-नारदादि सुजान॥
नामके बल मिटत भीषन असुभ भाग्य-बिधान।
नाम-बल मानव लहत सुख सहज मन-अनुमान॥
नाम टेरत टरत दारुन बिपति सोक महान।
आर्त करि नर-नारि, ध्रुव सब रहे सुचि सहिदान॥
नामके परताप तें जलपर तरे पाषान।
नाम-बल सागर उलाँघ्यो सहज ही हनुमान॥
नाम-बल संभव सकल जे कछु असंभव जान।
धन्य ते नर! रहत जिनके नाम-रटकी बान॥
पाप-पुंज प्रजारिबे हित प्रबल पावक-खान।
होत छिनमें छार, निकसत नाम जान-अजान॥
नाम-सुरसरिमें निरंतर करत जे जन न्हान।
मिटत तीनों ताप, मुख नहिं होत कबहुँ मलान॥
नाम-आश्रित जननके मन बसत नित भगवान।
जरत खरत कुवासना सब तुरत लज्जा मान॥
नाम जीवन, नाम अमरित, नाम सुखको थान।
नाम-रत जे नाम-पर, ते पुरुष अति मतिमान॥
नाम नित आनंद-निरझर, अति पुनीत पुरान।
मुक्त सत्वर होत जे जन करत सादर पान॥
नाम जपत सुसिद्ध जोगी बनत समरथवान।
नामतें उपजत सुभगति बिराग सुभ बलवान॥

नामके परताप दीखत प्रकृति-दीप बुझान।
नाम बल ऊगत प्रभामय भानु तत्त्वज्ञान॥
नामकी महिमा अमित, को सकै करि गुनगान।
रामतें बड़ नाम, जेहि बल बिकत श्रीभगवान॥

(१०३) राग पीलू बरवा

बन्धुगणो! मिल कहो प्रेमसे,—'रघुपति राघव राजाराम।'
मुदित चित्तसे घोष करो पुनि,—'पतीतपावन सीताराम॥'
जिह्वा-जीवन सफल करो कह—'जय रघुनन्दन, जय सियाराम।'
हृदय खोल बोलो मत चूको—'जानकिवल्लभ सीताराम॥'
गौर रुचिर, नवघनश्याम छबि, 'जय लक्ष्मण, जय जय श्रीराम।'
अनुगत परम अनुज रघुबरके—'भरत-सत्रुहन शोभाधाम॥'
उभय सखा राघवके प्यारे—'कपिपति, लंकापति अभिराम।'
परम भक्त निष्कामशिरोमणि 'जय श्रीमारुति पूरणकाम॥'
अति उमंगसे बोलो संतत —'रघुपति राघव राजाराम।'
मुक्तकंठ हो सदा पुकारो—'पतीतपावन सीताराम॥'

(१०४) होरी काफी—ताल दीपचन्दी

भूल जगके विषयनकों, जप मन हरिको नाम॥
दीनबंधु हरि करुनासागर, पतितनके विश्राम।
आपद-अंधकारमहँ श्रीहरि पूरनचंद ललाम॥
पाप ताप सब मिटै नामतें नास होहिं सब काम।
जमके दूत भयातुर भागैं, सुनत नाम सुखधाम॥
भाग्यवान जे जपत निरंतर नाम, सदा निष्काम।
निरख सुखी सत्वर हों मूरति हरिकी जग अभिराम॥
भाग्यहीन जिन्हके मन-मुखमहँ बसत न हरिको नाम।
नरकरूप जग जीवन तिन्हको भूमिभार अघ-धाम॥

(१०५) राग भैरवी—ताल दादरा

राम राम राम भजो, राम भजो, भाई।
राम-भजन-हीन जनम सदा दुखदाई॥
अति दुरलभ मनुजदेह सहजहीमें पाई।
मूरख रह्यो राम भूल बिषयन मन लाई॥
बालकपन दुख अनेक भोगत ही बिताई।
स्त्री-सुत-धनकी अपार चिंता तरुनाई॥
रात-दिवस पसुकी ज्यों इत-उत रह्यो धाई।
तृसनाकी बेलि बढ़ी पाप-बारि पाई॥
बात-पित्त-कफहु बढ़्यो दुखद जरा आई।
इन्द्रिनकी शक्ति घटी, सिर धुनि पछिताई॥
इतनेहिमें कठिन काल घेरि लियो आई।
मृत्यु निकट देखि-देखि अति ही भय पाई॥
सोच करत मन-ही-मन अतिसै पछिताई।
हाय मैं न भज्यो राम, कहा कर्‌यो माई!॥
मृत्यु प्रान हरन करत कुटुँबतें छुड़ाई।
महादु:ख रह्यो छाय, बिफल सब उपाई॥
पापनके फलस्वरूप बुरी जोनि पाई।
दु:ख-भोग करत पुनि नरकन महँ जाई॥
बार-बार जनम मृत्यु, व्याधि अरु बुढ़ाई।
झेलत अति कठिन कष्ट, शान्ति नाँहि पाई॥
यहि बिधि भवदुख अपार बरने नहिं जाई।
भव-भेषज राम-नाम, श्रुति पुरान गाई॥
राम-नाम जपत त्रिबिध ताप जग नसाई।
राम-नाम मँगलकरन सब बिधि सुखदाई॥
प्रेममगन मनतें, सकल कामना बिहाई।
जोइ जपत राम नाम सोइ मुकति पाई॥

(९०६) राग आसावरी

भली है राम-नामकी ओट।
जिन्ह लीन्हीं तिनके मस्तकतें पड़ी पापकी पोट॥
राम-नाम सुमिरत जिन्ह कीन्हो लगी न जमकी चोट।
अन्तःकरण भयो अति निरमल, रही तनिक नहिं खोट॥
राम-नाम लीन्हें तें जर गइ माया-ममता मोट।
राम-नामतें मिले राम, जग रह गयो फोकट-फोट॥

(९०७) होरी काफी—ताल दीपचन्दी

और सब भूल-भले ही, श्रीहरिनाम न भूल॥
श्रीहरिनाम सुधामय सबके हित, सबके अनुकूल।
श्रीहरिनाम-भजनतें पहुँचत भवसागर पर कूल॥
रोग, सोक, संताप, पाप सब, जैसे सूखी तूल।
भगवन्नाम प्रबल पावकतें जरैं सकल जड़मूल॥
जिन्ह हरिनाम भजन नहिं कीन्हों, जीवन तिनको धूल।
भक्ति-रसाल मिलै नहिं कबहूँ, बोये बिषय-बबूल॥
श्रीहरिनाम भयो जिनके मन जगजीवनको मूल।
तिन्हको धन्य जगतमहँ जीवन पातक-पथ-प्रतिकूल॥

(९०८) राग भैरवी—ताल झपताल

कर मन हरिको ध्यान, राम गुन गाइये।
प्रेम-मगन सब देह सुरति बिसराइये॥
हरि-संकीर्तन करत अश्रुधारा बहै।
गदगद होवे कंठ—परम सुख सो लहै॥
पुलकित तनु हरि-प्रेम हृदय जो नाचहीं।
सुर-मुनि ताकी अनुपम गति नित जाचहीं॥
नाम लेत मुख हँसत, कबहुँ कर रुदनहीं।
ताको हिय नित करहिं दयामय सदनहीं॥

(९०९) राग भैरवी—ताल दादरा

राम राम गाओ संतो, राम राम गाओ।
राम-नाम गाइ-गाइ रामको रिझाओ॥
रामहिको नाम जपो, रामहिको ध्याओ।
राम राम राम कहत प्रमुदित ह्वै जाओ॥
राम राम सुनि सुनाइ हिय अति हुलसाओ।
राम राम राम रटत सब बिधि सुख पाओ॥
राम नाम मद्य पियो, बिषय-मद भुलाओ।
राम सु-रस पीय-पीय तन सुधि बिसराओ॥
राम आदि, मध्य राम, राम अंत पाओ।
राम अखिल जगतरूप राममें समाओ॥

(९१०) राग तिलक कामोद—ताल कहरवा

करतलसों ताली देत, राम मुख बोली।
बस जली तुरंत पातक-पुंजोंकी होली॥

(९११) राग बिहाग—ताल दादरा

प्रेममुदित मनसे कहो राम राम राम।
श्री राम राम राम, श्री राम राम राम॥
पाप कटैं, दुख मिटैं, लेत राम-नाम।
भव-समुद्र सुखद नाव एक राम-नाम॥
परम सांति-सुख-निधान नित्य राम-नाम।
निराधारको अधार एक राम-नाम॥
परम गोप्य, परम इष्ट मंत्र राम-नाम।
संत-हृदय सदा बसत एक राम-नाम॥
महादेव सतत जपत दिव्य राम-नाम।
कासि मरत मुक्त करत कहत राम-नाम॥
माता-पिता, बंधु-सखा, सबहि राम-नाम।
भक्त-जनन-जीवन-धन एक राम-नाम॥

(९१२) राग गारा

मुखसों कहत राम-नाम पंथ चलत जोई।
पग-पगपर पावत नर जग्य फलहिं सोई॥

(९१३) राग श्रीराग विलम्बित
(मारवाड़ी) ताल—तीनताल

बिनती सुण म्हारी, सुमरो सुखकारी हरिके नामनैं॥
भटकत फिर्‌यो जूण चौरासी लाख महा दुखदाई।
बिन कारण कर दया नाथ फिर मिनख देह बकसाई॥
गरभमायँ माताके आकर पाया दुःख अनेक।
अरजी करी प्रभूसे, बाहर काढ़ो, राखो टेक॥
करी प्रतिग्या गरभमायँ मैं सुमरण करस्यूँ थारो।
नहीं लगाऊँ मन विषयाँमैं प्रभुजी मने उबारो॥
जनम लेय जगमायँ चित्तनै विषयाँ मायँ लगायो।
जनम-मरण दुःख-हरण रामको पावन नाम भुलायो॥
खोई उमर ब्रथा भोगाँकै सुख-सुपनेकै माँई।
सुख नहिं मिल्यो, बढ़्यौ दुख दिन-दिन, रह्यो सोग मन छाई॥
मृग-तृस्नाकी धरतीमैं जो समझै भ्रमसैं पाणी।
उसकी प्यास नहीं मिटणैकी, निश्चै लीज्यो जाणी॥
यूँ इण संसारी भोगाँमैं नहीं कदे सुख पायो।
दुःखरूप सुख देवै किस बिध मूरख मन भरमायो॥
कर बिचार, मन हटा बिषयसैं प्रभु चरणाँमैं ल्याओ।
करो कामना त्याग, हरीको नाम प्रेमसैं गाओ॥
सुख-दुखमें संतोष करो अब, सगली इच्छा छोड़ो।
'मैं' और 'मेरो' त्याग हरीके रूप मायँ चित जोड़ो॥
मिलै सांति दुख कदे न व्यापै, आवै आनँद भारी।
प्रेममगन हो नाम हरीको जपो सदा सुखकारी॥

(९१४) राग जंगला

राम राम राम राम राम राम राम।
भज मन प्यारे सीताराम॥
संतोंके जीवन ध्रुव तारे, भक्तोंके प्राणोंसे प्यारे।
विश्वंभर, सब जग-रखवारे, सब बिधि पूरणकाम॥
राम राम० ॥
अजामील-दुख टारनहारे, गज-गनिकाके तारनहारे।
द्रुपदसुता भय वारन हारे, सुखमय मंगलधाम॥
राम राम० ॥
अनिल-अनल-जल रवि-शशि-तारे,
पृथ्वी गगन, गन्ध-रस-सारे।
तुझ सरिताके सब फौवारे, तुम सबके विश्राम॥
राम राम० ॥
तुमपर धन-जन, तन-मन वारे, तुझ प्रेमामृत-मदमतवारे।
धन्य-धन्य ते जग-उजियारे, जिनके मुख यह नाम॥
राम राम० ॥

(९१५) राग बिहाग

राम राम राम राम राम राम राम,
राम राम राम राम राम राम राम।
जगविश्राम! मंगलधाम! पूरणकाम! सुन्दर नाम॥
योग-जप-तप-व्रत नियम-यम, यज्ञदान अपार।
रामसम नहिं एक साधन, राम सब आधार॥
सब मिल कहो जय जय राम॥ राम० ॥
राम गुरु, पितु-मातु रामहिं, राम सुहृद उदार।
राम स्वामी, सखा रामहिं राम प्रिय परिवार॥
सब मिल कहो जय जय राम॥ राम० ॥
राम जीवन, राम तन-मन, राम धन-जन दार।
राम सुत, सुख-साज रामहि, राम प्राणाधार॥
सब मिल कहो जय जय राम॥ राम० ॥

राम राग, विराग रामहिं, राम स्नेहागार।
राम प्रेमद, राम प्रेमिक, प्रेम-पारावार॥
सब मिल कहो जय जय राम॥ राम० ॥
राम बिधि, शिव राम, पालक विष्णु विश्वाधार।
राममय जग, राम जगमय, रामही विस्तार॥
सब मिल कहो जय जय राम॥ राम० ॥

(११६) राग सोहनी

चाहता जो परम सुख तू, जाप कर हरिनामका।
परम पावन, परम सुन्दर, परम मंगलधामका॥
लिया जिसने है कभी हरि-नाम भय भ्रम-भूलसे।
तर गया, वह भी तुरत, बंधन कटे जड़-मूलसे॥
हैं सभी पातक पुराने घास सूखेके समान।
भस्म करनेको उन्हें हरिनाम है पावक महान॥
सूर्य उगते ही अँधेरा नाश होता है यथा।
सभी अघ हैं नष्ट होते नामकी स्मृतिसे तथा॥
जाप करते जो चतुर नर सावधानीसे सदा।
वे न बँधते भूलकर यमपास दारुणमें कदा॥
बात करते, काम करते, बैठते-उठते समय।
राह चलते नाम लेते विचरते हैं वे अभय॥
साथ मिलकर प्रेमसे हरिनाम करते गान जो।
मुक्त होते मोहसे कर प्रेम-अमृत पान सो॥

❑ ❑

भजन-महिमा

(११७) राग खमाच

रे मन हरि सुमिरन करि लीजै॥ टेक॥
हरिको नाम प्रेमसों जपिये, हरिरस रसना पीजै।
हरिगुन गाइय, सुनिय निरंतर, हरि-चरननि चित दीजै॥

हरि-भगतनकी सरन ग्रहन करि, हरिसँग प्रीति करीजै।
हरि-सम हरि जन समुझि मनहिं मन तिनकौ सेवन कीजै॥
हरि केहि बिधिसों हमसों रीझैं, सो ही प्रश्न करीजै।
हरि-जन हरिमारग पहिचानै, अनुमति देहिं सो कीजै॥
हरिहित खाइय, पहिरिय हरिहित, हरिहित करम करीजै।
हरि-हित हरि-सन सब जग सेइय, हरिहित मरिये जीजै॥

(९१८) राग मालगुंजी—ताल एकताल

मन बन मधुप हरिपद-सरोरुह लीन हो।
निश्चिन्त कर रस-पान भय-भ्रम हीन हो॥ टेक॥
तू भूलकर सारे जगतकी भावना,
रह मस्त आठों पहर, मत यों दीन हो॥ मन०॥
तू गुनगुनाहट छोड़ बाहरकी सभी,
बस रामगुन गुंजार कर मधु पीन हो॥ मन०॥
तू छोड़ दे अब जहँ तहाँका भटकना,
हरि-चरण आश्रित तू यथा जल मीन हो॥ मन०॥

(९१९) राग सारंग—ताल तीनताल

हरिको हरि-जन अतिहि पियारे।
हरि हरि-जनतें भेद न राखैं, अपने सम करि डारैं॥
जाति-पाँति, कुल-धाम, धरम, धन, नहिं कछु बात बिचारैं।
जेहि मन हरि-पद-प्रेम अहैतुक, तेहि ढिग नेम बिसारैं॥
ब्याध, निषाध, अजामिल, गनिका, केते अधम उधारे।
करि-खग बानर-भालु-निसाचर, प्रेम-बिबस सब तारे॥
परखि प्रेम हिय हरषि राम भिलनीके भवन पधारे।
बारहिं बार खात जूठे फल, रहे सराहत हारे॥
बिदुर-घरनि सुधि बिसरी तनकी, स्याम जबहिं पगु धारे।
कदली-फलके छिलका खाये, प्रेममगन मन भारे॥
रे मन! ऐसे परम प्रेममय हरिकों मत बिसरा रे।
प्रभुके पद सरोज रस चाखन, तू मधुकर बनि जा रे॥

(९२०) राग पूर्वी—ताल तीनताल

मैं नित भगतन हाथ बिकाऊँ।
आठों जाम हृदयमें राखूँ पलक नहीं बिसराऊँ॥
कल न परत बैकुंठ बसत मोहि, जोगिन मन न समाऊँ।
जहँ मम भगत प्रेमजुत गावहिं तहाँ बसत सुख पाऊँ॥
भगतनकी जैसी रुचि देखूँ तैसो बेष बनाऊँ।
टारूँ अपने बचन भगत लगि, तिनके बचन निभाऊँ॥
ऊँच-नीच सब काज भगतके, निज कर सकल बनाऊँ।
पग धोऊँ, रथ हाँकूँ, माजूँ बासन, छानि छवाऊँ॥
मागूँ नाहिं दाम कछु तिनतें, नहिं कछु तिनहि सताऊँ।
प्रेमसहित जल, पत्र, पुष्प, फल, जो देवै सो खाऊँ॥
निज 'सरबस' भगतनको सौंपूँ, अपनो स्वत्व भुलाऊँ।
भगत कहैं सोइ करूँ निरंतर बेचैं तो बिक जाऊँ॥

(९२१) राग मालकोश—ताल तीनताल

तूँ भाइ म्हारो रे म्हारो।
तू म्हारो, तेरो सब म्हारो, जग सारो ही म्हारो॥
मनमैं सदा दूसरो समझै ऊपरसैं कह थारो।
म्हारो होता साँता भी सो रहे म्हारैसैं न्यारो॥
एक बार जो कपट छोड़कर कहै 'नाथ मैं थारो'।
सो म्हारे सगळाँ पुतराँमें अधिक लाडलो म्हारो॥
सदा पातकी, सदा कुकरमी, विषयाँमैं मतवारो।
'मैं थारो' यूँ साचैं मनसैं कहताँ ही हो म्हारो॥
झटपट पुन्यवान सो होवै, पापाँसैं छुटकारो।
म्हारो म्हारी गोद विराजै, कदे न म्हाँसूँ न्यारो॥
तन-मन-वाणीसैं जो म्हारो सो निस्चै ही म्हारो।
कदे न लाज्यो, कदे न लाजै, नाँव बिडद-जस म्हारो॥

❑ ❑

भगवत्कृपा

(९२२) राग पलास

पुत्र-शोक सन्तप्त कभी कर, दारुण दुख है देती।
कभी अयश अपमान दानकर, मान सभी हर लेती॥
कभी जगतके सुंदर सुख सब छीन, दीन मन करती।
पथभ्रान्त कर कभी कठिन व्यवहार बिषम आचरती॥ १॥
पुत्र-कलत्र, राजबैभव बहु मान कभी है देती।
दारुण दुख-दारिद्र्य-दीनता क्षणभरमें हर लेती॥
पल-पलमें, प्रत्येक दिशामें सतत कार्य है करती।
कड़वी-मीठी औषध देकर व्यथा हृदयकी हरती॥ २॥
पर वह नहीं कदापि सहज ही परिचय अपना देती।
चमक तुरत चंचल चपला-सी दृग अंचल ढक लेती॥
जबतक इस घूँघटवालीका मुख नहिं देखा जाता।
नाना भाँति जीव तबतक अकुलाता, कष्ट उठाता॥ ३॥
जिस दिन यह आवरण दूर कर दिव्य द्युति दिखलाती।
परिचय दे, पहचान बताकर शीतल करती छाती॥
उस दिनसे फिर सभी वस्तु परिपूर्ण दीखती उससे।
संसृतिहारिणि सुधा-वृष्टि हो रही निरन्तर जिससे॥ ४॥
सहज दयाकी मूरति देवीने जबसे अपनाया।
महिमामय मुखमंडल अपनेकी दिखला दी छाया॥
तपसे अभय हुआ, आकुलता मिटी, प्रेम-रस छलका।
मनका उतरा भार सभी, अब हृदय हो गया हलका॥ ५॥
जिन विभीषिकाओंसे डरकर पहले था थर्राता।
उनमें भव्य दिव्य दर्शन कर अब प्रमुदित मुसकाता॥
भगवत्कृपा! 'अकिंचन' तेरे ज्यों-ज्यों दर्शन पाता।
त्यों-ही-त्यों आनंद-सिंधुमें गहरा डूबा जाता॥ ६॥

❑ ❑

इस धन, जोवन, बल, रूप सभीसे टूटेगा नाता तेरा।
प्राणोंके तनसे जाते ही उसको लाकर बाहर गेरा॥ २॥

जिस तनको सुख पहुँचानेको तू ऊँचे महल बनाता है।
जिसके विलासके लिये निरंतर चुन-चुन साज सजाता है॥
जिसको सुंदर दिखलानेको है साबुन तेल लगाता तू।
जिसकी रक्षाके लिये सदा है देवी-देव मनाता तू॥
वह धूलि-धूसरित हो जायेगा सोने-सा शरीर तेरा।
प्राणोंके तनसे जाते ही उसको लाकर बाहर गेरा॥ ३॥

जिस नश्वर तनके लिये किसीसे लड़नेमें नहिं सकुचाता।
जिस तनके लिये हाथ फैलाते जरा नहीं तू शरमाता॥
जो चोर डाकुओंके डरसे नित पहरोंके अंदर सोता।
जो छायाको भी भूत समझकर डरता है व्याकुल होता॥
वह देह खाक हो पड़ा अकेला सूने मरघटमें तेरा।
प्राणोंके तनसे जाते ही उसको लाकर बाहर गेरा॥ ४॥

जिन माता-पिता, पुत्र-स्वामीको अपना मान रहा है तू।
जिन मित्र-बन्धुओंको, वैभवको अपना जान रहा है तू॥
है जिनसे यह सम्बन्ध टूटना कभी नहीं तैंने जाना।
है जिनके कारण अहंकारसे नहीं बड़ा किसको माना॥
यह छूटेगा सम्बन्ध सभीसे, होगा जंगलमें डेरा।
प्राणोंके तनसे जाते ही उसको लाकर बाहर गेरा॥ ५॥

है जिनके लिये भूल बैठा उस जगदीश्वरका पावन-नाम।
तू जिनके लिये छोड़ सब सुकृत पापोंका है बना गुलाम॥
रे भूले हुए जीव! यह सब कुछ पड़े यहीं रह जायेंगे।
जिनको तैंने अपना समझा, वे सभी दूर हट जायेंगे॥
हो जा सचेत! अब व्यर्थ गवाँ मत जीवन यह अमूल्य तेरा।
प्राणोंके तनसे जाते ही उसको लाकर बाहर गेरा॥ ६॥

चेतावनी

(९२३) राग भैरवी—ताल रूपक

चेत कर नर, चेत कर, गफलतमें सोना छोड़ दे।
जाग उठ तत्काल, हरि-चरणोंमें चितको जोड़ दे॥
मनुज-तन संसारमें मिलता नहीं है बार-बार।
हो सजग, ले लाभ इसका, नाम प्रभुका मत बिसार॥
विषय-मदमें चूर होकर क्यों दिवाना हो रहा।
श्वास ये अनमोल तेरे, क्यों वृथा तू खो रहा॥
त्याग दे आशा विषयकी, काट ममता-पासको।
ध्यान कर हरिका सदा, कर सफल हर एक श्वासको॥
विषय-मदको छोड़ हरि-पद प्रेम-मद तू पान कर।
हो दिवाना प्रेममें श्रीरामका गुणगान कर॥
परम प्रियतम हृदय-धनके प्रेम-मदमें चूर हो।
छका रह दिन-रात तू आनंदमें भरपूर हो॥

(९२४) राग धुन लावनी—ताल कहरवा

पलभर पहले जो कहता था, यह धन मेरा यह घर मेरा।
प्राणोंके तनसे जाते ही उसको लाकर बाहर गेरा॥
जिस चटक-मटक औ फैसनपर तू है इतना भूला फिरता।
जिस पद-गौरवके रौरवमें दिन-रात शौकसे है गिरता॥
जिस तड़क-भड़क औ मौज मजोंमें फुरसत नहीं तुझे मिलती।
जिस गान तान औ गप्प-शप्पमें सदा जीभ तेरी हिलती॥
इन सभी साज-सामानोंसे छुट जायेगा रिश्ता तेरा।
प्राणोंके तनसे जाते ही उसको लाकर बाहर गेरा॥ १॥
जिस धन-दौलतके पानेको तू आठों पहर भटकता है।
जिस भोगोंका अभाव तेरे अंतरमें सदा खटकता है॥
जिस सबल देह सुंदर आकृति पर तू इतना अकड़ा जाता।
जिन विषयोंमें सुख देख रहा, पर कभी नहीं पकड़े पाता॥

कल नहिं परत मित्र बिनु छिनभर, संग रहे सँग खाये।
बिनस्यो धन, स्वारथ, जब छूट्यो, मुख बतरात लजाये॥
साँचो सुहृद, अकारन प्रेमी राम एक जग माहीं।
तेहि सँग जोरहु प्रीति निरंतर, जग कोउ अपनो नाहीं॥

(९२८) राग केदार—ताल तीनताल

मन, कछु वा दिनकी सुधि राख।
जा दिन तेरे तनु-दुकानकी उठि जैहैं सब साख॥
इंद्रिय सकल न मानहिं अनुमति छोड़ चलैं सब साथ।
सुत, परिवार, नारि नहिं कोऊ पूछैं दुखकी गाथ॥
वारँट लै जमदूत आइ तोहि पकरि बाँधि लै जाय।
कोउ न बनै सहाय काल तिहि देखत ही रहि जाय॥
जमके कारागार नरक महँ अतिसय संकट पाय।
बार-बार करनी सुमिरन करि सिर धुनि-धुनि पछिताय॥
जो यहि दुखतें उबरो चाहै, तो हरि नाम पुकार।
राम-नाम ते मिटैं सकल दुख, मिलै परम सुख सार॥

(९२९) राग कौसिया—ताल कहरवा

अरे मन, तू कछु सोच-बिचार।
झूठो जग साँचो करि मान्यो, भूल्यो फिरत गँवार॥
मृग जिमि भूल्यो देखि असत जल, मरु धरनी बिस्तार।
सून्याकास तिरवरा दीखत, मिथ्या नेत्र विकार॥
रसरी देखि सरप जिमि मान्यो, भयबस रह्यो पुकार।
सीप माहिं ज्यों भयो रौप्य-भ्रम, तिमि मिथ्या संसार॥
स्वप्न-दृश्य साँचे करि मानत, नहिं कछु तिन महँ सार।
तिमि यह जग मिथ्या ही भासत, प्रकृति-जनित खिलवार॥
जो यातें उद्धार चहै तो, हरिमय जगत निहार।
मायापतिकी सरन गहे तें होवे तव निस्तार॥

(९२५) राग भूपाली—ताल तीनताल

तजो रे मन झूठे सुखकी आसा।
हरि-पद भजो, तजो सब ममता, छोड़ बिषय-अभिलासा।
बिषयनमें सुख सपनेहुँ नाहीं, केवल मात्र दुरासा॥
कामिनि-सुत, पितु-मातु, बंधु, जस, कीरति सकल, सुपासा।
छिनमहँ होत बियोग सबन्हते, कठिन काल जग नासा॥
क्षणभंगुर सब बिषय, निरंतर बनत कालके ग्रासा।
इनमें जो कोउ फिर सुख चाहत सो नित मरत पियासा॥
प्रभु-पद-पदम सदा अबिनासी, सेवत परम हुलासा।
मिलै परम सुख, घटै न कबहूँ, जिनके मन बिस्वासा॥

(९२६) राग कालिंगड़ा—ताल तीनताल

करत नहिं क्यों प्रभुपर बिस्वास।
बिस्वंभर सब जगके पालक पूरैं तेरी आस॥
सुख लगि ठोकर खात इतहिं उत, डोलत सदा उदास।
मिलत न कबहूँ सुख बिषयनमें दुखमय यह अभिलास॥
प्रभु-पद-पदम सदा चिंतन कर छूटै जमकी त्रास।
मन अनंत आनंदमगन नित प्रमुदित परम हुलास॥

(९२७) राग पूर्वी—ताल तीनताल

जगतमें स्वारथके सब मीत।
जब लगि जासौं रहत स्वार्थ कछु, तब लगि तासौं प्रीत॥
मात-पिता जेहि सुतहित निस-दिन सहत कष्ट-समुदाई।
बृद्ध भये स्वारथ जब नास्यो, सोइ सुत मृत्यु मनाई॥
भोग-जोग जबलौं जुवती स्त्री, तबलौं अतिहि पियारी।
बिधिबस सोइ जदि भई ब्याधिबस, तुरत चहत तेहि मारी॥
प्रियतम, प्राननाथ कहि कहि जो अतुलित प्रीति दिखावत।
सोइ नारी रचि आन पुरुष सँग पतिकी मृत्यु मनावत॥

(९३२) राग बहार—ताल तीनताल
(मारवाड़ी बोली)

छोड मन तू मेरा-मेरा, अंतमें कोई नहीं तेरा॥
धन कारण भटक्यो फिर्‌यो, रच्या नित नया ढंग।
ढूँढ-ढूँढकर पाप कमाया, चली न कौड़ी संग।
होय गया मालक बहुतेरा॥ छोड॰॥
टेढी बाँधी पागडी, बण्यो छबीलो छैल।
धरतीपर गिणकर पग मेल्या, मौत निमाणी गैल।
बखेर्‌या हाड-हाड तेरा॥ छोड॰॥
नित साबुनसैं न्हाइयो, अतर-फुलेल लगाय।
सजी-सजाई पूतली तेरी पडी मसाणाँ जाय।
जलाकर करी भसम-ढेरा॥ छोड॰॥
मदमातो, करणो, रह्यो, राख्या राता नैन।
आयानें आदर नहिं दीन्यो, मुख नहिं मीठा बैन।
अंत जमदूत आय घेरा॥ छोड॰॥
पर-धन पर-नारी तकी, परचरचास्यूँ हेत।
पाप-पोट माथेपर मेली, मूरख रह्यो अचेत।
हुआ फिर नरकाँमें डेरा॥ छोड॰॥
राम-नाम लीन्हों नहीं, सतसंगस्यूँ नहिं नेह।
जहर पियो, छोड्यो इमरतनै, अंत पडी मुख खेह।
साँस सब वृथा गया तेरा॥ छोड॰॥
दुरलभ देही खो दई, करम कर्‌या बदकार।
हूँ हूँ करतो ही मर्‌यो तूँ गयो जमारो हार।
पड्यो फिर जनम-मरण फेरा॥ छोड॰॥
काम क्रोध मद-लोभ तज, कर अंतरमें चेत।
'मैं' 'मेरे' ने छोड हदैसें कर श्रीहरिस्यूँ हेत।
जनम यूँ सफल होय तेरा॥ छोड॰॥

(१३०) राग कालिंगड़ा—ताल तीनताल

अरे मन, कर प्रभुपर बिस्वास।
क्यों इत-उत तू भटक्यो डोलै, झूठे सुखकी आस॥
सुंदर देह, सुहावनि नारी सब बिधि भोग-बिलास।
कहा भयो धन-पुत्र भयेतें, मिटी न जमकी त्रास॥
नौकर-चाकर, बंधु घनेरे, ऊँची पदबी खास।
डरत लोग देखत भौं टेढ़ी करत मृत्यु उपहास॥
मिथ्या मद-उन्मत्त गवाँये ब्यर्थ अमोलक स्वास।
पछितायें पुनि कछु न बसाये, बनै कालको ग्रास॥

(१३१) राग जोगिया—ताल दीपचन्दी

मूढ! केहि बलपर तू इतरात॥
करत न सीधी बात काहु सों, सदा रहत अठलात।
जा दिन प्रान देह तजि जैहैं, कोउ न पूछिहैं बात॥
जेहि तनुके सुख-साज सँवारन संतत सबहिं सतात।
सो तनु सहज धूरि मिलि जैहै छार होहिं सब गात॥
जेहि धन संचै हेतु भूलि हरि, डोलत सब दिन-रात।
धरम-करम तजि सदा गीध ज्यों मांस हेतु ललचात॥
सबसों रारि करत, नहिं मानत बंधु पूज्य, पितु-मात।
सो धन-सरबस एहि थल रहिहैं, संग न दमरी जात॥
माल मिलकियत सब रहि जैहैं सबै टूटिहैं नात।
सगे-सहोदर, पुत्र-पाहुने, तजिहैं जननी-तात॥
राम-नामको जाप करत खल, पंचन माहि लजात।
'राम-नाम सत' सबै बोलिहैं तोहि मसानु लै जात॥
रात-दिवस भटकत केहि कारन, नहिं कछु भेद लखात।
भूलि भगतवत्सल भगवानहिं नरतनु वृथा गँवात॥

(१३५) राग बिहाग—ताल तीनताल

दुर्जन संग कबहुँ नहिं कीजै।
दुर्जन-मिलन सदा दुखदाई, तिनसौं पृथक रहीजै॥
दुर्जनकी मीठी बानी सुनि, तनिक प्रतीति न कीजै।
छाड़िय बिष सम ताहि निरंतर, मनहिं थान जनि दीजै॥
दुर्जन संग कुमति अति उपजै, हरि-मारग मति छीजै।
छूटै प्रेम-भजन श्रीहरिको, मन बिषयनमैं भीजै॥
बिनसै सकल सांति सुख मनके, सिर धुनि-धुनि कर मीजैं।
मन अस दुर्जन दुखनिधि परिहरि, सत संगति रति कीजै॥

(१३६) लावनी, धुन लावनी—ताल कहरवा

इधर-उधर क्यों भटक रहा मन-भ्रमर, भ्रान्त उद्देश्य विहीन।
क्यों अमूल्य अवसर जीवनका व्यर्थ खो रहा तू मतिहीन॥
क्यों कुवास-कंटकयुत बिसमय बिषय-बेलिपर ललचाता।
क्यों सहता आघात सतत क्यों दुःख निरंतर है पाता॥
बिश्व-बाटिकाके प्रति-पदपर भटक भले ही, हो अति दीन।
खाकर ठोकर द्वार-द्वारपर हो अपमानित, हीन-मलीन॥
सह ले कुछ संताप और यदि तुझको ध्यान नहीं होता।
हो निराश, निर्लज्ज भ्रमण कर फिर चाहे खाते गोता॥
बिषमय बिषय-बेलिको चाहे कमल समझकर हो रह लीन।
चाहे जहर भरे भोगोंको सलिल समझकर बन जा मीन॥
पर न जहाँतक तुझे मिलेगा पावन प्रभु-पद-पद्म-पराग।
होगा नहीं जहाँतक उसमें अनुपम तव अनन्य अनुराग॥
कर न चुकेगा तू जबतक अपनेको, बस उसके आधीन।
होगा नहीं जहाँतक तू स्वर्गीय सरस सरसिज आसीन॥
नहीं मिटेगा ताप वहाँतक, नहीं दूर होगी यह भ्रांति।
नहीं मिलेगी सांति सुखप्रद नहीं मिटेगी भीषण श्रांति॥

(१३३) राग कान्हरा—ताल तीनताल

जगतमें कोइ नहिं तेरा रे।
छाड बृथा अभिमान त्याग दे मेरा-मेरा रे॥
काल करम बस जग-सराय बिच कीन्हा डेरा रे।
इस सरायमें सभी मुसाफर, रैन-बसेरा रे॥
जिस तनको तू सदा सँवारै साँझ-सबेरा रे।
एक दिन मरघट पड़े भसमका होकर ढेरा रे॥
मात-पिता, भ्राता, सुत-बांधव, नारी चेरा रे।
अंत न होय सहाय, काल जब देवै घेरा रे॥
जगका सारा भोग सदा कारन दुखकेरा रे।
भज मन हरिका नाम, पार हो भव-जल बेरा रे॥
दीनदयालु भक्तवत्सल हरि मालिक तेरा रे।
दीन होय उनके चरनोंमें कर ले डेरा रे॥

❑ ❑

शिक्षा

(१३४) राग केदारा—ताल तीनताल

जगतमें कीजै यौं ब्यवहार।
अखिल जगत हरिमय बिचारि मन, कीजै सबसौं प्यार॥
मात-पिता गुरुजन-पद बंदिय श्रद्धासहित उदार।
फल बिहाय, तिनकी आग्या सौं कीजै सब आचार॥
देस-जाति, कुल, कुटुम्ब नारि-सुत, सुहृद, देह परिवार।
जथाजोग सबकी सेवा नित कीजै स्वार्थ बिसार॥
बरनाश्रम-अनुकूल करम सब कीजै बिधि अनुसार।
फल-कामना-बिहीन, किंतु केवल करतब्य बिचार॥

श्रीहरिके सुखमय मंगलमय प्रण वाक्योंकी स्मृति कर दीन।
चित्त! सभी चंचलता तजकर चारु चरणोंमें हो जा लीन॥
रसिक बिहारी मुरलीधर, गीतागायकके हो आधीन।
त्रिभुवनमोहनके अतुलित सौंदर्याम्बुधिका बन जा मीन॥

(१३८) राग बागेश्री—ताल तीनताल

मन सत-संगति नित कीजै।
संत-मिलन त्रय-ताप नसावन, संतचरण चित दीजै॥
संतन निकट नित्यप्रति जइये, हरिनामामृत पीजै।
संतनि सकल भाँति नित सेइय, सब बिधि मुदित करीजै॥
संतन महँ बिस्वास करिय नित, श्रद्धा अतिसय कीजै।
संतहिं नित हरिरूप निहारिय, संत कहें सोइ कीजै॥
हरिको सकल मरम ते जानहिं, तिनसौं सब सुनि लीजै।
सुनि-सुनि मनमँह धारन कीजै, मन तासों रँगि लीजै॥
संत सुहृद जे पंथ बतावैं, तेहि पथ गमन करीजै।
झटपट हरिके धाम पहुँचिये, प्रमुदित दरसन कीजै॥

❑ ❑

लीला

(१३९) राग कामोद—ताल तीनताल

स्याम मोहि तुम बिन कछु न सुहावै।
जब तें तुम तजि ब्रज गये, मथुरा हिय उथल्योई आवै॥
बिरह बिथा सगरे तनु ब्यापी, तनिक न चैन लखावै।
कल नहिं परत निमेष एक मोहिं, मन-समुद्र लहरावै॥
नँद-घर सूनो, मधुबन सूनो, सूनी कुंज जनावै।
गोठ, बिपिन, जमुना-तट सूनो, हिय सूनो बिलखावै॥
अति बिह्वल बृषभानुनंदिनी, नैननि नीर बहावै।
सकुच बिहाइ पुकारि कहति सो, स्याम मिलैं सुख पावै॥

इससे हो सत्वर, सुन्दर हरि-चरण-सरोरुहमें तल्लीन।
कर मकरंद मधुर आस्वादन पापरहित हो पावन पीन॥
भय-भ्रम-भेद त्यागकर, सुखमय सतत सुधारस कर तू पान।
शांत-अमर हो, शरणद चरण-युगलका कर नित गुण-गण-गान॥

(१३७)

शुद्ध, सच्चिदानंद, सनातन, अज अक्षर, आनँद-सागर।
अखिल चराचरमें नित व्यापक, अखिल जगतके उजियागर॥
बिश्व-मोहिनी मायाके मोहन मनमोहन! नटनागर!।
रसिक स्याम! मानव-बपु-धारी! दिब्य, भरे गागर सागर॥
भक्त-भीति-भंजन, जन-रंजन नाथ निरंजन एक अपार।
नव-नीरद-श्यामल सुन्दर शुचि, सर्वगुणाकर, सुषमा-सार॥
भक्तराज वसुदेव-देवकीके सुख-साधन, प्राणाधार।
निज लीलासे प्रकट हुए अत्याचारीके कारागार॥
पावन दिव्य प्रेम-पूरित ब्रजलीला प्रेमीजन-सुखमूल।
तन-मन-हारिणि बजी बंसरी रसमयकी कालिंदी-कूल॥
गिरिधर, विविध रूप धर हरिने हर ली बिधि-सुरेंद्रकी भूल।
कंस-केसि बध, साधु-त्राण कर यादव-कुलके हर हृच्छूल॥
समरांगणमें सखा भक्तके अश्वोंकी कर पकड़ लगाम।
बने मार्गदर्शक लीलामय प्रेम-सुधोदधि, जन-सुखधाम॥
प्रेमी पार्थब्याजसे सबको करुणाकर लोचन अभिराम।
शरणागतिका मधुर मनोहर तत्त्व सुनाया सार्थ ललाम॥
'मन्मना भव, भव मद्भक्तः, मद्याजी कर मुझे प्रणाम।
सत्य शपथयुत कहता हूँ प्रिय सखे! मुझीमें ले विश्राम॥
छोड़ सभी धर्मोंको मेरी एक शरण हो जा निष्काम।
चिंता मत कर, सभी पापसे तुझे छुड़ा दूँगा प्रिय काम॥

(१४३) राग सारंग—ताल तीनताल
(मारवाड़ी बोली)

ऊधो मधुपुरका बासी।
म्हारो बिछड़्यौ स्याम मिलाय, बिरहकी काट कठण फाँसी॥
स्याम बिनु चैन नहीं आवे।
म्हारो जबसे बिछड्यो स्याम, हीवड़ो उझल्यो ही आवे॥
छाय रही ब्याकुलता भारी।
म्हारे स्याम बिरहमैं आज, नैनसैं रह्यौ नीर जारी॥
स्याम बिनु ब्रज सूनो लागै।
सूनी कुंज, तीर जमुनाको, सब सूनो लागै॥
गोठ-बन स्याम बिना सूनो।
म्हारे एक-एक पुळ जुग सम बीतै, बिरह बढ़ै दूनो॥
ऊधो! अरज सुणो म्हारी।
थारो गुण नहिं भुलाँ कदे, मिलाद्यौ मोहन बनवारी॥

(१४४) राग हमीर—ताल तीनताल

बिदुर-घर स्याम पाहुने आये।
नख-सिख रुचिररूप मनमोहन, कोटिमदन छबि छाये॥
बिदुर न हुते घरहिमें तेहि छिन, स्याम पुकारन लागे।
बिदुर घरनि नहाति उठि धाई नैन प्रेमरस पागे॥
भूली बसन न्हात रहि जेहि थल, तनु सुधि सकल भुलाई।
बोलति अटपट बचन प्रेमबस, कदरी-फल ले आई॥
छीलत डारत गूदो इत-उत छिलका स्याम खवावै।
बारहिं-बार स्वाद कहि-कहि हरि, प्रमुदित भोग लगावै॥
तनिक बेर महँ हरि गुन गावत, बिदुर घरहिं जब आये।
देखि दरस सो कहत, 'अहह! तैं छिलका स्याम खवाये'॥
करतें केरा झटकि बिदुर घरनी घरमाहिं पठाई।
तनु सुधि पाइ सलाज ससंकित, बसन पहिरि चलि आई॥

(९४०) राग देशी—ताल तीनताल

स्याम! अब मत तरसाओजी।
मनमोहन नँदलाल, दयाकर दरस दिखाओजी॥
ब्याकुल आज आपकी राधा, माधव आओजी।
तव दरसन लगि तृषित दृगनको सुधा पियाओजी॥
तुम बिन प्रान रहैं अब नाहीं धाय बचाओजी।
प्राणाधार! प्रान चह निकसन, बेगि सिधाओजी॥
राधा कहत, गये राधाके पुनि पछिताओजी।
राधा बिना स्याम नहिं 'राधा-कृष्ण' कुहाओजी॥

(९४१) राग भैरवी—ताल तीनताल

ऊधो! तुम तो बड़े बिरागी।
हम तो निपट गँवारि ग्वालिनीं, स्याम-रूप अनुरागी॥
जेहि छिन प्रथम स्याम छबि देखी, तेहि छिन हृदय समानी।
निकसत नहिं अब कौनेहू बिधि रोम-रोम उरझानी॥
आठों जाम मगन मन निरखत स्याम मुरति निज माहीं।
दृग नहिं पेखत अन्य बस्तु जग, बुद्धि बिचारत नाहीं॥
ऊधौ! तुम्हरो ग्यान निरंतर होउ तुमहिं सुखकारी।
हम तौ सदा स्याम-रँग राचीं ताहि न सकहिं उतारी॥

(९४२) राग भैरवी—ताल दीपचन्दी

बनहिं बन स्याम चरावत गैया॥
सुभग अंग सुखमाको सागर कर बिच लकुट धरैया।
पीत बसन दमकत दामिनि सम, मुरली अधर बजैया॥
धावत इत उत दाऊके सँग, खेल करत लरिकैयाँ।
गैयनके पाछे नित भाजत, नंदरायको छैया॥
धन्य-धन्य वे ब्रजकी धूमरि धौरी कारी गैया।
जिनहिं पियावत जल जमुना-तट ठाढ़ो आपु कन्हैया॥

(१४७) राग देश—ताल तीनताल

स्यामने मुरली मधुर बजाई।
सुनत टेरि, तनु सुधि बिसारि सब गोपबालिका धाई॥
लहँगा ओढ़ि ओढ़ना पहिरे, कंचुकि भूलि पराई।
नकबेसर डारे स्रवननमहँ अदभुत साज सजाई॥
धेनु सकल तृन चरन बिसार्‌यो ठाढ़ी स्रवन लगाई।
बछुरनके थन रहे मुखनमहँ सो पय-पान भुलाई॥
पसु-पंछी जहँ-तहँ रहे ठाढ़े मानो चित्र लिखाई।
पेड़ पहाड़ प्रेमबस डोले, जड़ चेतनता आई॥
कालिंदी-प्रबाह नहिं चाल्यो, जलचर सुधि बिसराई।
ससिकी गति अवरुद्ध, रहे नभ देव बिमानन छाई॥
धन्य बाँसकी बनी मुरलिया बड़ो पुन्य करि आई।
सुर-मुनि दुरलभ रुचिर बदन नित राखत स्याम लगाई॥

(१४८) राग काफी—ताल दीपचंदी

माधव! हौं तुम्हरे संग जैहौं।
तुम्हरे बिना न एक पल रहिहौं, लोक-लाज कुलकानि नसैहौं॥
बरजी नहिं रहिहौं काहू की जो बाँधहि तो बंधन खैहौं।
जड़ तनु तजिहौं, यह मन, प्रिय सँग प्रानहिं अवसि पठैहौं॥
मिलिहौं जाइ तहाँ प्रियतममें जिमि सागर बिच लहर समैहौं।
स्याम बदन महँ स्याम रंग रचि, स्यामरूप लहि अति सुख पैहौं॥

(१४९) राग आसावरी—ताल धुमाली

नाचत गौर प्रेम अधीर।
भूलि सुधि हरि-नाम टेरत, बहत नैननि नीर॥
पान करि सुचि प्रेम-अमृत, मत्त पुलकित अंग।
भगत गन नाचत सकल मिलि बजत ताल मृदंग॥
परम पावन नामकी धुनि, गूँजती आकास।
बिपुल अघ संसारके पल माहिं होत बिनास॥

बिदुर प्रेमजुत छीलि छीलिकै केरा हरिहिं खवावै।
कहत स्याम वह सरस मनोहर स्वाद न इनमहँ आवै॥
भूखो सदा प्रेमको डोलूँ भगत-जनन गृह जाऊँ।
पाइ प्रेमजुत अमिय पदारथ, खात न कबहुँ अघाऊँ॥

(१४५)

हरि अवतरे कारागार॥
दिसि सकल भईं परम निरमल अभ्र सुखमा-सार।
लता-बिटप सुपल्लवित पुष्पित नमत फल-भार॥
सुखद मंद सुगंध सीतल बहत मलय-बयार।
देवगन हरखत सुमन बरखत करत जयकार॥
बिनय करत बिरंचि नारद सिद्ध बिबिध प्रकार।
करत किन्नर गान बहु गंधरब हरख अपार॥
संख चक्र गदा नवांबुज लसत हैं भुज चार।
भृगु-लता कौस्तुभ सुसोभित, कांतिके आगार॥
नौमि नीरद नील नव तनु गले मुकताहार।
पीत पट राजत, अलक लखि अलिहु करत पुकार॥
परम बिस्मित देखि दंपति छबिहिं अमित उदार।
निरखि सुंदरता अपरिमित लाजत कोटिन मार॥

(१४६) राग आसावरी—ताल तीनताल

नंदसुत चुपकै माखन खात।
ठाढ़ो चकित चहूँ दिसि चितवत, मंद मंद मुसुकात॥
मथनीमहँ कोमल कर डारे, भाजनकी ठहरात।
जो पावत सो लेत ढीठ हठि, नैकहु नाहिं डेरात॥
देखति दूरि ग्वालिनी ठाढ़ीं, मन धरिबेकी घात।
स्याम-ब्रह्मकी माधुरि लीला निरखि-निरखि हरखात॥

(१५२)

धन्य-धन्य ब्रजकी नर-नारी।
जिन्हके आँगन नाचत नित-प्रति मोहन करतल दै दै तारी॥
परम प्रिया मनमोहनजूकी प्रेमपगी रस-बिषय गँवारी।
जिन्हके हाथ खात माखन-दधि, लाड़ लड़ावत दै दै गारी॥
मुरली धुनि सुनि भागति सगरी लोक लाज गृह-काज बिसारी।
चाहत-चरन-धूलि नित तिन्हकी दीन अकिंचन प्रेम भिखारी॥

(१५३) राग पूरिया—ताल तीनताल

प्रभु! मैं नहिं नाव चलावौं।
तव पद-रज नर करनि मूरि प्रभु! महिमा अमित कहाँ लगि गावौं॥
पाहन छुवत नारि भइ पावनि, काट पुरातनकी यह नावौं।
परसत रज मुनि-नारि बनै यह, मैं पुनि असि नौका कहँ पावौं॥
मैं अति दीन दरिद्र, कुटुँब बहु, यहि नौकातें सबहि निभावौं।
जो यह उड़ै, जीविका बिनसै, केहि बिधि पुनि परिवार चलावौं॥
अनुमति होइ तो लेइ कठौता, सुरसरि-जल भरि प्रभुपहँ लावौं।
पद पखारि, रज धोइ भलीबिधि, करि चरनामृत पाप नसावौं॥
प्रभु-चरननकी सपथ नाथ! मैं अन्य भाँति नहिं नाव चढ़ावौं।
लखन रिसाइ तीर जो मारैं, निबल, पकरि पद प्रान गवावौं॥
प्रेम भरे, अति सरल सुहावन अटपट बचन सुने रघुरावौं।
करुनानिधि हँसि अनुमति दीन्हीं, केवट कह्यो पार लै जावौं॥

(१५४) राग हमीर—ताल तीनताल

प्रभु बोले मुसुकाई।
जातें तोरि नाव रहि जावे, सोइ जतन करु भाई॥
पाँव पखारु, लाइ गंगाजल, अब मत बिलँब लगाई।
सुनत बचन तेहि छिन सो दौर्‍यौ, मनमहँ अति हरखाई॥
भर्‍यौ कठौता गंगाजलसों सब परिवार बुलाई।
प्रभु-पद आइ पखारन लाग्यो, उर आनँद न समाई॥

(९५०) राग कामोद—ताल तीनताल

स्याम मोरे ढिगतें कबहुँ न जावै।
कहा कहूँ सखि! गैल न छाड़ै, जित जाऊँ तित धावै॥
गैया दुहत गोद आ बैठे, दूध धार पी जावै।
दही मथत नवनी लेबेकौं, मटकी माहिं समावै॥
रोटी करत आइ चौकामें, ऊधम अमित मचावै।
जेंवत बेर संग आ बैठे, माल-माल गटकावै॥
सखियन सँग बतरात आइ सो पंचराज बनि जावै।
मुरली मधुर बजाय देखु सखि, मोहन हमहिं रिझावै॥
सोवत समै सेज आ पौढ़ै, गृह स्वामी बनि जावै।
स्वलप निंदरिया बीच सपनमहँ माधुरि-रूप दिखावै॥
तदपि न बरजत बनै ताहि सखि, चित अति ही सुख पावै।
बारहिं बार निहारि चंद्रमुख, अंदर अति हुलसावै॥

(९५१) राग जैमिनी कल्याण—ताल धुमाली

स्याम तव मूरति हृदय समानी।
अँग-अँग ब्यापी रग-रग राँची, रोम-रोम उरझानी॥
जित देखौं तित तू ही दीखत, दृष्टि कहा बौरानी।
स्त्रवन सुनत नित ही बंसीधुनि, देह रही लपटानी॥
स्याम-अंग सुचि सौरभ, मीठी, नासा तेहि रति मानी।
जिभ्या सरस मनोहर मधुमय, हरि जूठन रस खानी॥
ऊधौ कहत सँदेस तिहारो, हमहिं बनावत ग्यानी।
कहु थल जहाँ ग्यानकों राखें, कहा मसखरीं ठानी॥
निकसत नाहिं हृदयतें हमरे बैठ्यो रहत लुकानी।
ऊधौ! स्याम न छाड़त हमकों, करत सदा मनमानी॥

पण या निश्चै समझ, तनें मिलणैकी खातर मेरा प्राण।
छिन-छिन मैं ब्याकुल होवै है, दरसणकी है, भारी टाण॥
बाँध तुड़ाकर भाग्या चावै, मानै नहीं किसीकी काण।
आठों पहर उड्या-सा डोलै, पलक-पलककी समझै हाण॥
पण प्यारा! तेरी राजी मैं है नित राजी मेरो मन।
प्राणाधिक, दोनूँ लोकाँको तू ही मेरो जीवन-धन॥
नहीं मिलै तो तेरी मरजी, पण तन-मन तेरै अरपन।
लोक-बेद है तू ही मेरो, तू ही मेरो परम रतन॥
चातककी ज्यूँ सदा उडीकूँ कदे नहीं मुहनैं मोड़ूँ।
दुख देवै, मारैं तड़पावै, तो भी नेह नहीं तोड़ूँ॥
तरसा-तरसाकर जी लेवै तो भी तनै नहीं छोड़ूँ।
झाँकूँ नहीं दूसरी कानी तेरैमैं ही जी जोड़ूँ॥

(१५७) राग लावनी

मिलनेको प्रियतमसे जिसके प्राण कर रहे हाहाकार।
गिनता नहीं मार्गकी कुछ भी दूरीको वह किसी प्रकार॥
नहीं ताकता किंचित भी शत-शत बाधा-विघ्नोंकी ओर।
दौड़ छूटता जहाँ बजाते मधुर बंशरी नंदकिशोर॥
मिली हुई जो कभी भाग्यवश उसको हैं आँखें होती।
वही जानता कीमत, जो उस रूप-माधुरीकी होती॥
कुछ भी कीमत हो, परन्तु है रूपरसिक जन जो होता।
दौड़ पहुँचता लेनेको तत्काल, नहीं पलभर खोता॥

❑ ❑

अद्वैत

(१५८) राग भैरवी—ताल धुमाली

देख दुःखका बेष धरे मैं नहीं डरूँगा तुमसे, नाथ।
जहाँ दुःख वहाँ देख तुम्हें मैं पकड़ूँगा जोरोंके साथ॥
नाथ! छिपा लो तुम मुँह अपना, चाहे अति अँधियारेमें।
मैं लूँगा पहचान तुम्हें इक कोनेमें, जग सारेमें॥

सुरन बिलोकि प्रेम-करुना अति, नभ दुंदुभी बजाई।
केवट भाग्य सराहिं अमित बिधि, सुमन बृष्टि झरि लाई॥
पद पखारि, सब लै चरनामृत, पुरुखन पार लँघाई।
सीता लखन सहित रघुनंदन, हरषित नाव चलाई॥

(९५५) राग तिलंग

ऊधौ! सो मनमोहन रूप।
जो हम निरख्यो सदा नैन भरि, सुंदर अतुल, अनूप॥
सिव, बिरंचि, सनकादिक, नारद, ब्रह्म, बिदित जग जाने।
सुरगुरु सुरपति जेहि देखन हित रहत सदा ललचाने॥
बेद-बुद्धि कुंठित भइ बरनत, 'नेति नेति' कहि गायो।
सारद सेस सहसमुख निसिदिन गावत, पार न पायो॥
जेहि लगि ध्यान-निरत जोगी, मुनि, नित जप-तप-ब्रत-धारी।
तदपि सो स्याम त्रिभंग मुरलिधर सकत न नैन निहारी॥
सोइ प्रभु दधि-माखन हित नित प्रति आँगन हमरे आये।
तनिक-तनिक दधि-नवनी दै दै हम बहु नाच नचाये॥
ऊधौ! सोइ माधुरी मूरति अन्तर दृगन समाई।
ग्यान-बिराग तिहारो बोरौ कालिंदी महँ धाई॥

❑ ❑

प्रेम

(९५६) लावनी (मारवाड़ी बोली)

अब तो कुछ भी नहीं सुहावै, एक तूँ ही मन भावै है।
तनै मिलणनै आज मेरो हिबड़ो उझल्यौ आवै है॥
तड़फ रह्यौ ज्यूँ मछली जळ बिनु, अब तूँ क्यूँ तरसावै है।
दरस दिखाणैमें देरी कर क्यूँ अब और सतावै है?॥
पण, जो इसी बातमें तेरो चित राजी हो तो होवै।
तौ कोई भी आँट नहीं, मनै चाहै जितणो दुख होवै॥
तेरै सुखसें सुखिया हूँ मैं तेरे लिये प्राण रोवै।
मेरी खातर प्रियतम! अपणै सुखमें मत काँटा बोवै॥

घन अँधकार, उज्ज्वल प्रकाशमें भी तू।
जड़-मूढ़ प्रकृति, अतिमति-विकासमें भी तू॥
है साध्वी घरनी कुलटा-गणिकामें भी तू।
है गुँथा सूत, माला, मणिकामें भी तू॥
तू पाप-पुण्यमें नरक-स्वर्गमें भी तू।
पशु-पक्षि, सुरासुर, मनुजवर्गमें भी तू॥
है मिट्टी-लोह, पषाण-स्वर्णमें भी तू।
चतुराश्रममें तू, चतुवर्णमें भी तू॥
है धनी-रंक, ज्ञानी-अज्ञानीमें तू।
है निरभिमानमें अति अभिमानीमें तू॥
है बाल-वृद्ध नर-नारी, नपुंसकमें तू।
अति करुणहृदयमें, निर्दय हिंसकमें तू॥
है शत्रु-मित्रमें, बाहरमें, घरमें तू।
है ऊपर, नीचे, मध्य, चराचरमें तू॥
'हाँ' में, 'ना' में तू, 'तू' में, 'मैं' में 'तू' तू।
हूँ तू, तू तू, तू तू तू, बस तू ही तू॥

(९६१) राग बहार—ताल तीनताल

देख एक तू ही तू ही तू। सर्वव्यापक जग तू ही तू॥
सत, चित, घन, आनंद नित, अज, अव्यक्त अपार।
अलख, अनादि, अनंत अगोचर पूर्ण विश्व-आधार।
एकरस अव्यय तू ही तू॥ सर्वव्यापक० ॥
सत्यरूपसे जगत् सब, तेरा ही विस्तार।
जग माया-कल्पित है सारा तव संकल्पाधार॥
रचयिता-रचना तू ही तू॥ सर्वव्यापक० ॥
तुझ बिन दूजी वस्तु नहिं, किंचित भी संसार।
सूत सूत-मणियोंमें गूँथा, जल-तरंगवत सार।
भरा एक तू ही तू ही तू॥ सर्वव्यापक० ॥

रोग-शोक, धनहानि, दुःख, अपमान घोर, अति दारुण क्लेश।
सबमें तुम सब ही है तुममें, अथवा सब तुम्हारे ही वेश॥
तुम्हारे बिना नहीं कुछ भी जब, तब फिर मैं किस लिये डरूँ।
मृत्यु-साज सज यदि आओ तो चरण पकड़ सानंद मरूँ॥
दो दर्शन चाहे जैसा भी दुःखवेष धारणकर नाथ।
जहाँ दुःख वहाँ देख तुम्हें, मैं पकड़ूँगा जोरोंके साथ॥

(९५९) राग भैरवी

सूर्य-सोममें, वायु-व्योममें, सलिल-धार, धरनीमें तुम।
सुत-कलत्रमें, पुष्प-पत्रमें, स्वर्ण अश्म-अरणीमें तुम॥
शत्रु-मित्रमें, सुख-अमर्षमें, अनल अतल सागरमें तुम।
सबमें, सभी दिशामें छाये केवल हे नटनागर! तुम॥

(९६०) राग पहाड़ी—ताल कहरवा

इस अखिल विश्वमें भरा एक तू ही तू।
तुझमें मुझमें 'तू' मैं 'तू' तू 'तू' ही तू॥
नभमें तू, जल थल वायु अनलमें भी तू।
मेघध्वनि, दामिनि, वृष्टि प्रबलमें भी तू॥
सागर अथाह सरिता प्रवाहमें भी तू।
शशि-शीतलता, दिनकर-प्रदाहमें भी तू॥
बन सघन पुष्प उद्यान मनोहरमें भी तू।
प्रस्फुटित कुसुम-रस-लीन भ्रमरमें भी तू॥
है सत्य-असत्, विष-अमृत विनय-मदमें तू।
शुभ क्षमा-तेज, अति विपद-सुसंपदमें तू॥
मृदु हास्य सरल, अति तीव्र रुदन-रवमें तू।
चिरशांति, क्रांति अति भीषण विप्लवमें तू॥
है प्रकृति-पुरुष, पुरुषोत्तम, मायामें तू।
अति असह धूप, सुखदायक छायामें तू॥
नारी-अँतर, शिशु सुखद बदनमें भी तू।
कामारि, कुसुमसरपाणि मदनमें भी तू॥

हुआ परवश अधीर बेहाल।
चल सकी एक न मेरी चाल॥
भटकते बीता अगणित काल।
बिबिध देहोंमें क्षुद्र-विशाल॥

अनोखा यह कैसा व्यवहार। परम प्रिय मेरे प्राणाधार!

(३)

बाल, युवा, वृद्धावस्था हैं तीनों पूरी हो जाती।
मरण अनंतर पूर्वजन्मकी संतत है बारी आती॥
घूम रही मायाचक्री यह कभी नहीं रुकने पाती।
पर 'मैं-मैं' की एक भावना कभी नहीं मेरी जाती॥

भले हो कोई कैसा स्वाँग।
पड़ गयी सब कुओंमें भाँग॥
इसीसे यह 'मैं' 'मैं' की राग।
गा रहा, कभी न सकता त्याग॥

कौन यह 'मैं', कैसा आकार? परम प्रिय मेरे प्राणाधार!

(४)

'मैं-मैं' कहता भटक रहा, भवसागरकी चोटें सहता।
नहीं परंतु जानता 'मैं' है कौन तथा कैसे कहता?
यदि शरीर ही 'मैं' होता, तो सबमें 'मैं' कैसे रहता॥
होता 'मैं' मन-इन्द्रिय तो, इनको मेरे कैसे कहता?

सुन रहा छिपकर सारी बात।
देखता सभी घात-प्रतिघात॥
हो गयी उससे अब पहचान।
वही मैं, भेद गया हूँ जान॥

उसीमें समा रहा तू यार! परम प्रिय मेरे प्राणाधार!

माता-पिता-धाता तू ही, वेदवेद्य ओंकार।
पावन परम पितामह तू ही, सुहृद शरणदातार।
सृजत, पालत, संहारत तू॥ सर्वव्यापक०॥
क्षर अक्षर, कूटस्थ तू, प्रकृति-पुरुष तव रूप।
मायातीत, वेदवर्णित पुरुषोत्तम अतुल, अरूप।
रूपमय सकल रूप ही तू॥ सर्वव्यापक०॥
मोह स्वप्नको भंग कर, निज रूपहि पहिचान।
नित्य सत्य आनंद बोध घन निजमें निजको जान।
सदा आनंदरूप एक तू॥ सर्वव्यापक०॥

(९६२) राग बागेश्री—ताल तीनताल

(१)

परम प्रिय मेरे प्राणाधार!
स्वजनोंसे सम्बन्ध छूटते मैं निराश हो घबराया।
पर निरुपाय, विवश हो तत्क्षण गृह नवीनमें मैं आया॥
लगा पुरातन चिर नूतन सब 'मेरापन' सबमें पाया।
विस्मृत हुआ पुरातन, नूतनको ही मैंने अपनाया॥
सबल, सुन्दर सुसंगठित देह।
जनक-जननीका अविरल स्नेह॥
प्रियाका मधुर वचन मृदुहास।
सरल संततिका रम्य विकास॥
कर रहा नित सुखका संचार। परम प्रिय मेरे प्राणाधार।

(२)

पिता चले, जननी भी बिछुड़ी, शक्ति और सौन्दर्य गया।
पत्नी भी चल बसी, शेष वयमें उसने भी न की दया॥
धीरे-धीरे पुत्रोंसे भी सारा नाता टूट गया।
पूर्वजन्मकी भाँति पुनः यमदूतोंके आधीन भया॥

आँधी-सी एक आती, धन कीर्ति-कामिनीकी।
सारा प्रकाश ढकता, उस तमसे अंधकारी॥
आ-आके इस तरह तुम, यों बार-बार जाते।
मुझको न थी तुम्हारी पहचान पुण्यकारी॥
आँखोंमें बैठ करके तुम देखते हो सबको।
कानोंमें बैठ सुनते तुम शब्द सौख्यकारी॥
नाकोंसे गंध लेते रसनासे चाखते तुम।
हो स्पर्श तुम ही करते, लीला विचित्रकारी॥
प्राणोंमें, चित्त-मनमें मतिमें, अहंमें, तूमें।
सबमें पसार करके तुम खेलते खिलारी॥
बेढब नकाबपोशी रक्खी है सीख तुमने।
अंदर समाके सबके छिपते, अजीब यारी॥
जिसको दिखाया तुमने परदा हटाके अपना।
वह रूप-रंग अनोखा, प्रेमोन्मत्तकारी॥
फिर भूलता नहीं वह, औ भूल भी न सकता।
पहचान नित्य होती पारस्परिक तुम्हारी॥
आँधी कभी न आती, आँखें न चौंधियातीं।
वह दिव्य दृष्टि पाकर होता सदा सुखारी॥
सुख-दुःख जय-पराजय, तम-तेज, यश-अयशमें।
दिखतीं उसे सभीमें छबि मोहिनी तुम्हारी॥
फिर देखता वह तुमसे सारा जगत् भरा है।
अपनी जरा-सी सत्ता वह देखता न न्यारी॥
तुम हो समाये सबमें, वह है समाया तुममें।
भय-भेद-भ्रांति मिटती उस एक छनमें सारी॥

(५)

समझा, इस 'मैं' में औ तुझमें किसी तरहका भेद नहीं।
इस विशाल 'मैं' की व्यापकतामें कोई बिच्छेद नहीं॥
तुझसे भरे हुए इस 'मैं' में हुआ कभी भी खेद नहीं।
सदानंद-परिपूर्ण एकरस, कोई भेदाभेद नहीं॥
बिगड़ता बनता यह संसार।
किंतु 'तू' चिर-नूतन, सुकुमार॥
'मैं' तथा 'तू' का यह उपचार।
सभी कुछ है तेरा विस्तार॥
धन्य तू औ तेरा व्यापार! परम प्रिय मेरे प्राणाधार!

(९६३) राग भैरवी—गजल-ताल कव्वाली

प्रियतम! न छिप सकोगे, चाहे जो वेष धर लो।
अब हो चुकी है, मुझको, पहचान वह तुम्हारी॥
ढूँढ़ा तुम्हें अभीतक, मंदिर जा मस्जिदोंमें।
पर देख तौ न पाया वह माधुरी पियारी॥
जिसने बताया जैसे, वैसे ही ढूँढ़ा मैंने।
भटका, कहीं न दीखे, चैतन्य! चित्तहारी॥
बस, बेतरह हराया, आया जो पास मेरे।
तुमको, बता-बताकर, शब्दोंकी मार मारी॥
पर देखकर न तुमको, था सोचता यों मनमें।
है वा नहीं है जगमें सत्ता कहीं तुम्हारी॥
संदेह जब यों होता, झाँकी-सी मार जाते।
तिरछी नजरसे हँसकर, छिपते तुरत बिहारी॥
बिजली-सी दौड़ जाती, सन्-सन् शरीर करता।
होती थीं इन्द्रियाँ सब प्रखर प्रकाशकारी॥
तब दीखता था मुझको, फैला प्रकाश सबमें।
प्राणेश! बस, तुम्हारा, वह दिव्य मोदकारी॥

उसके ही रससे रसिका बन रसना हो गइ दीवानी।
विषयोंके रस विरस हुए सब, नहीं, कर सकें मनमानी॥
आँख उसीकी देख रहीं नित उसका रूप परम सुन्दर।
कान उसीके सुनते उसका सदा सुरीला कंठस्वर॥
देह उसीकी करती नित आवेग-भरा परसन उससे।
मन-प्राण भर उठे, दीखता सारा जगत् भरा उससे॥
सभी भुलाकर सोच रहा वह कहाँ? कौन मेरा मनचोर।
हृदय-सलिलके अगाध तलमें खोजूँगा, यदि पाऊँ छोर॥
जब वह अपने प्राणोंको मेरे प्राणोंमें दिखलाता।
दोनों कूल डूब जाते हैं, कुछ भी नजर नहीं आता॥
माता-पिता वही हम सबका, भाई-बन्धु-पुत्र-दारा।
है सर्वस्व वही सबका बस, उससे भरा विश्व सारा॥
है वह जीवनसखा हमारा, है वह परम हमारा धन।
अन्तस्तलमें बैठे हैं टुक करनेको उसके दर्शन॥
जब वह दोनों भुजा उठाकर, अपनी ओर बुलाता है।
सब सुख तजकर मन उसके ही पीछे दौड़ा जाता है॥
सब कुछ भूल नाच उठते हैं हँसना औ रोना तजकर।
चरण-कूलकी तरफ दौड़ते, भग्न जीर्ण नौका लेकर॥
आशा सकल बहाकर उस प्यारेके अरुण चरण-तलमें।
कूद पड़ेंगे डूबें चाहे तर निकलें कूलस्थलमें॥
इस जगके जो कुछ भी सुख हैं, सो सब रहें उसीके पास।
अरुण-चरणके स्पर्शमात्रसे, मिटी हमारी सारी आस॥
किसी वस्तुकी चाह नहीं है, मिटा चाहना, पाना सब।
बैठे हैं भव तीर भरोसा किये युगल चरणोंका अब॥
अब तो बंध-मोक्षकी इच्छा व्याकुल कभी न करती है।
मुखड़ा ही नित नव बंधन है मुक्ति चरणसे झरती है॥
चाहे अपने पास बिठा ले, चाहे दूर फेंक देवें।
दूर रहें या पास रहें हम संतत चरणमूल सेवें॥

(९६४) राग देशी खमाच—ताल कहरवा

स्वागत! स्वागत! आओ प्यारे!
दर्शन दो नयनोंके तारे॥

बालकको मधुरी हँसीमें। मोहनकी मीठी बाँसीमें॥
मित्रोंकी निःस्वार्थ प्रीतिमें। प्रेमीगणकी मिलन-रीतिमें॥
नारीके कोमल अंतरमें। योगीके हृदयाभ्यन्तरमें॥
वीरोंके रणभूमि-मरणमें। दीनोंके संताप-हरणमें॥
कर्मठके कर्म-प्रवाहमें। साधकके सात्त्विक उछाहमें॥
भक्तोंके भगवान्-शरणमें। ज्ञानवान्के आत्मरमणमें॥
संतोंकी शुचि सरल भक्तिमें। अग्निदेवकी दाह-शक्तिमें॥
गंगाकी पुनीत धारामें। पृथ्वी-पवन, व्योम-तारामें॥
भास्करके प्रखर प्रकाशमें। शशधरके शीतल विकासमें॥
कोकिलके कोमल सुस्वरमें। मत्त मयूरी केका-रवमें॥
विकसित पुष्पोंकी कलियोंमें। काले नखराले अलियोंमें॥
सबमें तुम्हें देखते सारे। पर न पकड़ पाते मतवारे॥
निज पहचान बता दो प्यारे। छिपना छोड़ो, जग उजियारे॥

स्वागत! स्वागत आओ प्यारे!
मेरे जीवनके 'ध्रुवतारे'॥

(९६५) धुन लावनी—ताल कहरवा

सौंप दिये मन-प्राण उसीको, मुखसे गाते उसका नाम।
कर्माकर्म चुकाकर सारे चलते हैं अब उसके धाम॥
इन्द्रियगण लेकर विषयोंको मरा करें इच्छा-अनुसार।
हम तो हैं अनुगत उसके ही, वही हमारा प्राणाधार॥
प्रेम उसीके-से प्रेमिक बन, गाते सब उसका गुणगान।
उसकी नासा पुष्प उसीके-से लेती नित उसकी घ्राण॥
उसके प्राणोंकी व्याकुलता सब प्राणोंमें जाग रही।
इसी हेतु बैठे योगासन वृत्ति उसीमें लाग रही॥

कैसा यह भीषण वेश! काँपता जगत, न कोई शेष।
बचा हुआ निर्भय, जिसने 'उस प्रियतमको पहचान लिया'॥
धन्य वेशधारिन्! बस, मैंने 'छिपे हुएको जान लिया'।
विस्तृत अति दारिद्र्य, रोगपीड़ित अपमानित दुःसहनीय॥
त्यक्त-बंधु, जग-हसित, श्रमिततनु, भ्रमित वेदना दुर्दमनीय।
एकमात्र सुत-शव निपतित संमुख प्राणोपम अति कमनीय॥
हा! हा! रवरत-विगत शान्ति-सुख, शोक सरितगत, नहिं कथनीय।
नहिं सुख-स्वप्नका लेश! निदारुण महाभयानक क्लेश!
आवृत बदन निरखकर जिसने 'प्रियतमको पहचान लिया'।
धन्य वेशधारिन्! बस, मैंने 'छिपे हुएको जान लिया'॥
अन्नहीन तन, मृतप्राय मन, वस्त्राभाव अनावृत देह।
अबला अवलंबनविहीन, नित घृणा, दोषदर्शन, संदेह॥
स्वजन हीन अति दीन-छीन जग वैरभावयुत विगतस्नेह।
दलित, स्खलित, पतित, निष्कासित, देश-जाति-धन-जन सुत-गेह॥
रह गया निपट अकेला शेष! दिगम्बर शुष्क अस्थि अवशेष।
रुद्ररूप दर्शनकर जिसने 'प्रियतमको पहचान लिया'।
धन्य वेशधारिन्! बस, मैंने 'छिपे हुएको जान लिया'॥

(९६९) धुन लावनी—ताल कहरवा

ज्यों-ज्यों मैं पीछे हटता हूँ त्यों-त्यों तुम आगे आते।
छिपे हुए परदोंमें अपना मोहन मुखड़ा दिखलाते॥
पर मैं अन्धा नहीं देखता परदोंके अंदरकी चीज।
मोह-मुग्ध मैं देखा करता परदे बहुरंगे नाचीज॥
परदोंके अंदरसे तुम हँसते प्यारी मधुरी हाँसी।
चित्त खींचनेको तुम तुरत बजा देते मीठी बाँसी॥
सुनता हूँ, मोहित होता, दर्शनकी भी इच्छा करता।
पाता नहीं देख, पर, जडमति इधर-उधर मारा फिरता॥
तरह-तरहसे ध्यान खींचते करते विविध भाँति संकेत।
चौकन्ना-सा रह जाता हूँ, नहीं समझता मूर्ख अचेत॥

(९६६) राग गोड—मल्हार—ताल तीनताल

सकल जग हरिको रूप निहार।
हरि बिनु विश्व कतहुँ कोउ नाहीं, मिथ्या भ्रम संसार॥
अलख-निरंजन, सब जग व्यापक, सब जग को आधार।
नहिं आधार नाहिं कोउ हरिमहुँ, केवल हरि-विस्तार॥
अति समीप, अति दूर, अनोखे जगमहँ जगतें पार।
पय-घृत पावक काष्ठ, बीजमहँ तरु फल पल्लव-डार॥
तिमि हरि व्यापक अखिल विश्वमहँ आनँद पूर्ण अपार।
एहि बिधि एक बार निरखत ही भवबारिधि हो पार॥

(९६७) राग केदारा—ताल तीनताल

देख निज नित्य निकेतन द्वार॥
भूला निज निर्मल स्वरूपको, भूला कुल-व्यवहार।
फूला, फँसा फिर रहा संतत, सहता जग फटकार॥
पर-पुर पर-घरमें प्रवेशकर पाला पर-परिवार।
पड़ा पाँच चोरोंके पल्ले लुटा, हुआ लाचार॥
अब भी चेत, ग्रहण कर सत्पथ, तज माया आगार।
उज्ज्वल प्रेम-प्रकाश साथ ले चल निज गृह सुखसार॥
शम-दमादिसे तुरत निधनकर काम-क्रोध बटमार।
सेवन कर पुनीत सत-संगति पथशाला श्रमहार॥
श्रीहरिनाम शमन भय नाशक निर्भय नित्य पुकार।
पातकपुंज नाश हों सुनकर 'हरि-हरि-हरि' हुंकार॥
आश्रयकर, शरणागतवत्सल प्रभु पद कमल उदार।
निज घर पहुँच, नित्य चिन्मय बन, भूमानंद अपार॥

(९६८) धुन लावनी—ताल कहरवा

भीषण तमपरिपूर्ण निशीथिनि, निविड़ निरर्गल झंझावात।
नभ घनघोर महारवपूरित, विकट, त्रिघाती विद्युत्पात॥
सागर-वक्ष-क्षुब्ध उल्लोलित, क्षित क्षितिधर क्षत, कंपितगात।
प्रलय-शिखा-पावक अप्रतिहत त्रिभुवन त्रस्त, सहत अभिघात॥

कोई सज पत्नी, पति कोई करैं प्रेमकी बात।
कोई सुहृद बना, बैरी बन कोई करता घात॥ ३ ॥
कोई राजा-रंक बना, कोई कायर अति शूर।
कोई अति दयालु बनता, कोई हिंसक अतिक्रूर॥ ४ ॥
कोई ब्राह्मण, शूद्र, श्वपच है, कोई बनता मूढ़।
पंडित परम स्वाँग धर कोई करता बातें गूढ़॥ ५ ॥
कोई रोता, हँसता कोई कोई है गंभीर।
कोई कातर बन कराहता, कोई धरता धीर॥ ६ ॥
रहते सभी स्वाँग अपनेके सभी भाँति अनुकूल।
होती नाश पात्रता जो किंचित करता प्रतिकूल॥ ७ ॥
मनमें सभी समझते हैं अपना सच्चा संबंध।
इसीलिये आसक्त नहीं कर सकती उनको अंध॥ ८ ॥
किसी वस्तुमें नहीं मानते कुछ भी अपना भाव।
रंगमंच पर किंतु दिखाते तत्परतासे दाव॥ ९ ॥
इसी तरह जगमें सब खेलें खेल सभी अविकार।
मायापति नटवर नायकके शुभ इंगित अनुसार॥ १० ॥

❑ ❑

संत-महिमा

(१७२) राग बसन्त—ताल तीनताल

संत महा गुनखानी।
परिहरि सकल कामना जगकी, राम-चरन रति मानी॥
परदुख दुखी, सुखी परसुखतें, दीन-बिपति निज जानी।
हरिमय जानि सकल जग सेवक उर अभिमान न आनी॥
मधुर सदा हितकर, प्रिय, साँचे बचन उचारत बानी।
बिगतकाम, मद-मोह-लोभ नहिं सुख-दुख सम कर जानी॥
राम-नाम पियूष पान रत, मानद, परम अमानी।
पतितनको हरिलोक पठावन जग आवत अस ज्ञानी॥

❑ ❑

तो भी नहीं ऊबते हो तुम, परदा जरा उठाते हो।
धीरेसे संबोधन करके अपने निकट बुलाते हो॥
इतनेपर भी नहीं देखता, सिंह-गर्जना तब करते।
तन-मन-प्राण काँप उठते हैं, नहीं धीर कोई धरते॥
डरता, भाग छूटता, तब आश्वासन देकर समझाते।
ज्यों-ज्यों मैं पीछे हटता हूँ त्यों-त्यों तुम आगे आते॥

(१७०)

विश्व-वाटिकाकी प्रति क्यारीमें क्यों नित फिरता माली।
किसके लिये सुमन चुन-चुनकर सजा रहा सुन्दर डाली॥
क्या तू नहीं देखता इन सुमनोंमें उसका प्यारा रूप।
जिसके लिये विविध विधिसे, है हार गूँथता तू अपरूप॥
बीजांकुर शाखा-उपशाखा, क्यारी-कुंज, लता-पत्ता।
कण-कणमें है भरी हुई उस मोहनकी मधुरी सत्ता॥
कमलोंका कोमल पराग विकसित गुलाबकी यह लाली।
सनी हुई है उससे सारे विश्व-बागकी हरियाली॥
मधुर हास्य उसका ही पाकर खिलतीं नित नव-नव कलियाँ।
उसकी मंजु मत्तता पाकर भ्रमर कर रहे रँगरँलियाँ॥
पाकर सुस्वर कंठ उसीका विहग कूँजते चारों ओर।
देख उसीको मेघरूपमें हर्षित होते चातक मोर॥
हार गूँथकर कहाँ जायेगा उसे ढूँढ़ने तू माली?।
देख, इन्हीं सुमनोंके अंदर उसकी मूरति मतवाली॥
रूप रंग सौरभ-परागमें भरा उसीका प्यारा रूप।
जिसके लिये इन्हें चुन-चुनकर हार गूँथता तू अपरूप॥

(१७१) **संसार—नाटक**

अनोखा अभिनय यह संसार!
रंगमंचपर होता नित नटवर-इच्छित व्यापार॥ १॥
कोई है सुत सजा, किसीने धरा पिताका साज।
कोई स्नेहमयी जननी बन करता नटका काज॥ २॥

कभी न डूबा क्षमा-धर्मसे, भारतका वह सच्चा धर्म।
डूबा, जब भ्रमसे था इसने पहना कायरताका वर्म॥
भक्तराज प्रह्लाद क्षमाके परम मनोहर थे आदर्श।
जिनसे धर्म बचा था, जो खुद जीत चुके थे हर्षामर्ष॥
बोले जब हँसकर यों ब्राह्मण, कहने लगे दूसरे लोग—
'आप जानते हैं तो करिये, हमें बुरा लगता यह योग'॥
कहा संतने, 'भाई! मैंने नहीं बड़ा कुछ काम किया।
निज स्वभाव ही बरता मैंने, इसने भी तो वही किया॥
मेरी प्रकृति बचानेकी है, इसकी डंक मारनेकी।
मेरी इसे हरानेकी है, इसकी सदा हारनेकी॥
क्या इस हिंसकके बदलेमें मैं भी हिंसक बन जाऊँ।
क्या अपना कर्तव्य भूलकर प्रतिहिंसामें सन जाऊँ॥
जितनी बार डंक मारेगा, उतनी बार बचाऊँगा।
आखिर अपने क्षमा-धर्मसे निश्चय इसे हराऊँगा'॥
संतोंके दर्शन-स्पर्शन-भाषण दुर्लभ जगतीतलमें।
वृश्चिक छूट गया पापोंसे संत मिलनसे उस पलमें॥
खुले ज्ञानके नेत्र, जन्म-जन्मान्तरकी स्मृति हो आई।
छूटा दुष्ट स्वभाव, सरलता सुचिता सब ही तो आई॥
संत-चरणमें लिपट गया वह, करनेको निज पावन-तन।
छूट गया भवव्याधि विषमसे, हुआ रुचिर वह भी हरि-जन॥
जब हिंसक जड़-जंतु क्षमासे हो सकते हैं साधु-सुजान।
हो सकते क्यों नहीं मनुज तब, माने जाते जो सज्ञान॥
पढ़कर वृश्चिक और संतका यह नितांत सुखकर संवाद।
अच्छा लगे मानिये, तज प्रतिहिंसा-वैर-विवाद-विषाद॥

❑ ❑

ब्राह्मण और बिच्छूकी कथा

(१७३) लावनी

विश्वपावनी बाराणसिमें संत एक थे करते वास।
राम-चरण-तल्लीन चित्त थे, नाम निरत, नय-निपुण निरास॥
नित सुरसरिमें अवगाहन कर, विश्वेश्वर अर्चन करते।
क्षमाशील, पर-दुख-कातर थे, नहीं किसीसे थे डरते॥
एक दिवस श्रीभागीरथिमें ब्राह्मण विदथ नहाते थे।
दयासिंधु देवकिनंदनके गोप्य गुणोंको गाते थे॥
देखा, एक बहा जाता है वृश्चिक जल-धाराके साथ।
दीन समझकर उसे उठाया संत विप्रने हाथों-हाथ॥
रखकर उसे हथेलीपर फिर संत पोंछने लगे निशंक।
खल, कृतघ्न, पापी वृश्चिकने मारा उनके भीषण डंक॥
काँप उठा तत्काल हाथ, गिर पड़ा अधम वह जलके बीच।
लगा डूबने अथाह जलमें निज करनीवश निष्ठुर नीच॥
देखा मरणासन्न, संतका चित करुणासे भर आया।
प्रबल वेदना भूल उसे फिर उठा हाथपर, अपनाया॥
ज्यों ही सम्हला, चेत हुआ फिर उसने वही डंक मारा।
हिला हाथ, गिर पड़ा बहाने लगी उसे जलकी धारा॥
देखा पुनः संतने उसको जलमें बहते दीन-मलीन।
लगे उठाने फिर भी ब्राह्मण क्षमामूर्ति प्रतिहिंसाहीन॥
नहा रहे थे लोग निकट सब, बोले, 'क्या करते हैं आप?
हिंसक जीव बचाना कोई धर्म नहीं है पूरा पाप'॥
चक्खा हाथों-हाथ बिषम फल तब भी करते हैं फिर भूल।
धर्म-कर्मको डुबा चुका भारत इस कायरताके कूल॥
'भाई! क्षमा नहीं कायरता यह तो वीरोंका बाना।
स्वल्प महापुरुषोंने है इसका सच्चा स्वरूप जाना॥

॥ श्रीहरि: ॥

नित्यपाठ साधन-भजन एवं कर्मकाण्ड-हेतु

कोड	पुस्तक	कोड	पुस्तक
592	नित्यकर्म-पूजाप्रकाश	1416	गरुडपुराण-सारोद्धार (सानुवाद)
1627	रुद्राष्टाध्यायी-सानुवाद	819	श्रीविष्णुसहस्रनाम-शांकरभाष्य
1417	शिवस्तोत्ररत्नाकर	206	श्रीविष्णुसहस्रनाम-सटीक
1623	ललितासहस्रनामस्तोत्रम्	509	सूक्ति-सुधाकर
610	व्रतपरिचय	226	श्रीविष्णुसहस्रनाम-मूल
1162	एकादशी-व्रतका माहात्म्य—मोटा टाइप	207	रामस्तवराज—(सटीक)
1136	वैशाख-कार्तिक-माघमास-माहात्म्य	211	आदित्यहृदयस्तोत्रम्
1588	माघमासका माहात्म्य	224	श्रीगोविन्ददामोदरस्तोत्र
1367	श्रीसत्यनारायण-व्रतकथा	231	रामरक्षास्तोत्रम्—
052	स्तोत्ररत्नावली—सानुवाद	1594	सहस्रनामस्तोत्रसंग्रह
1629	,, ,, सजिल्द	715	महामन्त्रराजस्तोत्रम् नामावलिसहितम्
1567	दुर्गासप्तशती— मूल मोटा (बेड़िया)	1599	श्रीशिवसहस्रनामस्तोत्रम्
117	,, मूल, मोटा टाइप	1600	श्रीगणेशसहस्रनामस्तोत्रम्
876	,, मूल गुटका	1601	श्रीहनुमतसहस्रनामस्तोत्रम्
1727	,, मूल, लघु आकार	1663	श्रीगायत्रीसहस्रनामस्तोत्रम्
1346	,, सानुवाद मोटा टाइप	1664	श्रीगोपालसहस्रनामस्तोत्रम्
118	,, सानुवाद	1665	श्रीसूर्यसहस्रनामस्तोत्रम्
489	,, सानुवाद, सजिल्द	1706	श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम्
1281	,, (विशिष्ट सं०)	1704	श्रीसीतासहस्रनामस्तोत्रम्
866	,, केवल हिन्दी	1705	श्रीरामसहस्रनामस्तोत्रम्
1161	,, केवल हिन्दी मोटा टाइप, सजिल्द	1708	श्रीराधिकासहस्रनामस्तोत्रम्
		1709	श्रीगंगासहस्रनामस्तोत्रम्
1593	अन्त्यकर्म-श्राद्धप्रकाश	1707	श्रीलक्ष्मीसहस्रनामस्तोत्रम्

महापुरुष-चरण-वन्दन

(१७४) लावनी

सर्व-शिरोमणि विश्व-सभाके, आत्मोपम विश्वंभरके।
विजयी नायक जगनायकके सच्चे सुहृद चराचरके॥
सुखद सुधानिधि साधु कुमुदके भास्कर भक्त-कमल-वनके।
आश्रय दीनोंके प्रकाश पथिकोंके, अवलम्बन जनके॥
लोभी जग-हितके, त्यागी सब जगके, भोगी भूमाके।
मोही निर्मोहीके, प्यारे जीवन बोधमयी माके॥
तत्पर परम हरण पर-दुःखके, तत्परता-विहीन तनके।
चतुर खिलाड़ी जग-नाटकके, चिन्तामणि साधक-जनके॥
सफल मार्ग-दर्शक पथ-भ्रष्टोंके आधार अभागोंके।
विमल विधायक प्रेम-भक्तिके उच्च भावके, त्यागोंके॥
परम प्रचारक प्रभुवाणीके, ज्ञाता गहरे भावोंके।
वक्ता, व्याख्याता, विशुद्ध, उच्छेदक सर्व कुभावोंके॥
पथदर्शक निष्कामकर्मके चालक अचल सांख्यपथके।
पालक सत्य अहिंसा व्रतके घालक नित अपूत पथके॥
नासक त्रिविध तापके, पोषक तपके तारक भक्तोंके।
हारक पापोंके, संजीवनभेषज विषयासक्तोंके॥
पावनकर्ता पतितोंके पृथ्वीके, प्रेत, पितृ-गणके।
भूषण भूमण्डलके, दूषण राग-द्वेष रणांगणके॥
रक्षक अतिदृढ़ सत्य-धर्मके भक्षक भव-जंजालोंके।
तक्षक भोग-रोग, धन-मदके ब्यापारी सत-लालोंके॥
दक्ष दुभाषी 'जन, जन-धन' के मुखिया राम-दलालोंके।
छिपे हुए अज्ञात लोक निधि मालिक असली मालोंके॥
चूड़ामणि दैवीगुण-गणके परमादर्श महानोंके।
महिमा-वर्णनमें असक्त तव विद्या-बल विद्वानोंके॥

❑ ❑